जन्मशती-हीरक-स्वर्ण जयन्ति महोत्सव के उपलक्ष में:—

# गुरु-कृपा




वल्लभ मुनि 'प्राज्ञकिंकर'

○ पुस्तक – गुरु कृपा

○ रचनाकार – वल्लभ मुनि 'प्राज्ञांकिकर'

○ प्रकाशक – श्री जैन स्वाध्यायी संघ गुलाबपुरा (राज०)

○ प्रकाशन समय – बसन्त पंचमी वि. सं. २०४३, ३ फरवरी ८७

○ प्राप्ति स्थान – श्री. श्वे. स्था. जैन स्वाध्यायी संघ गुलाबपुरा (राज०)

○ लागत मूल्य – 15 रुपये मात्र

○ मुद्रक – मनोहर प्रिन्टिग प्रेस ब्यावर (राज०)



# प्रकाशकीय

प्राचीन आचार्यों ने 'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्' कहकर प्रत्येक रस-पूर्ण वाक्य को काव्य की सीमा के अन्तर्गत ले लिया है क्योकि यह रसपूर्ण वाक्य रमणीय अर्थ का प्रतिपादन करने वाला होता है, जिसकी अनुभूति होने पर मानव-मन रस के सागर में निमज्जित होकर डुबकियां लगाने लगता है।

ऐसे रससिद्ध कवियों की वाणी देश एवं काल की सीमाओं में आबद्ध नही होती। उनकी कविता चिरन्तन सत्य को प्रस्तुत करती हुई शाश्वत मूल्यवाली होती है। यही कारण है कि कवि के क्षणभगुर शरीर को भले ही विनाश का भय हो किन्तु उनके काव्य-शरीर को कोई भय नही। महाराज भर्तहरि इसी को लक्ष्य कर कहते है—

जयन्ति ते सुकृतिनो रससिद्धाः कवीश्वराः।
नास्ति येषां यश.काये जरामरणजं भयम् ॥

ऐसी उत्कृष्ट काव्य-शक्ति से संपन्न कवियों का होना अति दुर्लभ है- 'कवित्व दुर्लभ लोके शक्ति स्तत्र सुदुर्लभा.।' यदि ऐसे श्रेष्ट कवि है तो उनके होने से समाज धन्य है, यह राष्ट्र भी धन्य है- 'सुकविता यद्यस्ति राज्येन किम्' उनकी कविता के सामने राज्य के सारे वैभव फीके है।

ऐसे कवियो की वाणी स्वान्त.सुखाय होते हुए भी सर्वजन हिताय, सर्वजन सुखाय होती है, क्योंकि वे आत्मा के चित्रकार होते है।'व्यवहार विदे, शिवेतरक्षतये'—उत्तम व्यवहार की शिक्षा एव अमंगल का नाश तथा चिर नूतन का विधान ही उनके काव्य का प्रयोजन होता है, यश.प्राप्ति या धन-प्राप्ति उनका लक्ष्य नही होता।

ऐसे, मानव-प्रकृति के चतुर चित्रकार, ओजस्वी वक्ता, श्री वल्लभ मुनिजी म. सा 'प्राज्ञकिकर" अपनी साधना के उषाकाल से ही अपनी मोहक व आनन्दमय वाणी के द्वारा सभी भक्तजनो को समाह्लादित करते रहे हैं। कभी सस्कृत के श्लोको से तो कभी हिन्दी की कविता से उन्होने सरस्वती का शृ गार किया है, जिनेश्वर देवो की पूजा-अर्चना की है, गुरु-भगवन्तो के चरणो मे श्रद्धा सुमन अर्पित किए है तो सरस-हृदय, भावुक-भक्तों

को भाव-विभोर भी किया है। ये रंगमचीय कवि नहीं है जो पावस-ऋतु के पश्चात् दुर्लभ-दर्शन हो जायँ, उनकी काव्य धारा सदैव प्रवहमान रही है।

उनके कवि-कंठ से निकली शत-धारा रूप प्रवाह को, सभी भक्त-जन, एक सरित्-प्रवाह के रुप में देखना चाहते थे। इसीलिए समय समय पर उनकी प्रमुख भक्तिपूर्ण कविताओं का एक सकलन तैयार कर प्रकाशित करवाने का आग्रह निरन्तर करते रहे। 'श्रेयासि बहुविघ्नानि' श्रेयस्कर कार्य के मार्ग में यदा-कदा अनेक विघ्न उपस्थित होते रहते है जिन्हें पारकर, पूज्य गुरुदेव श्री की सेवा में निवेदन की आशा लेकर उपस्थित हुए। 'इस तुकबंदी में ऐसा महत्वपूर्ण क्या है !' के विनम्र व समत स्वरो में प्रथमत: किंचित् ऊहापोह होने लगा किन्तु भक्तजनो के पुरजोर आग्रह को जब वे नहीं टाल सके तो 'ये हैं कुछ पन्ने, इनमें से चयन कर लो' का आदेश मिला। उस आदेश की पालना के फल स्वरूप ही यह 'गुरुकृपा' प्रस्तुत हो सकी है। साथ ही 'रत्नत्रयी के गीत' नामक सातवे खण्ड में 'साध्वी रत्नत्रयी' की कृतियों का संकलन है। तीनों साध्वी श्री ज्ञानलताजी, श्री दर्शनलताजी एव श्री चारित्रलता जी एम. ए. (संस्कृत) समुत्तीर्ण कर इस समय जैन संस्कृत साहित्य के शोध कार्य मे सलग्न होकर P.H.D. की तैयारी कर रही है। 'महाप्राज्ञ की जीवन यात्रा' व 'बोध-सम्बोध' के बाद इनकी यह तीसरी अभिनव कृति है।

इसके प्रकाशन में पूज्य गुरुदेव की कृपा जहाँ मुख्याधार रही है वही अपने द्रव्य का सदुपयोग करने वाले महानुभावों का सहयोग भी प्रेरक रहा है। इन सभी सहयोगकर्त्ता महानुभावों के प्रति हार्दिक आभार प्रकट करता हूं जिनकी महत्ती कृपा से यह कृति प्रकाशन में आ सकी है।

श्री मनोहर प्रिन्टिग प्रेस ब्यावर के प्रबन्धक महोदय का विशेषकर श्री मंगलचन्दजी हीगड़ सा. का भी आभार व्यक्त करता हूं जिनके कुशल-निर्देशन व परिश्रम से यह कार्य सम्पन्न हो सका है।

सभी स्वाध्यायी बन्धु, समाज के प्रबुद्ध नागरिक गण एव भावना प्रवण हृदय वाले भक्तगण इस रचना से लाभान्वित हो, इसी मे हमारे प्रयत्नो की सार्थकता होगी। सुज्ञेषु किं बहुना।

गुलाबपुरा
दि ३-२-८७
बसन्त पचमी



मंत्री
**श्री श्वे. स्था. जैन स्वाध्यायी संघ**
**गुलाबपुरा**

# आत्म निवेदनम्

जिनका वचन-पीयूष प्राणियो के संसार-विष को नष्ट कर उन्हे अमृतत्व का दान करता है, उन इष्ट देवता स्वरुप सद्‌गुरु को नमस्कार हो।[1]

अज्ञानमय अंधकार में अन्धे बने प्राणियों के नेत्रो को जिन्होंने ज्ञानांजन शलाका से आँजकर खोल दिया, उन सद्‌गुरु को मेरा प्रणाम हो।[2]

जिनकी कृपा से अन्धों को आँखें ही नही मिलती, अपितु गूगों को वाणी एवं पगुओं को चलने की शक्ति प्राप्त होती है. उन परम आनन्दमय लक्ष्मी के स्वामी भगवान को ...... ? नही नही, ( बलिहारी गुरुदेव की ) अत: सद्‌गुरु को मेरा अनत-अनत प्रणाम है-नमस्कार है।[3]

यह है सद्‌गुरु की महनीय महिमा, अकथनीय कृपा, जो असीम है, अनन्त है, अपार है। गुरु-कृपा को पाना ही साधक का प्रथम लक्ष्य है-ध्येय है।

जिस शिष्य ने सद्‌गुरु के चरणो में बैठकर धर्म की शिक्षाएँ ग्रहण की है, उस गुरु के प्रति विनय का, नम्रता का व्यवहार करना, सिर

---

१. नमोऽस्तु गुरवे तस्मै, इष्ट-देव-स्वरुपिणे।
यस्य वाक्यामृत हन्ति, विषं ससार-सज्ञितम्॥

२. अज्ञानतिमिरान्धस्य, ज्ञानाञ्जनशलाकया।
चक्षुरुन्मीलित येन, तस्मै सद्‌गुरवे नमः॥

३. मूक करोति वाचालं, पंगु लंघयते गिरिम्।
यत्कृपा तमहं वन्दे, परमानन्द - माधवम्॥

पर अंजलि बाँधकर मनसा, वाचा, कर्मणा प्रतिक्षण उनका सम्मान करना, उसका परम कर्तव्य है।[४]

ऐसा विनीत शिष्य ही गुरु-कृपा का श्रेष्ठतम पात्र होता है। जो शिष्य अपने अनुशास्ता आचार्य और ज्ञानदाता उपाध्याय की आज्ञा का पालन करता है, उनकी सेवा-भक्ति करके उन्हें प्रसन्न करता है,उसका धार्मिक-शिक्षण सम्यग्ज्ञान उसी प्रकार विस्तृत हो जाता है, जिस प्रकार पानी का सिंचन पाकर वृक्ष विस्तार को प्राप्त करते है।[५]

विनीत शिष्य पर ही गुरु प्रीतमना होते हैं। वे अपनी कृपा की अनन्त वर्षा करते हुए शिष्य को निहाल कर देते है, उसे विपुल श्रुतज्ञान का लाभ देते है। रत्नत्रयी अर्थात सम्यग्ज्ञान, दर्शन व चारित्रमय मोक्ष मार्ग प्रदान कर अनन्त अनन्त काल के लिए सुखी बना देते हैं।[६]

वस्तुतः गुरु-कृपा एक ऐसी ही विलक्षण अमृतलता है, सजीवनी जडी है, जो शिष्य को अमर बना देती है। संत तुलसीदासजी के शब्दों में अनुभूति का अद्‌भुत रहस्य भरा है। वे कहते है-जो शिष्य श्रद्धानत होकर गुरुचरणों की रज को अपने सिर पर धारण करता है, तो तीनों लोको का विपुल वैभव उसके चरणों में लोटता है-उसके वश में हो जाता है।[७]

जब में अपने जीवन का अद्य पर्यन्त अवलोकन करता हूं तो पाता हूं कि यह मेरा जोवन भी प्रतिक्षण गुरु-कृपा का ही प्रसाद रहा है। जिस दिन मेरे पूज्य पिताश्री ने अपने साथ मुझे भी गुरु की कृपामयी छत्र-छाया में लाकर

---

४. जस्सतिए धम्मपयाइ सिक्खे, तस्सतिए वेणइयं पउजे।
सक्कारए सिरसा पजलीओ, कायग्गिरा भो मणसा य निच्चं॥
दशवै० ९/१/१२

५. जे आयरिय उवज्झायाणं, सुस्सूसावयणकरा।
तेसिं सिक्खा पवड्ढ ति, जलसित्ता इव पायवा॥ दशवै. ९/२/१२

६. पुज्जा जस्स पसीयंति, बुद्धा संपुव्व सथुआ।
पसण्णा लाभइस्संति, विउल अट्ठिय सुयं॥ उत्तरा० १/४६

७ जे गुरुचरण-रेणु सिर धरही।
ते जनु सकल विभव वस करहीं॥ राम चरित मानस।

रखा उसी दिन से बौद्धिक, मानसिक व आध्यात्मिक क्षेत्र में मेरा विकास निर्बाध गति से होता रहा- नित्य नये आयाम खुलते गए। व्याकरण, न्याय, अलकार, छन्द, काव्य आदि सस्कृत साहित्य के अध्ययन के साथ-साथ प्राकृत भाषा के व्याकरण, काव्य, साहित्य कर्मग्रन्थ, आगम एवं उनकी टीकाएँ, भाष्य आदि को भी पढ़ने-पढ़ाने का अवसर प्राप्त हुआ। बी.ए, एम.ए., सस्कृत के स्वय-पाठी विद्यार्थियो की अध्यापन-सेवा भी प्राप्त होती रही। दीक्षित होते ही जब मै गुरुचरणों मे बैठकर पढता था तब का एक दोहा- जो स्वर्गीय युवाचार्य श्री मधुकर मुनिजी के द्वारा मुझे उद्देश्य कर बनाया गया था- आज भी मुझे याद आता है-

प्राज्ञ-शिष्य मैं हूं सदा, 'वल्लभ' मेरा नाम ।
पढ़ना, लिखना, सोचना, है यह मेरा काम ।।

इन पक्तियों मे मेरे कर्तव्य का पूर्णत: निर्देश हो चुका है। इस पद की द्वितीय पक्ति मेरे लिए ध्येय वाक्य बन गई। दिन भर मे गुरु-चरणों मे रहकर सीखे हुए ज्ञान का रात्रि मे चिन्तन करना मेरा स्वभाव बनता गया। अपनी इसी प्रकृति को प्रस्तुत करते हुए मैंने पूज्य गुरुदेव की विद्यमानता में ही एक तुकबंदी की थी जो इस प्रकार है—

'बिसन' मुझ को लग गया, नित ज्ञान 'घीसी' करन का।
'बालचन्द्र' समान उन्नत, प्रे-'मसूदा' रहन का ।।

'सुगुन' रूपी रत्न से, आत्मायतन को भरन का ।
'रत्नत्रयी' की साधना कर, मोक्ष पथ को ग्रहण का ।।

स्वाध्याय कर जिन आगमो का, ज्ञान-'मोती' चयन का ।
देव, गुरु आराध करके, 'प्राज्ञ-किकर' बनन का ।।

इस पद्य मे क्रमश मेरे सासारिक दादा-दादी पिता, ग्राम, एवं माताजी के शुभ नामो को निहित करते हुए मेरे दादागुरु, गुरु एव गुरु-कृपा से प्राप्त 'रत्नत्रयी'-ज्ञान, दर्शन व चारित्र के साथ मेरा अपना नाम भी समाविष्ट है।

शनै. शनै मेरा मन गुरु-कृपा की अनेक तरंगो से तरगायित होने लगा। वे क्षण मेरे लिए सर्वाधिक आनन्द के क्षण होते थे जब मेरे हृदयोदधि

मे उत्थित वे भावोर्मियां शब्दरूप में साकार होने लगती थीं। इसके परिणाम स्वरुप ही संस्कृत व हिन्दी में, मैं अपने उद्‌गारों को लिपिबद्ध कर सका। आज जब भी मैं उन दिनों की रचनाओं को पढ़ता हूं तो तुरन्त मेरे मानस पटल पर पूज्य गुरुदेव की महा-महिमामयी, मुस्कान-भरी छवि अंकित हो जाती है जो मेरा पथ-प्रदर्शन करते हुए सदैव मेरे साथ रही।

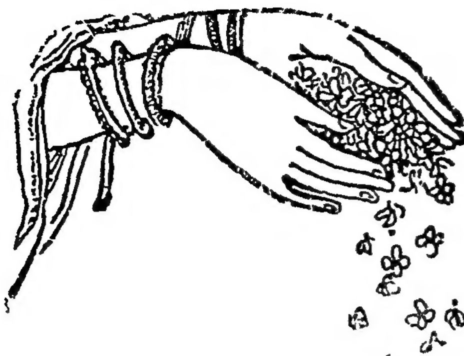
विगत कुछ समय से अनेक धर्मानुरागी बन्धुओं का आग्रह हो रहा था कि उन पक्तियो को सर्व-जन-सुलभ बनाया जाय। उनके प्रेम भरे आग्रह को मानकर 'गुरु-कृपा' के रूप में तुकबन्दी के कुछ पृष्ठों के साथ 'रत्नत्रयी के गीत' का सातवां खड भी पाठकों के हाथों मे उपस्थित है। गुरु-कृपा से ये पंक्तियां भव्यात्माओं के मानस को उसी प्रकार समाह्लादित करेगी, जैसा कि रामचरित मानस में तुलसीदासजी की उक्ति है-

जो बालक कह तोतरि बाता।
सुनहि मुदित मन, पितु अरु माता॥

आदरणीय डॉ० नरेन्द्रसिंहजी सा- प्रवक्ता हिन्दी विभाग रा. स. ध. महाविद्यालय ब्यावर ने इस पुस्तक पर मननीय भूमिका लिखकर अपने अमूल्य भावों का सम्प्रदान किया उसके लिए डॉ. सिह का सादर धन्यवाद करना अभीष्ट है।

भोपालगंज-भीलवाड़ा
वि० सं० २०४३
कार्तिक चातुर्मासी

गुरु कृपाकांक्षी :
**वल्लभमुनि 'प्राज्ञकिंकर'**



# समर्पणम्

'गुरु-कृपा' जिनकी कृपया मिली,
हृदय की मुरभी कलियां खिली।
जनक, शिक्षक, सद्गुरु-रूप में,
हित किया नित छांह रु धूप में ।।

उन पिता गुरु 'बाल' मुनीश को,
सरल-मानस को, महनीय को।
विनय-भक्ति-समन्वित-चाव से,
करूँ समर्पित वल्लभ - भाव से ।।

'प्राज्ञ-किंकर'

प्रथम खण्ड में कवि ने घोर तपश्चर्या कर कर्मों को क्षीण करने तथा लोक व अलोक को प्रकाशित करने वाले चौबीसवे तीर्थंकर भगवान महावीर की वन्दना करते हुए जैन दर्शन के विविध पक्षो को सरल भाषा के द्वारा प्रस्तुत किया है। इस खण्ड मे उन्होने 'सारे जहां का दर्द जिनके जिगर मे था' उन्ही प्रार्शषि गुरुदेव स्व० श्री पन्नालालजी म. सा., भक्तजनों के सत्पथ प्रदर्शक स्व० प्रवर्तक पूज्य गुरूदेव श्री कुन्दनमलजी म. सा. तथा मोक्ष मार्ग के साधक स्वाध्याय-शिरोमणि प्रवर्तक पूज्य गुरूदेव श्री सोहनलालजी म. सा. आदि गुरूजनों की स्तुति भी की है। सचमुच में 'दर्शना-पचविशति' इस खण्ड का अमृत-घट ही है।

द्वितीय खण्ड में गुरूजनों के प्रताप की चर्चा करते हुए कवि ने श्रावक को अपने आध्यात्मिक - दायित्व का बोध कराया है। श्रावक को सासारिक सरोवर मे कमल के समान माया से निर्लिप्त रहना चाहिये। रतन और कमल शिक्षा पच्चीसी को पढकर आज से लगभग पांच सौ वर्ष पूर्व संत सम्प्रदाय की वाणी के अनेक भाव बिंदुओं की याद ताजा हो जाती है। कवि पर सतवाणी की इस पक्ति का स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है :—

'जिन प्रेम कियो तिन ही प्रभु पायो।'

तृतीय खण्ड मे नवकार मन्त्र की काव्यात्मक व्याख्या करते हुए उसके प्रभाव का मूल्याकन किया गया है। साथ ही तीर्थङ्करो की स्तुतियो मे अपनी भक्ति समर्पित की है।

चतुर्थ खण्ड मे कवि ने त्रयताप मिटाने वाले गुरु के महत्व की चर्चा करते हुए श्रद्धेय जैनाचार्य श्री नानकरामजी म.सा. से वर्तमान गुरू-देव श्री सोहनलालजी म. सा. तक गुरू परम्परा का वर्णन किया है, उनके दिव्य और लोकहितकारी गुणो की प्रशसा की है। इस खण्ड का प्रत्येक गीत गुरू भक्ति मे भीगे कवि मानस से जन्मा है। कतिपय स्थलो पर कवि भावुक हो उठा है।

'ये बोले मीठा बोल, घणा ही प्यारा है,
ये बसिया मानस माय, नैन का तारा है।'

पंचम खण्ड मे जैन धर्म के व्यावहारिक पक्ष की चर्चा की गई है। दीक्षार्थी की वीतरागी भावनाओं से लेकर चातुर्मास के महत्व तक-को रुपायित किया है। कवि ने श्रावको को ज्ञान क्रिया और चारित्र्य मे सतुलन स्थापित करते हुए उसे जीवन मे चरितार्थ करने की प्रेरणा दी है। कतिपय स्थलो पर कवि ने

आगमों का ज्ञान लो, तत्त्वों को पहचान लो,
मिथ्यातम को त्यागो रे ।
देव अरिहन्त है, गुरू निर्ग्रन्थ है,
दया धर्म सागो रे ।

'गुरू कृपा' की प्रत्येक रचना की विशेषता जो सहज ही प्रभावित करती है-वह है स्पष्टता और सम्प्रेषणीयता । मनोषी हृदय से जो उद्‌गार फूटे है वह बिना किसी दुराव के पाठक तक पहुँच जाते है । उसे कहीं भी मानसिक व्यायाम नही करना पड़ता । अधिकांश स्थल कवि भवानीप्रसाद मिश्र के इस कथन के अनुरूप है— 'जिस तरह तू बोलता है उस तरह तू लिख ।' मारवाड़ मे प्रचलित राजस्थानी भाषा के रूप की गध प्रत्येक छन्द मे आती है । लयात्मकता के कारण इन रचनाओं की लोकप्रियता असदिग्ध है । प्रवचन के बीच बीच में कथन को प्रभावित करने के लिए इनका प्रयोग विशेष रूप से किया जा सकता है । दोहा, सोरठा, द्रुत विलम्बित, वसन्ततिलका एवं सवैया आदि छन्दों का प्रयोग भी इसकी विशेषता है । कतिपय स्थलो पर सस्कृत के प्रांजल रूप का प्रयोग कवि के सस्कृत ज्ञान का परिचायक है । अततः कहा जा सकता है कि जिज्ञासु श्री वल्लभ मुनि 'प्राज्ञकिकर' कवि, संत और शिल्पी के रूप मे तिमजिले व्यक्तित्व के धनी है जिसका प्रतिफल 'गुरूकृपा' है ।

'गुरू कृपा' के सात खण्ड विविध सात सोपान है जो एक ही गंतव्य स्थल तक ले जाते है, जहां सघन तिमिर मे ज्योति की किरणे विकीर्ण होती है । इसका प्रत्येक छन्द लोक कल्याणमयी भावधारा से अनुप्राणित है । एक सच्चा श्रावक किस प्रकार अपने मन के दर्पण पर जमी अज्ञानता की धूल साफ कर कैसे सहज और सात्विक जीवन पद्धति को अपनाए यही बताना कवि का उद्देश्य है । सासारिक कुचक्र मे फसा व्यक्ति जब इसे पढेगा तो निश्चित ही भगवान महावीर के द्वारा निर्दिष्ट पथ पर चलने के लिए प्रेरित होगा ।

१ जनवरी १९८७
राज० सनातन धर्म महाविद्यालय
ब्यावर (राज०)

डॉ. नरेन्द्रसिह
एम. ए , पी एच. डी., जे. डी.
व्याख्याता हिन्दी विभाग

आगमों का ज्ञान लो, तत्त्वों को पहचान लो,
मिथ्यातम को त्यागो रे ।
देव अरिहन्त है, गुरू निर्ग्रन्थ है,
दया धर्म सागो रे ।

'गुरू कृपा' की प्रत्येक रचना की विशेषता जो सहज ही प्रभावित करती है-वह है स्पष्टता और सम्प्रेषणीयता । मनीषी हृदय से जो उद्गार फूटे है वह बिना किसी दुराव के पाठक तक पहुँच जाते है । उसे कही भी मानसिक व्यायाम नही करना पड़ता । अधिकांश स्थल कवि भवानीप्रसाद मिश्र के इस कथन के अनुरूप है— 'जिस तरह तू बोलता है उस तरह तू लिख ।' मारवाड़ मे प्रचलित राजस्थानी भाषा के रूप की गध प्रत्येक छन्द मे आती है । लयात्मकता के कारण इन रचनाओ की लोकप्रियता असदिग्ध है । प्रवचन के बीच बीच में कथन को प्रभावित करने के लिए इनका प्रयोग विशेष रूप से किया जा सकता है । दोहा, सोरठा, द्रुत विलम्बित, वसन्ततिलका एवं सवैया आदि छन्दो का प्रयोग भी इसकी विशेषता है । कतिपय स्थलों पर सस्कृत के प्रांजल रूप का प्रयोग कवि के सस्कृत ज्ञान का परिचायक है । अतत. कहा जा सकता है कि जिज्ञासु श्री वल्लभ मुनि 'प्राज्ञकिकर' कवि, संत और शिल्पी के रूप मे तिमजिले व्यक्तित्व के धनी है जिसका प्रतिफल 'गुरूकृपा' है ।

'गुरू कृपा' के सात खण्ड विविध सात सोपान है जो एक ही गतव्य स्थल तक ले जाते है, जहा सघन तिमिर मे ज्योति की किरणे विकीर्ण होती है । इसका प्रत्येक छन्द लोक कल्याणमयी भावधारा से अनुप्राणित है । एक सच्चा श्रावक किस प्रकार अपने मन के दर्पण पर जमी अज्ञानता की धूल साफ कर कैसे सहज और सात्विक जीवन पद्धति को अपनाए यही बताना कवि का उद्देश्य है । सासारिक कुचक्र मे फसा व्यक्ति जब इसे पढेगा तो निश्चित ही भगवान महावीर के द्वारा निर्दिष्ट पथ पर चलने के लिए प्रेरित होगा ।

१ जनवरी १९८७

**राज० सनातन धर्म महाविद्यालय**

**ब्यावर** (राज०)

**डॉ. नरेन्द्रसिह**
एम. ए, पी. एच. डी., जे डी.
व्याख्याता हिन्दी विभाग

भावनाशील उपदेशक बनकर श्रावकों को सन्मार्ग पर चलने का आह्वान किया है :—

"साहस पूर्वक व्रतपालन में, अब बनो बनाओ दृढ़तर तुम,
ढीलेपन से नही काम चलेगा, करो शुद्धियां डटकर तुम ।
कर उदासीनता कार्यक्रमों में, मत ना शान घटाओ रे ।"

इसी खण्ड में आत्म ज्ञान, स्वाध्याय एव पर्यु षण आदि के दार्शनिक पक्ष को सरल लयात्मक गीतों के माध्यम से प्रस्तुत किया है । इस खण्ड के विविध गीतों को पढ़ते समय पाठक जैन धर्म से भावात्मक रूप से सम्पृक्तता अनुभव करता है और अनेक शिक्षाए सहज ही ग्रहण कर लेता है ।

षष्ठ खण्ड सन्तोपदेश की दृष्टि से सर्वाधिक महत्वपूर्ण है । धार्मिक और सामाजिक प्रश्न कवि के मानस पर दस्तक देते हैं एक चिन्तन के लिए प्रेरणा देते हैं । चिन्तन के उपरान्त अन्तः सागर से जो उज्ज्वल-मणियां जन्मीं उन्हे ही इस खण्ड में शब्दबद्ध किया गया है । इसका प्रत्येक शब्द व्यावहारिकता से जुडा है । कही श्रावक भाव विभोर हो जाता है तो कहीं सोचने के लिए विवश हो जाता है । कवि ने आत्म केद्रित हो अज्ञान की गहरी नीद में सोए प्राणियों को जागने का आह्वान किया है :—

"जरा जाग उठो ऐ प्राणियों, मिले साधन न हो वेकार रे,
शुभ साधन से कर लो साधको! निज जीवन की नैया पार रे ।
चिन्तामणी सम नर देह पाया, इसे न खोना भाई,
सार-सार को ग्रहण करो ज्यू, गोता न हो भव मांही,
दे रहे सत ललकार रे, यहां रहना दिवस ही चार रे ।"

सप्तम खण्ड मे नाम के अनुरूप ही प्रतिभा सम्पन्न साध्वी रत्नत्रयी — श्री ज्ञानलता जैन 'प्राज्ञचन्दना', श्री दर्शनलता जैन 'प्राज्ञनन्दना', श्री चारित्र-लता जैन 'प्राज्ञवन्दना' द्वारा प्रणीत रचनाए सकलित है । नवोदित कवियित्रियों मे जो काव्य-प्रतिभा अकुरित हुई है भविष्य में पल्लवित एवं पुष्पित होगी ऐसा मेरा विश्वास है । साध्वी रत्नत्रयी ने एक निष्ठ भाव से जहां अपने गुरूजनो की वन्दना की है वहां चातुर्मास एव पर्यु षण आदि के महत्व को भी रूपायित किया है । उन्होंने अपने कर्तव्य पथ को भूल रही युवा पीढ़ी को भी दिशा बोध देने का प्रयास किया है :—

आगमों का ज्ञान लो, तत्त्वों को पहचान लो,
मिथ्यातम को त्यागो रे ।
देव अरिहन्त है, गुरू निर्ग्रन्थ है,
दया धर्म सागो रे ।

'गुरू कृपा' की प्रत्येक रचना की विशेषता जो सहज ही प्रभावित करती है-वह है स्पष्टता और सम्प्रेषणीयता । मनोषी हृदय से जो उद्गार फूटे है वह बिना किसी दुराव के पाठक तक पहुँच जाते है । उसे कही भी मानसिक व्यायाम नहीं करना पड़ता । अधिकांश स्थल कवि भवानीप्रसाद मिश्र के इस कथन के अनुरूप हैं— 'जिस तरह तू बोलता है उस तरह तू लिख ।' मारवाड मे प्रचलित राजस्थानी भाषा के रूप की गध प्रत्येक छन्द मे आती है । लयात्मकता के कारण इन रचनाओं की लोकप्रियता असदिग्ध है । प्रवचन के बीच बीच में कथन को प्रभावित करने के लिए इनका प्रयोग विशेष रूप से किया जा सकता है । दोहा, सोरठा, द्रुत विलम्बित, वसन्ततिलका एव सवैया आदि छन्दों का प्रयोग भी इसकी विशेषता है । कतिपय स्थलों पर संस्कृत के प्रांजल रूप का प्रयोग कवि के संस्कृत ज्ञान का परिचायक है । अतत. कहा जा सकता है कि जिज्ञासु श्री वल्लभ मुनि 'प्राज्ञकिकर' कवि, संत और शिल्पी के रूप में तिमजिले व्यक्तित्व के धनी है जिसका प्रतिफल 'गुरूकृपा' है ।

'गुरू कृपा' के सात खण्ड विविध सात सोपान है जो एक ही गतव्य स्थल तक ले जाते है, जहां सघन तिमिर मे ज्योति की किरणे विकीर्ण होती है । इसका प्रत्येक छन्द लोक कल्याणमयी भावधारा से अनुप्राणित है । एक सच्चा श्रावक किस प्रकार अपने मन के दर्पण पर जमी अज्ञानता की धूल साफ कर कैसे सहज और सात्विक जीवन पद्धति को अपनाए यही बताना कवि का उद्देश्य है । सांसारिक कुचक्र मे फसा व्यक्ति जब इसे पढेगा तो निश्चित ही भगवान महावीर के द्वारा निर्दिष्ट पथ पर चलने के लिए प्रेरित होगा ।

डॉ. नरेन्द्रसिह
एम. ए , पी. एच. डी., जे. डी.
व्याख्याता हिन्दी विभाग

१ जनवरी १९८७
राज० सनातन धर्म महाविद्यालय
ब्यावर (राज०)

# अर्थ - सहयोग : साभार धन्यवाद

प्रस्तुत 'गुरु-कृपा' के प्रकाशन में जिन उदारमना दानदाताओं का आर्थिक सहयोग प्राप्त हुआ है उनका हार्दिक धन्यवाद करते है । उनके शुभ नाम है :—

१. श्रीमती मैनाबाईजी धर्मपत्नी श्रीमान् प्रकाशचन्दजी सोनी, नया बाजार, अजमेर

२. श्रीमती डा. शकुन्तला जैन धर्मपत्नी श्रीमान् डा. मुकेशचन्दजी पूनमिया इन्दौर (मध्यप्रदेश)

३. श्रीमती लाड़वाईजी धर्मपत्नी श्रीमान् सेठ साहब श्री भीमसिंहजी सचेती गुलाबपुरा

४. स्व० श्री हीरालालजी चौरड़िया २२६/२२ ब्लू केसल, पड़ाव, अजमेर की स्मृति में श्रीमती कंचनकंवर (धर्मपत्नी) अनिल, सुनिल एव ललित-कुमार (सुपुत्र)

५. श्रीमान् एम. नन्दलालजी तातेड़, ८६ एन पी. कोइल स्ट्रीट, मद्रास

६. स्व० श्री मोहनलालजी चतर, ब्यावर की स्मृति मे श्रीमति पदमकवर चत्तर (धर्मपत्नी) श्री गुलाबचन्दजी चतर (सुपुत्र)

७. श्रीमान् गुप्त दान दाता, विजयनगर

८ श्रीमान् तेजमलजी गांग, भोपालगंज, भीलवाड़ा

९. श्रीमान् माणकचन्दजी ज्ञानचन्दजी सिंघी, विजयनगर

१०. श्रीमतो उगमवाईजी धर्मपत्नी श्री मांगीलालजी महता, कवलियास

११. श्रीमान् गुप्त दान दाता, विजयनगर

१२. श्रीमान् गुप्त दान दाता, विजयनगर



# संस्कृत पद्य विभाग

## (प्रथम खण्ड)

॥ जय गुरु पन्ना ॥ ॥ जय गुरु सोहन ॥ ॥ जय गुरु सुदर्शन ॥

स्वाध्याय संघ के आद्य प्रणेता

**पूज्य प्रवर्त्तक गुरुदेव श्री पन्नालाल जी**

**म.सा. की 116 वीं**

जन्म जयन्ति के उपलक्ष में स्वाध्यायार्थ उपहार

वि सं 2060 मंगल, किशनगढ़ © 232227

o श्री वीर-जिन-स्तोत्र

o गणधर-स्तवनम्

o श्री प्राज्ञाष्टक-स्तोत्रम् - १

o श्री प्राज्ञाष्टक-स्तोत्रम् - २

o श्री प्राज्ञाष्टक-स्तोत्रम् - ३

o श्री कुन्दन-गुरु-स्तुति

o श्री सोहन-गुरु-श्लोकत्रयी

o मुनि महिमाष्टकम्

o स्वाध्याय-सप्तकम्

o दर्शना - पञ्चविंशति

o औपदेशिकाः श्लोकाः

# श्री वीर जिन-स्तोत्रम्

( शार्दूल विक्रीडित वृत्तम् )

[ १ ]

चैत्रे शुक्लदले त्रयोदशि–दिने, धिष्ण्ये च हस्तोत्तरे,
हिंसा - द्वेष - घृणादिदोषदलिता - न्नुद्धर्तुं कामो जनान् ।
दिष्ट्या धन्यमचीकरोत् स्वजनुपा, श्रीकुण्डलाख्यं पुरम्,
स स्याद् वीरजिनो विनष्टवृजिनो, नः श्रेयसे पावनः ।।१।।

अर्थ—हिंसा, द्वेष घृणा आदि दोषों से पीड़ित प्राणियों का उद्धार करने के लिए जिन्होंने चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन, हस्तोत्तर नक्षत्र का चन्द्र के साथ सुयोग होने पर सौभाग्यवशात् अपने जन्म से कुण्डलपुर नगर को धन्य किया, वे पापो से रहित, पावन श्री वीर जिनेश्वर हम सबके लिए कल्याणकर होवें ।

[ २ ]

यद्वृद्धावनिशं विलोक्य पितरौ, वृद्धि सुवस्तुव्रजे,
प्रेम्णाऽभूषयतां स्वय स्वतनय, श्री वर्द्धमानाख्यया ।
पश्चान्मेरु – नगेन्द्रचालन – महावीरो मघोना स्तुतः,
स स्याद् वीरजिनो विनष्टवृजिनो, नः श्रेयसे पावन. ।।२।।

अर्थ—पुत्र की शरीर वृद्धि के साथ अपने क्षेत्र मे सुख, समृद्धि, यश आदि वस्तुओं की वृद्धि को देखकर माता-पिता ने अपने पुत्र को श्री 'वर्द्धमान' नाम से सप्रेम विभूषित किया, तथा मेरु पर्वत को अपने चरण-अगुष्ठ से चलायमान करने के कारण इन्द्र ने 'महावीर' कहकर जिनकी स्तुति की, वे पापों से रहित, पावन श्री वीर जिनेश्वर हम सबके लिए कल्याणकर होवें ।

[ ३ ]

श्रीसिद्धार्थ सुत - स्त्रिलोकमहित – स्तीर्थङ्करश्चान्तिमः,
त्रिज्ञानी, त्रिशलात्मजः सुकुलजो, भ्राता लघुर्नन्दिनः।
त्यक्त्वा राजसुख दधौ च शिवदां, दीक्षां शुभामार्हतीम्,
स स्याद् वीरजिनो विनष्टवृजिनो, नः श्रेयसे पावनः ।।३।।

अर्थ—श्री सिद्धार्थ राजा के पुत्र, तीनों लोकों से पूजित, अन्तिम तीर्थङ्कर, मति, श्रुत एवं अवधि रुप ज्ञानत्रयी से सम्पन्न, त्रिशलानन्दन, श्रेष्ठवश में समुत्पन्न एव श्री नन्दीवर्धन के लघु भ्राता श्री महावीर प्रभु ने अतुल राज्यसुख का परित्याग कर, कल्याणकारिणी, शुभ आर्हती दीक्षा को धारण की, ऐसे वे पापों से रहित, पावन श्री वीर जिनेश्वर हम सबके लिए कल्याणकर होवे ।

[ ४ ]

क्रोधोद्दीपित - चण्डकौशिक इति, ख्यातो भुजंगाधिपो,
लेभे यस्य पदाम्वुजस्य महतः, स्पर्शेण जाति - स्मृतिम् ।
स्वीयां वृत्तिमहिंसकां शुचितरां. कृत्वा गतोऽरं दिवम्,
स स्याद् वीरजिनो विनष्ट वृजिनो, नः श्रेयसे पावनः ।।४।।

अर्थ—महाक्रोधी, चण्डकौशिक सर्पराज ने डसने के बहाने जिस महावीर के चरणाम्वुज के स्पर्श से जातिस्मरण ज्ञान को प्राप्त किया एव विवेक सम्पन्न होकर अपनी वृत्ति को अहिंसक व पवित्र बनाकर शीघ्र ही स्वर्ग को प्राप्त किया, वे पापों से रहित पावन श्री वीर जिनेश्वर हम सबके लिए कल्याणकर होवे ।

[ ५ ]

घोर घोरतमोपसर्गनिचयं, ह्यज्ञैरनार्यैः कृतम्,
सोढ्वा यन्निखिलंगभीरमनसा चिक्षाय मोहावलीम् ।
आदर्शं व्यतरज्जनस्य पुरतो, धैर्यस्य चानुत्तमम्,
स स्याद् वीरजिनो विनष्टवृजिनो, नः श्रेयसे पावनः ।।५।।

अर्थ—जिन भगवान महावीर ने अपनी तपश्चर्या के काल मे अज्ञानी एवं अनार्य पुरुषों के द्वारा कृत अनेक दुस्सह उपसर्गों को गम्भीर मन से सहनकर राग, द्वेष और मोह को सर्वथा क्षीण कर दिया, साथ ही भव्यजनो के समक्ष उत्तम धैर्य धारण करने का आदर्श उपस्थित किया, ऐसे वे पापो से रहित पावन श्री वीर जिनेश्वर हम सबके लिए कल्याणकर होवे।

[ ६ ]

तप्त्वा घोरतपोव्रत नियमतः, कृत्वा क्षय कर्मणाम्,
लोकालोक - विकासकं सकलगं, लब्ध्वा च ज्ञान परम् ।
व्याख्याद् भव्यजनाय जन्मजलधावालम्बिनी देशनाम्,
स स्याद् वीरजिनो विनष्टवृजिनो, नः श्रेयसे पावनः ॥६॥

अर्थ—जिन्होने नियमानुसार घोर तपश्चर्या कर कर्मो को क्षीण कर दिया तथा लोक व अलोक को प्रकाशित करने वाला एव सर्वत्र अप्रतिहत गतिवाला, परम उत्कृष्ट केवलज्ञान प्राप्तकर भव्यजनो के लिए ससार-सागर से पार होने मे सहायक उत्तम धर्मोपदेश का व्याख्यान किया, ऐसे वे पापो से रहित, पावन श्री वीर जिनेश्वर हम सबके लिए कल्याणकर होवे।

[ ७ ]

यद्वाणी रसमाधुरी श्रुतिपुटैः पीत्वा सकृच्छ्रद्धया,
विख्यातार्जुनरोहिणप्रभृतयो, मुक्ति गताः पातकाः ।
गोत्र तीर्थकर दृढायु – सुलसा – शखादयः प्राप्नुवन्,
स स्याद् वीरजिनो विनष्टवृजिनो, नः श्रेयसे पावन. ॥७॥

अर्थ—जिनके मधुर वचनामृत को कर्णपुटो से श्रद्धा के साथ एकबार ही पीकर अर्जुनमाली, रोहिणेय तस्कर आदि अनेक पापी पुरुप भी मुक्ति को प्राप्त हो गए तथा दृढायु, सुलसा, शख आदि व्यक्तियो ने तीर्थङ्कर गोत्र का उपार्जन किया, ऐसे वे पापों से रहित, पावन श्री वीर जिनेश्वर हम सबके लिए कल्याणकर होवे।

[ ८ ]

यस्यार्चाकरणेन हृष्ट – हृदय:, तिर्यग्यदा दर्दु र:,
स्वर्गे स्वर्ग – विभूतिसेवनपरो, देवैः समं द्योतते ।
सद्भक्ताः किल सत्वरं परसुख विन्दन्ति चेत् कित्वहो,
स स्याद् वीरजिनो विनष्टवृजिनो, नःश्रेयसे पावनः ॥८॥

अर्थ—जिनकी भाव पूजा (भाव वन्दन) करने से प्रमुदित हृदय वाला तिर्यञ्च योनि मे उत्पन्न मेढक भी स्वर्गलोक को प्राप्त करके देवों के साथ स्वर्गीय विभूति को सेवन करता हुआ विराजमान है, तब यदि आपके सच्चे भक्त शीघ्र ही परम सुख को प्राप्त करले, इसमें क्या आश्चर्य की बात है ? ऐसे वे पापों से रहित, पावन श्री वीर जिनेश्वर हम सबके लिए कल्याणकर होवे ।

## प्रशस्ति

( वसन्त तिलका वृत्तम् )

चन्द्राङ्क–वेदशय सम्मित–वर्धमाने,
संवत्सरेऽर्जु नदले किल चैत्रमासे ।
श्री प्राज्ञचन्द्र–चरणाम्वुजचचरीको,
विद्यार्थि–वल्लभमुनिर्नु ति–माततान ॥९॥

अर्थ—वीर सं० २४६१ के चैत्रमास के शुक्लपक्ष में श्री प्राज्ञचन्द्र गुरुवर्य के चरणारविन्दों के भ्रमर रूप विद्यार्थी वल्लभ मुनि ने इस स्तोत्र की रचना की ।



# 卐 गणधर स्तवनम् 卐

( द्रुतविलम्बित वृत्तम् )

[ १ ]

विमल विश्रुत गौतम गौत्रियम्,
प्रथम - मिन्द्रभुर्ति यमितेन्द्रियम् ।
सकल - लब्धिधर सकलाक्षरम्,
गणधरं भज धर्मधुरन्धरम् ॥ १ ॥

अर्थ—विमल और विख्यात गौतम गौत्र मे समुत्पन्न, सकललब्धियों के धारक, सम्पूर्ण चौदह पूर्वो के ज्ञाता धर्म धुरा को धारण करने वाले, जितेन्द्रिय पहले गणधर श्री इन्द्रभूतिजी की हे मन ! सेवा कर ॥

[ २ ]

सघन - कर्म - वन - ज्वलनेऽनलम्,
जनन - सिन्धु - समुत्तरणे त्वलम् ।
प्रथितमग्निभूर्ति श्रुतसंचरम्,
गणधरं भज धर्मधुरन्धरम् ॥ २ ॥

अर्थ—सघन कर्मों के जंगल को जलाने मे अग्नि के समान, भवसागर को पार करने में समर्थ, श्रुतज्ञान मे सचरण करने वाले, प्रख्यात दूसरे गणधर श्री अग्निभूतिजी की हे मन ! सेवा कर ॥

[ ३ ]

विषय दुर्वह गन्ध निवारण—
प्रबल गन्धवहं विवुधैः स्तुतम् ।
सरसवायुभुर्ति गुणसागरम्,
गणधरं भज धर्मधुरन्धरम् ॥ ३ ॥

अर्थ—विषय विकारों की असह्य दुर्गन्ध का निवारण करने में प्रबल वायु के समान, पण्डितो अथवा देवों के द्वारा सस्तुत, गुणों के सागर, सरस

वायु के समान आनन्दित करने वाले, तीसरे गणधर श्री वायुभूतिजी की हे मन ! सेवा कर।

[ ४ ]

विगत - काम - कषाय - दवानलम्,
विगत - मोहमदादिकमण्डलम् ।
विगतभूति - मलौकिकभूतिदम्,
गणधर भज धर्मधुरन्धरम् ॥ ४ ॥

अर्थ—काम और कषाय की दावाग्नि से रहित, मोह मद आदि के घेरे से विमुक्त, बाह्य धनादि ऐश्वर्य से रहित होते हुए भी अलौकिक एव व्यक्त ऐश्वर्य के दाता, चौथे गणधर श्री विगतभूति (व्यक्तभूति)जी की हे मन ! सेवा कर ॥

[ ५ ]

चरमतीर्थपतेश्चरणाश्रितम्,
प्रथम - सूरिपदे सुविराजितम् ।
जिन - सुधर्म - कथा - कथनेश्वरम्,
गणधरं भज धर्मधुरन्धरम् ॥ ५ ॥

अर्थ—चरम तीर्थङ्कर श्री महावीरस्वामी के चरणोपासक, सर्व प्रथम आचार्य पद के सुशोभित कर्ता, जिन प्रणीत सद्धर्म की कथा कहने में समर्थ, पांचवें गणधर श्री सुधर्मास्वामीजी की हे मन ! सेवा कर ॥

[ ६ ]

परम - पण्डित - मण्डित - पुत्रकम्,
वर - मखण्डित - मण्डित - सूत्रकम् ।
जिन - सुशासन - मण्डित - विग्रहम्,
गणधरं भज धर्मधुरन्धरम् ॥ ६ ॥

अर्थ—श्रेष्ठ अखण्डित सूत्रो के रचयिता, जिनाज्ञा के पालन से मण्डित विग्रह (शरीर) वाले, पण्डित प्रवर छठे गणधर श्री मण्डितपुत्रजी की हे मन ! सेवा कर ॥

[ ७ ]

अतुल - शौर्यधन मुनि - सत्तमम्,
गणपतिं गणनायक - मौर्यकम् ।
सघन - मोह - घनान्तकमारुतम्,
गणधरं भज धर्मधुरन्धरम् ॥ ७ ॥

अर्थ—अतुल शौर्य के धनी, सघन मोह के बादलों को बिखेरने में वायु के समान, मुनिप्रवर, गणपति मुनि सघ के नायक, सातवें गणधर श्रीमौर्यपुत्रजी की हे मन ! सेवा कर ॥

[ ८ ]

सुख - सुखेतर - वन्दन - निन्दने,
परिषहौघ–घनेऽप्यविकम्पितम् ।
मुनिमकम्पित - नामक - मष्टमम्,
गणधर भज धर्मधुरन्धरम् ॥ ८ ॥

अर्थ—सुख-दुःख वन्दना-निन्दना एवं परिषहों के भारी समूह में भी अकम्पित रहने वाले, आठवे गणधर श्री अकम्पितजी की हे मन ! सेवा कर ॥

[ ९ ]

मदन - मान - महोत्सव - मर्दकम्,
जनि - जरामरणाऽऽमयहारकम् ।
अचल बन्धुवर करुणाकरम्,
गणधरं भज धर्मधुरन्धरम् ॥ ९ ॥

अर्थ—कामदेव के मदभरे महोत्सवों के मर्दक, जन्म जरा और मरण रूपी रोगो के हारक, करुणा के सागर, अचल बन्धु स्वरूप नवमें गणधर श्री अचलभ्राताजी की हे मन ! सेवा कर ॥

[ १० ]

सुर - सुरेन्द्र - नरेन्द्र - सुपूजितम्,
यति - गुणान्वित - धर्मसुधाभृतम् ।

गणभृतं दशमं गुणमण्डितम्,
गणधरं भज धर्मधुरन्धरम् ॥१०॥

अर्थ—देव देवेन्द्रों और नर नरेन्द्रों के द्वारा पूजित, दस विध यति धर्म से युक्त धर्म सुधा से संपुष्ट, संघ के पालक, सद्गुणों से मण्डित दसवे गणधर श्री मेतार्यजी को हे मन ! सेवा कर ॥

[ ११ ]

विमल- काञ्चन - वर्ण - समप्रभम्,
सकल - लोकहितङ्कर - विश्रुतम् ।
मुनिप्रभास - मनिन्दित - मक्षरम्,
गणधर भज धर्मधुरन्धरम् ॥११॥

अर्थ—निर्मल स्वर्ण वर्ण के समान शरीर को प्रभा वाले, सकल लोकों के प्रसिद्ध हितकारी, निन्दा से रहित, अक्षर स्वरूपी ग्यारहवे गणधर श्री प्रभासमुनिजी की हे मन ! सेवा कर ।

[ १२ ]

गणधर - स्तवन मनसाऽधुना,
कृतमिदं मुनिवल्लभ - साधुना ।
पठति यो लभते श्रुतदर्शनम्,
चरितमुज्ज्वलमात्मविशोधनम् ॥१२॥

अर्थ—इस गणधर स्तवन को मनोयोग पूर्वक वल्लभमुनि नामक साधु (श्रमण) ने अभी बनाया है । जो भक्त इसे पढ़ता है, वह आत्म शुद्धि करने वाले सम्यग् ज्ञान, दर्शन व चारित्र को प्राप्त करता है ॥



# श्री प्राज्ञाष्टक - स्तोत्रम्-१

( वसन्ततिलका-वृत्तम् )

[ १ ]

श्रीमज्जिनेन्द्र - परिपालित - शुद्धदीक्षाम्,
यो धारयन् जगति मंगल-मूल-शीलाम् ।
ससिद्धिमाप सुतरां परमं प्रसिद्धम्,
त प्राज्ञचन्द्र - गुरुराजमह नमामि ।। १ ।।

अर्थ—जिन्होंने ससार में ध्रुव मंगल प्रदान करने वाली एव श्री जिनेश्वर देवों के द्वारा परिपालित शुद्ध जैन भागवती श्रमण दीक्षा को धारण कर सम्यक् सिद्धि को प्राप्त की, ऐसे परम प्रसिद्ध श्री प्राज्ञचन्द्र गुरुदेव को मैं प्रणाम (वन्दना) करता हूं ।

[ २ ]

यस्योग्रतेजस उदीक्ष्य तपः प्रभावम्,
स्वाभाविकीमपि विहाय कठोरवृत्तिम् ।
सिंहो बली कृतनतिः स्वत एव शान्तः,
तं प्राज्ञचन्द्र - गुरुराजमहं नमामि ।। २ ।।

अर्थ—जिन महान् तेजस्वी आत्मा के तप-प्रभाव को देखकर बलवान् सिंह भी अपनी स्वाभाविक कठोर (हिसक) वृत्ति को त्याग चुका एवं चरणो में नमस्कार कर स्वतः ही शान्त हो गया, उन पूज्य प्राज्ञचन्द्र गुरुदेव को मै प्रणाम करता हूं ।

[ ३ ]

धीरोऽप्यधीरवचनैर्विमलैः पशूना-
माकर्ण्य हिंसककृतिं निरुपद्रवाणाम् ।
हिंसात्मकं त्वघमिदं कृपया रुणद्धि,
तं प्राज्ञचन्द्र - गुरुराजमहं नमामि ॥ ३ ॥

अर्थ—निर्दोष मूक पशुओं की हिंसा (बली) को सुनकर धीर होते हुए भी अधीर (दया पूर्ण) व श्रेष्ठ वचनों से जिन्होंने करुणा करके इस हिंसात्मक पापाचार को रोका, उन पूज्य श्री प्राज्ञचन्द्र गुरुदेव को मैं प्रणाम करता हूं।

[ ४ ]

दीनस्य बालकजनस्य हिताय नित्यम्,
भक्तैर्निजैः समुचितं कृतसुप्रबन्धम् ।
मोहान्धकारमयविश्वमिमं जुषन्तम्,
तं प्राज्ञचन्द्र - गुरुराजमहं नमामि ॥ ४ ॥

अर्थ—साधनहीन, दीन, बालक-समूह के हितार्थ जिन्होंने हमेशा अपने भक्तों के द्वारा समुचित प्रबन्ध कराया। साथ ही मोह के घोर अन्धकार से युक्त इस ससार को प्रेम पूर्वक जगाया, उन पूज्य श्री प्राज्ञचन्द्र गुरुदेव को मैं प्रणाम करता हूं।

[ ५ ]

मिथ्यामये तमसि यापित - जीवनान् यो,
जीवान् प्रदर्श्य शिवमार्गविधेर्विधानम् ।
स्वाध्यायि - संघमतुलं व्यरचद् विशिष्टम्,
तं प्राज्ञचन्द्र - गुरुराजमहं नमामि ॥ ५ ॥

अर्थ—मिथ्यात्वरूपी अन्धकार में अपने जीवन को व्यतीत कर रहे जीवों को मोक्ष मार्ग की विधि का विधान बताकर जिन्होंने विशिष्ट एव अतुलनीय श्री जैन स्वाध्यायी संघ की रचना की, उन पूज्य प्राज्ञचन्द्र गुरुदेव को मैं प्रणाम करता हूं।

[ ६ ]

शुद्धैर्गुणैः परिवृतं यमिनां वरिष्ठम्,
धर्मैरलंकृतिपरैर्दशभिर्गरिष्ठम् ।
सन्तं परं जनहिताय सदा सुनिष्ठम्,
तं प्राज्ञचन्द्र - गुरुराजमहं नमामि ।। ६ ।।

अर्थ—शुद्ध गुणों से युक्त, जितेन्द्रियों में श्रेष्ठ, दस प्रकार के यति-धर्म से समलंकृत एवं गरिमामंडित, जनहित के लिए सदा निष्ठासम्पन्न, परम सन्त पूज्य प्राज्ञचन्द्र गुरुदेव को मैं प्रणाम करता हूं।

[ ७ ]

आत्मा तडाग इति वारि च शुद्ध-बुद्धि-
स्तत्राऽस्ति शोभितमतीव विवेककजम् ।
एतैर्गुणैरधिकृतिं परिभूषयन्तम्,
तं प्राज्ञचन्द्र - गुरुराजमहं नमामि ।। ७ ।।

अर्थ—जिनके आत्मा रूपी सरोवर में शुद्ध बुद्धि रूपी जल भरा हुआ है तथा उसमें विवेक रूपी कमल अतीव सुशोभित है, जो इन सभी गुणों से परिभूषित हैं, उन पूज्य प्राज्ञचन्द्र गुरुदेव को मैं प्रणाम करता हूं।

[ ८ ]

संसार - सागर - जले पततां जनानाम्,
रत्नत्रयान्वितमनुत्तरमुक्तिमार्गम् ।
सम्बोधयन्तमभितोऽधिकृतं गुणौघम्,
तं प्राज्ञचन्द्र - गुरुराजमहं नमामि ।। ८ ।।

अर्थ—संसार रूपी सागर के अथाह जल में गिरे हुए मनुष्यों को, जिन्होने सम्यग्ज्ञान, दर्शन व चारित्र से समन्वित, श्रेष्ठ मोक्ष मार्ग का सम्बोधन किया और सर्वतः गुण समूह को अधिकृत किया, उन पूज्य प्राज्ञ-चन्द्र गुरुदेव को मैं प्रणाम करता हूं।

## प्रशस्ति

एतत्प्राज्ञाष्टकं स्तोत्रं, वल्लभेन मुनीन्दुना ।
मुनीन्दुव्योमहस्ताब्दे, भक्त्या वाक्यैर्नियोजितम् ।।

अर्थ—इस प्राज्ञाष्टक स्तोत्र की मुनि 'वल्लभचन्द्र' ने वि० सं० २०१७ में भक्ति पूर्वक वाक्यों से रचना की ।

सदा शुद्धेन चित्तेन, स्तोत्रमेतत् यशस्करम् ।
शृणोति योऽथवाऽधीते, स प्राप्नोति परां गतिम् ।।

अर्थ—इस यशस्कारी स्तोत्र को जो भक्त शुद्ध हृदय से प्रतिदिन सुनता है अथवा पढ़ता है वह उत्कृष्ट गति को प्राप्त करता है ।



# श्री प्राज्ञाष्टक - स्तोत्रम्-२

( शिखरिणी - वृत्तम् )

[ १ ]

मरुस्थल्यामब्दे, समिति - गति - कल्पेन्दुलसिते,
सिते पक्षे भाद्रे, कितलसर नाम्नीति नगरे।
तृतीयायां रात्रौ, भविजन - हितार्थं समजनि,
मुनिः स प्राज्ञर्षिः सुकृतपथदर्शी भवतु मे ।।१।।

अर्थ—वि० सं० १६४५ की भाद्रपद शुक्ला तृतीया की रात्रि में जिन्होंने मरुधरा के नागौर जिलान्तर्गत कितलसर ग्राम में भव्य प्राणियों के कल्याणार्थ जन्म धारण किया वे श्री प्राज्ञर्षि गुरुदेव मेरे सत्पथ प्रदर्शक होवें।

[ २ ]

अहो येन प्राप्तं, निजगुणकलानां विकसनम्,
तपस्तेजश्चाथ, प्रतिदिनमखडं विधुरिव ।
जगतपूज्यः, प्राज्ञः, सकलजमतावल्लभतमो,
मुनिः सः प्राज्ञर्षिः, सुकृतपथदर्शी भवतु मे ।।२।।

अर्थ—आश्चर्य है, जिन्होंने बालचन्द्र की तरह प्रतिदिन अपनी आत्म-गुणो की कलाओं का विकास कर अखण्ड तपोमय तेज को प्राप्त किया। ऐसे वे संसार के पूज्य, सकल प्राणियों के प्रिय एवं प्रज्ञा के धनी श्री प्राज्ञर्षि गुरुदेव मेरे सत्पथ-प्रदर्शक होवें।

[ ३ ]

तुलस्याः पुत्रोऽयं, जगति तुलसीव प्रतिदिनम्,
जिनेन्द्रैः प्रज्ञप्तं, प्रकटयति सद्धर्म - सुरभिम् ।
भवव्याधिं चाधिं, हरति खलु दूरादसुमताम्,
मुनिः सः प्राज्ञर्षिः, सुकृतपथदर्शी भवतु मे ।।३।।

अर्थ—माता तुलसी के जिस पुत्र ने प्रतिदिन जगतीतल पर तुलसी (एक पौधा) की तरह जिनेश्वर देव के द्वारा कथित सद्धर्म की सुरभि को प्रकट किया—फैलाया तथा प्राणियों की जन्म-मरण की आधि-व्याधि को दूर से ही नष्ट की, वे प्राज्ञर्षि गुरुदेव मेरे सत्पथदर्शक होवें ।

[ ४ ]

अमन्दानन्दाढ्यां, हृदयगत - मिथ्याभ्रमनुदाम्,
मनो जित्वा सम्यक्, जिनवर गिरां पूज्य गुरुणा ।
पठित्वा सद्भक्त्या, विगतमदकामः समभवत्,
मुनिः सः प्राज्ञर्षिः, सुकृतपथदर्शी भवतु मे ।।४।।

अर्थ—जिन्होने पूज्य गुरुवर की चरण-सेवा में रहकर तथा अपने मन को वश में करके, अमन्द आनन्द से परिपूर्ण, हृदय (आत्मा) में रहे हुए मिथ्यात्व भ्रम को दूर करने वाले जिन प्रवचन को भक्ति पूर्वक पढ़ा और काम क्रोधादि से रहित हो गए, वे प्राज्ञर्षि गुरुदेव मेरे सत्पथप्रदर्शक होवें ।

[ ५ ]

यतिर्यो मुक्तावद्, विमलचरितः सिंह सदृशो-
ह्यभीतो धीरश्च - द्विप इव नतो रेणुरिव यः ।
तितिक्षुः पृथ्वीवज्जलनिधिगभीरो गुणनिधिः,
मुनिः सः प्राज्ञर्षिः, सुकृतपथदर्शी भवतु मे ।।५।।

अर्थ—जो मुनि 'मोती' (गुरु-नाम) की तरह निर्मलचरित्री, 'केसरी सिह' (व्याख्यान-गुरु) की तरह निर्भीक, 'गज' (शिक्षा गुरु) की तरह धीर एव 'रेणु' (शिक्षा गुरु) की तरह नम्र थे। पृथ्वी की भाति सहनशील एव सागर के समान गम्भीर गुणों के आगर श्री प्राज्ञर्षि गुरुदेव मेरे सत्पथ प्रदर्शक होवे।

[ ६ ]

समृद्ध्यै संवृद्ध्यै जिनमतवनस्यार्पित - मतिः,
शुभ स्वाध्यायोति, प्रथितमनघ सघमतुलम् ।
कृपालुर्योऽकार्षीत्, सुरतरूसमं वांछित - फलम्,
मुनि. सः प्राज्ञर्षिः सुकृतपथदर्शी भवतु मे ॥६॥

अर्थ—जिनशासन की समृद्धि और सवृद्धि के लिए अर्पित मति वाले जिस कृपालु ने श्रेष्ठ, प्रसिद्ध एव सवर-क्रिया से युक्त, अनुपम श्री स्वाध्यायी सघ का निर्माण किया, जो सघ कल्पवृक्ष के समान वांछित फल देने वाला सिद्ध हुआ, ऐसे वे प्राज्ञर्षि गुरुदेव मेरे सत्पथ प्रदर्शक होवे।

[ ७ ]

यदीयं सच्चित्तं, सरस - नवनीतोपम - मृदु,
दयापूर्णं स्वस्थ, मधुमधुरमिष्ट च वचनम् ।
तनुर्लग्ना यस्या, ऽप्यहह ! जगदुद्धर्तुमनिशम्,
मुनिः सः प्राज्ञर्षिः, सुकृतपथदर्शी भवतु मे ॥७॥

अर्थ—जिनका मानस सरस नवनीत के समान कोमल, दयापूर्ण एवं पावन था, जिनके वचन मधु से मधुर एवं उपादेय व मर्यादित थे। जिनका शरीर प्रतिदिन जगत् के उद्धार में लगा हुआ था, ऐसे वे प्राज्ञर्षि गुरुदेव मेरे सत्पथ प्रदर्शक होवे।

[ ८ ]

सुधासिक्तै - र्वाक्यै, र्जगति जनतां मोहनिरताम्,
प्रबोधं कुर्वन् यः, परमसुखशान्त्या स्थितमतिः ।
जिनं शांति ध्यायन्, सुरपुरमगात् कीर्तिविशदो,
मुनिः सः प्राज्ञर्षिः सुकृतपथदर्शी भवतु मे ॥८॥

अर्थ—जिस स्थितप्रज्ञ महापुरुष ने मोह मे निमग्न प्राणियों को अपने सुधासिक्त वाक्यों से प्रबुद्ध करते हुए परम सुख-शान्ति पूर्वक, शान्ति जिनेश्वर का ध्यान करते हुए स्वर्ग को प्राप्त किया, वे स्वच्छ कीर्ति के धनी प्राज्ञर्षि गुरुदेव मेरे सत्पथ प्रदर्शक होवें ।

## प्रशस्ति

( वसन्ततिलकावृत्तम् )

---

प्राज्ञाष्टकं कृतमिदं मुनिवल्लभेन,
'श्री प्राज्ञकिंकर' इति प्रथिताह्वयेन ।
स्तोत्रं सदा पठति यो ह्यथवा शृणोति,
कल्याणमेवमखिलं लभते स मर्त्यः ॥९॥

अर्थ—'प्राज्ञकिंकर' इस नाम से प्रसिद्ध वल्लभ मुनि ने यह प्राज्ञाष्टक स्तोत्र बनाया हैं। इस स्तोत्र को जो व्यक्ति पढ़ता है या सुनता है, वह सम्पूर्ण कल्याण को प्राप्त करता है ।



# श्री प्राज्ञाष्टक - स्तोत्रम्-२

( विविधवृत्तेषु )

[ १ ]

प्राज्ञो ज्ञानगुणाकरो विजयतां, प्राज्ञं मुनीशं श्रये,
प्राज्ञेनापि जिनागमः सुविततः, प्राज्ञाय तस्मै नमः।
प्राज्ञादाप्त उदात्तसूक्ति निवहः, प्राज्ञस्य शुभ्रं यशः,
प्राज्ञे सन्ति विलक्षणा गुणगणाः, भो प्राज्ञ ! मामुद्धर ॥१॥

अर्थ—ज्ञान और गुणो की खान, प्राज्ञ गुरुदेव ! आपकी सदा जय हो। मै मुनियो के स्वामी प्राज्ञ गुरु का आश्रय-शरण लेता हूं। जिस प्राज्ञ गुरुदेव ने जैनागमो का स्वाध्याय कर धर्म का अतीव प्रचार-प्रसार किया है, उन प्राज्ञ गुरुदेव को मेरा अनन्त आस्था के साथ नमस्कार है। मैंने जिन प्राज्ञ गुरुदेव से श्रेष्ठ एव उदार सूक्तियों—सुवचनो का सग्रह प्राप्त किया है, उन प्राज्ञ गुरुदेव का स्वच्छ यश इस जगतीतल पर खूब फैला हुआ है। श्री प्राज्ञ गुरुदेव मे अनेक विलक्षण गुण विद्यमान है। ऐसे हे प्राज्ञ गुरुदेव !, आप मेरा उद्धार करे।

[ २ ]

पिता बालश्चन्द्रः, स्वजनहितकेन्द्रः शुचिमनाः,
सुशीला धर्मज्ञाः, तुलसि-जननी यस्य विदिता।
कुलाधारं धीरं, जिन - वचन - वीरं त्वजनयत्,
मुनिः स प्राज्ञर्षिः, सुकृतपथदर्शी भवतु मे ॥२॥

अर्थ—अपने पारिवारिक जनों के हित में धुरीण, पिता श्री बालचन्द्रजी एवं धर्मस्वरूप की ज्ञाता, शील व सदाचार में विख्यात माता श्री तुलसीबाई ने कुल के आधार भूत, धीर एव जिन-प्रवचन में वीर उत्साहवन्त, जिस पुत्र को जन्म दिया वे श्री प्राज्ञर्षि गुरुदेव मेरे सत्पथप्रदर्शक होवें।

[ ३ ]

यथा गर्जन् भाति, प्रवरगिरिशृंगे मृगपतिः,
तथा वादीन्द्राणां, भयमुपदधानो हृदि दृढम् ।
चकास्त्येषः क्षमा, गिरमुपदिशञ्छ्रावकगणे,
मुनिः स प्राज्ञर्षिः, सुकृतपथदर्शी भवतु मे ॥३॥

अर्थ—श्रेष्ठ पर्वत की शिखराणी पर गर्जता हुआ मृगपति सिंह जिस प्रकार सुशोभित होता है, उसी प्रकार जो श्रोतागणों में ऊचे पाट (आसन) पर बैठकर कल्याणकारी वाणी का उपदेश करते हुए एवं वादियों के हृदय में भी पराजय की दृढ़तम भीति को उत्पन्न करते हुए देदीप्यमान रहे है, वे श्री प्राज्ञर्षि गुरुदेव मेरे सत्पथ के प्रदर्शक होवे ।

[ ४ ]

स्वकीयाङ्गच्छेतृ-स्वधिति - वदनाय स्ववपुषा,
प्रदत्ते सौगन्ध्यं, ननु मलयजश्चोपकुरुते ।
तथा सौजन्येन, व्यवहरति दुष्टान् प्रति पुनः,
मुनिः स प्राज्ञर्षिः, सुकृतपथदर्शी भवतु मे ॥४॥

अर्थ—जिस प्रकार चन्दन अपने ही अग को छेदने वाले कुल्हाडे के मुख पर अपनी सुगन्ध देता हुआ उसका उपकार करता है, उसी प्रकार जो अपने प्रति दुर्व्यवहार करने वाले दुर्जनों के प्रति भी सौजन्य का सद्व्यवहार करते है, वे श्री प्राज्ञर्षि गुरुदेव मेरे सत्पथ के प्रदर्शक होवें ।

[ ५ ]

श्रमण - गुण - गरिष्ठं, जैन - सघे वरिष्ठम्,
सदय - हृदयवन्तं, सत्य - संधानवन्तम् ।
प्रशमरस - निमग्नं, सच्चिदानन्द - लग्नम्,
स्मर हृदय ! सुधीन्द्रं, प्राज्ञचन्द्रं मुनीन्द्रम् ॥५॥

अर्थ—हे मेरे हृदय ! तू श्रमण के गुणों से गौरवान्वित, जिन शासन में श्रेष्ठतम, दयापूर्ण हृदयवाले, सत्यप्रतिज्ञ अथवा सत्य प्रतिज्ञावालों की रक्षा करने वाले, उपशान्त रस में निमग्न, सच्चिदानन्दमय प्रभु-भक्ति में लीन एवं बुद्धिमानों में अग्रगण्य ऐसे श्री प्राज्ञचन्द्र मुनीन्द्र (गुरुदेव) का स्मरण कर ।

[ ६ ]

अस्मिन्नहो ! जगति कल्पमहीरुहस्तु,
दत्ते जनाय हृदि सस्मृतमेव वस्तु ।
योऽयाचतेऽप्युपदिशत्यपवर्ग - मार्गम्,
प्राज्ञं मुनीशमनिशं मनसा स्मरामि ॥६॥

अर्थ—इस जगतीतल पर मनुष्यों को कल्पवृक्ष केवल मन में स्मरण की हुई वस्तु ही प्रदान करता है किन्तु आश्चर्य है कि जो इससे भी बढ़कर बिना याचना किए ही मनुष्यो को मोक्ष मार्ग का उपदेश प्रदान करते हैं, ऐसे श्री प्राज्ञ मुनीश का मै अहर्निश मन से स्मरण करता हूं।

[ ७ ]

नाऽसौ सहस्रकिरणोऽपि यमन्धकारम्,
मोहाभिधेयमपनेतुमलं हृदिस्थम् ।
तच्छास्त्रपूतवचसा महसा हरन्तम्,
प्राज्ञ मुनीशमनिश मनमा स्मरामि ॥७॥

अर्थ—अन्तःकरण मे स्थित मोह नाम के जिस अन्धकार को हटाने मे यह हजारो किरणो का स्वामी सूर्य भी समर्थ नही है, उस अन्धकार को जिनागम से पवित्र अपने वचनो के तेज से दूर करने वाले श्री प्राज्ञ मुनीश का मै अहर्निश मन से स्मरण करता हू।

[ ८ ]

वाणीमनास्रवयुतां, गुणरत्नगुर्वीम्,
लघ्वीं तरीमिव भवार्णव - पार - कर्त्रीम् ।
नृभ्यः पुरः परमया मुदया दिशन्तम्,
प्राज्ञ मुनीश मनिश मनसा स्मरामि ॥८॥

अर्थ—जिन्होने ससार-सागर से पार करने वाली एक वाणी रूपी नौका मनुष्य के समक्ष उपस्थित की। जो वाणी रूपी नौका, नौका के समान ही आश्रवों से—छिद्रो से रहित अर्थात् सवर से युक्त एव निर्दोष–निश्छिद्र थी। नौका की भाति हल्की होते हुए भी गुण-गरिमा से भारी थी। इस प्रकार परम आह्लाद के साथ भव्य प्राणियो के सामने वाणी रूपी नौका को उपस्थित करने वाले श्री प्राज्ञ मुनीश का मैं अहर्निश मन से स्मरण करता हूं।

# श्री कुन्दन गुरु स्तुति

( वसन्ततिलका वृत्तम् )

[ १ ]

तुभ्यं नमोऽस्तु सततं मुनिवल्लभाय,
भव्याय भव्यजन - सत्पथदर्शकाय ।
क्षान्त्यादिसद्‌गुण - सुधारस - साधकाय,
श्री कुन्दनाय गुरवे सुप्रवर्तकाय ॥१॥

अर्थ—हे मुनियों के प्रिय ! भव्यात्मान् ! भव्यजनों के सत्पथ प्रदर्शक ! क्षमा आदि सद्‌गुणों के अमृत साधक ! संघ प्रवर्तक ! श्री कुन्दन गुरुदेव ! आपको निरन्तर नमस्कार हो ।

[ २ ]

श्रीप्राज्ञ - पद्धतिपरं परमं मुनीन्द्रम्,
श्रीजैनधर्ममनिश परिचिन्तयन्तम् ।
दैवज्ञ - तत्त्व - निपुणं जनबोधयन्तम्,
श्री कुन्दनं गुरुवरं सततं नमामि ॥२॥

अर्थ—श्री प्राज्ञ गुरुदेव द्वारा प्रदर्शित पथ पर अग्रसर रहने वाले मुनि श्रेष्ठ, प्रतिदिन जैन धर्म का चिन्तन करने वाले एवं भव्य प्राणियों को प्रबोधित करने वाले, ज्योतिर्विद्या में निपुण, श्री कुन्दन गुरुवर को मैं अहर्निश वन्दना नमस्कार करता हूं ।



# श्री सोहन-गुरु श्लोक त्रयीः—

( वसन्त तिलका वृत्तम् )

[ १ ]

तुभ्यं नमोऽस्तु जिन - शासन - भास्कराय,
भव्याय भव्यजनतोन्नति - तत्पराय ।
सज्ज्ञान - दर्शन - चरित्र - समुन्नताय,
श्री सोहनाय गुरवे श्रुत-सागराय ।। १ ।।

अर्थ—हे जिन शासन भास्कर ! भव्यपुरुष ! भव्य प्राणियो की समुन्नति में तत्पर ! सम्यग्ज्ञान-दर्शन व चारित्र से समुन्नत ! श्रुतज्ञान के सागर ! श्री सोहन गुरुदेव ! आपको श्रद्धा पूर्वक हमारा नमस्कार हो ।

[ २ ]

तुभ्यं नमोऽस्तु करुणा - वरुणालयाय,
सज्ज्ञान - बुद्धि - वरदाय जितेन्द्रियाय ।
सौभाग्य भाग्यगुण रत्नकरण्डकाय,
श्री सोहनाय गुरवे शिव साधकाय ।। २ ।।

अर्थ—हे करुणा के सागर ! श्रेष्ठ ज्ञान और बुद्धि के वरदाता ! जितेन्द्रिय ! सौभाग्य एवं श्रेष्ठ गुणों के करण्डक (पेटी) स्वरूप ! हे मोक्ष-मार्ग के साधक ! श्री सोहन गुरुदेव ! आपको श्रद्धा पूर्वक हमारा नमस्कार हो ।

[ ३ ]

तुभ्य नमोऽस्तु कमलामल - लोचनाय,
क्रोधादिताप - शमिताय, शुभाशयाय ।
सद्धर्म - मार्ग - विधि देशन - देशकाय,
श्री सोहनाय गुरवे सुप्रवर्तकाय ।। ३ ।।

अर्थ—हे निर्मल पद्मलोचन ! क्रोधादि के ताप को उपशान्त करने वाले ! अच्छे आशय (विचार) वाले ! तथा श्रेष्ठ धर्म के मार्ग की विधि के उपदेशक ! संघ प्रवर्तक ! श्री सोहन गुरुदेव ! आपको श्रद्धा पूर्वक हमारा नमस्कार हो ।

卐 卐

# मुनि - महिमाष्टकम्

( उपजाति - वृत्तम् )

[ १ ]

ये कांस्यपात्रोदकवन्नलिप्ता,
ये शख सकाशनिरञ्जनाश्च ।
येषां गतिर्जीव समाऽनिरूद्धाः,
मुनीनहं तान् शरण प्रपद्ये ।।१।।

अर्थ—जो मुनि कांसी के पात्र की भांति निर्लिप्त, शख के समान निरजन एवं निर्मल हैं। तथा जिनकी गति आत्मा के समान अनिरूद्ध-प्रतिबन्ध से रहित है, उन मुनियों का मैं शरण ग्रहण करता हूं।

[ २ ]

आकाश - नीकाश - निराश्रया ये,
समीरवद् ये प्रतिवन्ध - मुक्ताः ।
ये शारदीनोदसमान - चेता.,
मुनीनहं तान् शरणं प्रपद्ये ।। २ ।।

अर्थ—जो मुनि आकाश की भांति आश्रय रहित एव वायु की भांति अप्रतिबन्ध है तथा शरद्‌ऋतु के जल के समान निर्मल चित वाले है, उन मुनियों की मैं शरण ग्रहण करता हूं।

[ ३ ]

ये पद्मपत्रोपम - लेपमुक्ताः,
गुप्तेन्द्रियाः कच्छपवद् विरक्ताः ।
ये मुक्तबन्धाः खगवद् विहारे,
मुनीनहं तान् शरण प्रपद्ये ।। ३ ।।

अर्थ—जो कमल के पत्त की तरह लेप मुक्त है तथा कछुए की तरह गुप्तेन्द्रिय हैं, पक्षी की तरह ग्रामानुग्राम विहार करने में वन्धन रहित होकर विचरते हैं, उन मुनियों की मैं शरण ग्रहण करता हूं।

[ ४ ]

एकाश्च ये खड्गि - विषाणतुल्याः,
भारण्ड - पक्षीव सदाऽप्रमत्ताः ।
वे दन्तिवत्कर्म - विभेद - दक्षाः,
मुनीनहं तान् शरणं प्रपद्ये ।। ४ ।।

अर्थ—जो खड्गी (गंडा) के सीग की तरह एकाकी है, भारण्ड पक्षी को तरह सदा अप्रमत एव हस्ती की तरह कर्मो का भेदन करने में दक्ष है, उन मुनियों की मै शरण ग्रहण करता हूं ।

[ ५ ]

धौरेयवद् व्योढुमलं धुरं ये,
मृगेन्द्रवद् भूरि परीषहॉश्च ।
सोढुं सदा शास्वतसत्ववन्तो,
मुनीनह तान् शरण प्रपद्ये ।। ५ ।।

अर्थ—जो मुनि धोरो बैल की भाति धर्म-धुरा को वहन करने में समर्थ हे । सिह की भाति अनेक परिषहो (कष्टो) की सहने में प्रबल शक्तिशाली है, उन मुनियो की मै शरण ग्रहण करता हूं ।

[ ६ ]

ये निश्चला मेरु - नगेन्द्रतुल्याः,
अगाध पाथोनिधिवद् गभोराः ।
तथेन्दुवच्छीतल - सौम्य - रूपाः,
मुनीनह तान् शरणं प्रपद्ये ।। ६ ।।

अर्थ—जो मुनि सुमेरु पर्वत की तरह अडिग एवं अगाध समुद्र की तरह गम्भीर तथा चन्द्रमा की तरह शीतल और सौम्य रूप है, उन मुनियों की मै शरण ग्रहण करता हूं ।

[ ७ ]

तेजस्विनो भानुसमप्रभावा:,
ये जातरूपोपम - निर्मलाश्च ।
सर्वंसहा ये वसुधेव धीरा:,
मुनीनहं तान् शरण प्रपद्ये ।। ७ ।।

अर्थ—जो मुनि सूर्य के समान तेजस्वी, प्रतिभा सम्पन्न एव स्वर्ण के समान निर्मल तथा पृथ्वी के समान सहनशील है, उन मुनियों की मै शरण ग्रहण करता हूं ।

[ ८ ]

सुदीप्तिमन्तोऽतितरामजस्रम्;
जाज्वल्यमानज्वलनोपमा: ये ।
ये पूजनीयाश्च कषायमुक्ता,
मुनीनह तान् शरण प्रपद्ये ।। ८ ।।

अर्थ—जो मुनि जाज्वल्यमान अग्नि के समान निरन्तर अतीव दीप्तिमान एवं पूजनीय है तथा समस्त कषाय भावों से मुक्त है, उन मुनियो की मैं शरण ग्रहण करता हूं ।

## प्रशस्ति

श्री प्राज्ञपच्चेटक - वल्लभेन,
दृष्टा यथा सूत्रकृतांग सूत्रे ।
स्कन्धे द्वितीयेऽध्ययने द्वितीये,
वद्धास्तथैते सुगुणास्तु पद्ये ।। ९ ।।

अर्थ—सूत्र श्री सूत्रकृतांग के द्वितीय स्कन्ध एव द्वितीय अध्ययन में मुनियों के विषय में जिस प्रकार इन सद्‌गुणों की उपमाओं को देखा, उसी प्रकार प्राज्ञ चरण किंकर वल्लभ मुनि ने पद्य मे निवद्ध किया है ।

# श्री स्वाध्याय सप्तकम्

( अनुष्टुब् - वृत्तम् )

[ १ ]

स्वाध्यायः सविता बुद्धेः, स्वाध्यायोऽज्ञान - नाशकः ।
स्वाध्यायः परमो लाभः, स्वाध्यायः कर्मवारकः ।। १ ।।

अर्थ—स्वाध्याय ही बुद्धि का उत्पादक है, अज्ञान का नाशक है, आत्मा के लिए परम लाभ है, एवं सभी कर्मों के वन्धनों को मिटाने वाला है।

[ २ ]

स्वाध्यायः कामधेनुर्हि, स्वाध्यायः सुरपादपः ।
स्वाध्याय. परमो योगः, स्वाध्यायो नन्दनं वनम् ।। २ ।।

अर्थ—निश्चय से स्वाध्याय ही कामधेनु है, कल्पवृक्ष है, उत्कृष्ट योग-साधना है एव नन्दन वन है।

[ ३ ]

स्वाध्यायः परमानन्द., स्वाध्यायो गुणसागरः ।
स्वाध्याय. सर्वकल्याण, स्वाध्यायो भवतारकः ।। ३ ।।

अर्थ—स्वाध्याय ही परम आनन्द है, गुणो का सागर है, सभी प्राणियो का कल्याणकर है एव ससार से तिराने वाला है।

[ ४ ]

स्वाध्यायः परमा शाति, स्वाध्याय सुखमन्दिरम् ।
स्वाध्याय परम ध्यान, स्वाध्यायः परम शिवम् ।। ४ ।।

अर्थ—स्वाध्याय परम शान्ति है, सुख का स्थान है, परम ध्यान एव परम कल्याण है।

[ ५ ]

स्वाध्यायः परमं तत्व, स्वाध्यायः परम तपः ।
स्वाध्यायः परम ज्योतिः, स्वाध्यायः परम पदम् ॥ ५ ॥

अर्थ—स्वाध्याय ही परम तत्व है, परम तप है, श्रेष्ठ ज्योति है एव परम पद है।

[ ६ ]

स्वाध्यायः परमं ज्ञानं, स्वाध्यायः परमो गुरु ।
स्वाध्यायो मोक्ष - निश्रेणिः, स्वाध्यायः परम व्रतम् ॥ ६ ॥

अर्थ—स्वाध्याय ही परम ज्ञान है, परम गुरु है, मोक्ष की सीढ़ी है एवं श्रेष्ठ व्रत है।

[ ७ ]

स्वाध्यायो विघ्नहर्ता च, स्वाध्यायः सर्वसौख्यद ।
स्वाध्यायश्चरम ध्येय, स्वाध्यायोऽनुत्तरा तरिः ॥ ७ ॥

अर्थ—स्वाध्याय ही सभी विघ्नो का हरण करने वाला एवं सभी सुखो का देने वाला है। जीवन का अन्तिम ध्येय एवं ससार से पार होने मे श्रेष्ठ नौका है।

## प्रशस्ति

श्रीमत्प्राज्ञ - गुरोः शिष्यः, विद्यार्थी वल्लभो मुनिः ।
लिलेख चरणोपान्ते, शुभं स्वाध्यायसप्तकम् ॥ ८ ॥

अर्थ—श्री प्राज्ञ गुरु के शिष्य विद्यार्थी वल्लभ मुनि ने गुरु चरणो मे बैठकर इस स्वाध्याय-सप्तक को लिखा।

—卐—

# श्री दर्शना-पंचविंशति

( अनुष्टुब्वृत्तम् )

[ १ ]

दर्शने ! शृणुमद्वाक्य, मुन्नति यदि वाञ्छसि ।
अगीकुर्याः गुरोराज्ञा, गुरुरेव हि देवता ।।१।।

अर्थ—हे दर्शने ! यदि तू अपने जीवन में उन्नति चाहती है, तो मेरे वाक्य को सुन । तू सदा गुरुवर की आज्ञा को स्वीकार करना क्योंकि गुरु ही परम देवता है ।

[ २ ]

दर्शने ! कुरुसद्भक्त्या, गुरूणा विनय यतः ।
विद्या हृद्याऽपि सावद्या, बिना विनयसम्पदम् ।।२।।

अर्थ—हे दर्शने ! श्रद्धा और भक्ति पूर्वक गुरुओं का विनय करना । क्योंकि अच्छी विद्याएं भी बिना विनय सम्पदा के पापयुक्त हो जाती है ।

[ ३ ]

दर्शने ! स्नेहसूत्राणि, सदा वर्धस्व यत्नत. ।
यैश्च सद्गुणपुष्पाणा, स्रजं स्रष्टुं हि शक्नुयाः ।।३।।

अर्थ—हे दर्शने ! यत्नपूर्वक तू हमेशा सबके साथ स्नेहसूत्रों को बढ़ाते रहना । जिन स्नेह सूत्रों के द्वारा सद्गुण रुपी फूलो की माला बनाने मे तू समर्थ हो सके ।

[ ४ ]

दर्शने ! नवतत्वानां, श्रद्धानं कुरु चात्मना ।
श्रद्धां बिना कदापि क्व, कार्यं सिद्धमभूत् किमु ।।४।।

अर्थ—हे दर्शने ! तू आत्मा की अनन्त आस्था के साथ नवतत्वो की सच्ची श्रद्धा करना क्योंकि श्रद्धा के बिना कही पर भी कभी भी कार्य सिद्ध हुआ है क्या ?

[ ५ ]

दर्शने ! नवतत्वानां, ज्ञानं प्राप्नुहि निर्मलम् ।
तत्त्व ज्ञानं हि जीवानां, लोकद्वय - सुखावहम् ।।५।।

अर्थ—हे दर्शने ! तू नवतत्वों के निर्मल ज्ञान को प्राप्त कर क्योकि तत्वों का ज्ञान ही जीवों को इस लोक और परलोक में परम सुख का देने वाला है ।

[ ६ ]

दर्शने ! ज्ञानपीयूष, शास्त्राम्भोधिसमुद्भवम् ।
पीत्वा विनय भावेन, प्राप्नुयास्त्वरयाऽमृतम् ।।६।।

अर्थ—हे दर्शने ! आगम रुपी सागर से उत्पन्न ज्ञानामृत को विनय भाव से पीकर तू शीघ्र ही अमृतत्व को प्राप्त करना ।

[ ७ ]

दर्शने ! ज्ञान सद्भावे, कर्म स्याद् विकृतं कथम् ।
नेत्रे ह्युन्मीलिते कोऽपि, कूपे किन्नु पतिष्यति ।।७।।

अर्थ—हे दर्शने ! ज्ञान के सद्भाव में विकृत कर्म कैसे हो सकते हैं ? नेत्रो के खुले रहते हुए क्या कोई भी कूप में गिरेगा ? अर्थात् नही ।

[ ८ ]

दर्शने ! शुद्ध आत्माऽयं, स्वभावेन सदा परम् ।
परभावानुगामी सन् , संसारेऽस्मिन् भ्रमत्यहो ।।८।।

अर्थ—हे दर्शने ! यह आत्मा अपने स्वभाव से सदा-सदा परम विशुद्ध है। दुःख है कि परभावों का अनुगामी होकर यह आत्मा संसार में परिभ्रमण कर रहा है।

[ ९ ]

दर्शने ! कर्मभिर्युक्त - मात्मान कुरु निर्मलम् ।
अयो हि स्वर्णवर्णत्वं, कल्पते रसयोगतः ।।९।।

अर्थ—हे दर्शने ! कर्मों से युक्त इस आत्मा को तू निर्मल बना क्योंकि रसायनो के योग से लोहा भी स्वर्णत्व को प्राप्त होता है।

[ १० ]

दर्शने ! ज्ञानमात्रेण, शुद्धिर्न स्यात् क्रियां बिना ।
वारिशोधकचूर्णस्य, नाम्ना वारि न शुध्यति ।।१०।।

अर्थ—हे दर्शने ! आचरण के विना अकेले ज्ञान से कभी आत्मा की मुक्ति नही हो सकती है। जैसे जलशोधक-चूर्ण का नाम लेने से या उसका ज्ञान करने मात्र से जल शुद्ध नही होता।

[ ११ ]

दर्शने ! मा कृथा कोपं, कदापि कुपितं प्रति ।
सर्पिष्पातेन सप्तार्चिरुदर्चिः सुतरां भवेत् ।।११।।

अर्थ—हे दर्शने ! कुपित हुए व्यक्ति के प्रति कभी [illegible] । क्योंकि घी की आहुति देने से अग्नि और अधिक प्रज्वलित होती है।

[ १२ ]

दर्शने ! वीक्ष्य दौर्गत्यं, रुषा रोष त्यज त्वरम् ।
सर्पशका बिभीता हि, सर्पास्ये करदायिनः ॥१२॥

अर्थ—हे दर्शने ! क्रोध से क्रोधी व्यक्ति की हुई दुर्गति को देखकर जल्दी ही क्रोध को छोड़ देना । सर्प की शंका से डरे हुए व्यक्ति क्या सर्प के मुंह मे हाथ डालते है ? अर्थात् नहीं ।

[ १३ ]

दर्शने ! शान्तभावेन, सर्वैरुक्त सहस्व भोः ।
येन ते वशवैशिष्ट्य, भूयाद् वर्ण्य प्रशान्तमत् ॥१३॥

अर्थ—हे दर्शने! सदा सभी के कहे हुए को तू शान्तभाव से सहन करना, जिससे तेरे प्रशान्त वश की विशिष्टता प्रशसनीय बन सके ।

[ १४ ]

दर्शने ! मा कृथाः स्पर्धा, धर्मघ्नी गुणदाहिकाम् ।
न ह्यत्र रोचते न्याय्यमीर्ष्यादूषित-चेतसे ॥१४॥

अर्थ—हे दर्शने ! धर्म को नष्ट करने वाली एवं सद्गुणो को जलाने वाली ईर्ष्या को अपने जीवन मे कभी भी मत करना, क्योकि ईर्ष्या से दूषित चित्त वाले व्यक्ति को न्याय-नीति आदि रुचिकर नहीं होती है ।

[ १५ ]

दर्शने ! धैर्यमापत्तौ, क्षमामभ्युदये पुनः ।
सभायां पाटव वाचो, धारयन्ति हि सज्जनाः ॥१५॥

अर्थ—हे दर्शने ! आपत्ति के समय धैर्य को, उन्नति के समय मे क्षमा को, एव सभा मे वाणी की चतुरता को सज्जन पुरुष ही धारण करते है ।

[ १६ ]

दर्शने ! आश्रवान् रुन्द्धि, छिन्द्धि पाश कषायजम् ।
विद्धि विद्ध्यात्मनो रुप, येन सिद्धिर्भवेज्जनोः ।।१६।।

अर्थ—हे दर्शने ! आत्मा मे आने वाले आश्रवों को रोक तथा कषाय भाव से उत्पन्न कर्म बन्धनों को काट, एव अपनी आत्मा के स्वरुप को पहचान, जिससे इस जन्म को प्राप्त करने की सफलता प्राप्त कर सके ।

[ १७ ]

दर्शने ! बन्धचातुष्क, भवभ्रामककर्मणाम् ।
विज्ञाय भिन्द्धि तज्जाल, कर्ममुक्तो निरजनः ।।१७।।

अर्थ—हे दर्शने ! ससार में परिभ्रमण कराने वाले कर्मो के प्रकृति, स्थिति, अनुभाव (रस) एव प्रदेश, इन चार प्रकार के बन्धनों को जानकर इनकी जाल को काट ! तोड ! क्योंकि कर्मजाल से मुक्त आत्मा ही निरजन, निराकार एवं शुद्ध परमात्मा है ।

[ १८ ]

दर्शने ! छद्मतां त्यक्त्वा, ऋजुभावमवाप्नुहि ।
निर्ग्रन्थश्चार्जवोपेतः, अर्हतोऽपि हि वल्लभः ।।१८।।

अर्थ—हे दर्शने ! कपट भाव को छोड़कर सदा सरल भाव को प्राप्त करना, क्योकि सरलता से युक्त निर्ग्रन्थ अरिहन्त को भी प्रिय होता है ।

[ १९ ]

दर्शने ! ऋजुभावोऽय, वालः कस्य न वल्लभः ।
नृपोऽप्यके तमादाय, मोदते तद्विनोदतः ।।१९।।

अर्थ—हे दर्शने ! सरलता-प्राप्त यह वालक किसको वल्लभ (प्रिय) नही है । उस बालक को तो राजा भी अपनी गोदी मे वैठाकर उसके विनोद से प्रसन्न होता है ।

[ २० ]

दर्शने ! जैनधर्मोऽयं, शोभते सरले हृदि ।
सिंहिन्यास्तु पयो नित्यं, स्वर्णपात्रे विराजते ॥२०॥

अर्थ—हे दर्शने ! यह जैन धर्म सरल हृदय में ही सुशोभित होता है। जैसे सिंहनी का दूध हमेशा स्वर्ण पात्र में ही शोभा पाता है।

[ २१ ]

दर्शने ! क्षान्तिधर्मादीन् वृणीष्व दशसंख्यकान् ।
अमीषां धारणेनैव, जीवो मोक्षपथं व्रजेत् ॥२१॥

अर्थ—हे दर्शने ! क्षमा, मार्दव, आर्जव आदि दस प्रकार के यति धर्म को धारण कर। इन दस धर्मों को धारण करने से ही आत्मा मोक्ष पथ पर बढ़ सकता है।

[ २२ ]

दर्शने ! स्वीकुरु प्रेम्णा, अहिंसादि महाव्रतान् ।
वाञ्छितार्थे हि कातर्यं, वशिना नैव दृश्यते ॥२२॥

अर्थ—हे दर्शने ! अहिसा आदि महाव्रतो को प्रेम से स्वीकार करके पालन किए जा। क्योंकि इच्छित अर्थ की प्राप्ति मे श्रेष्ठ पुरुषो की कायरता नही देखी जाती है, अर्थात् श्रेष्ठ पुरुष प्रमाद नही करते हैं।

[ २३ ]

दर्शने ! पक्वकुम्भो हि, जलं धातुमलं भवेत् ।
एवं प्रशमभावस्थो, धर्मं धारयितुं क्षमः ॥२३॥

अर्थ—हे दर्शने ! जैसे पका हुआ घड़ा पानी ग्रहण करने मे समर्थ होता है, उसी प्रकार प्रशम भावो मे स्थित आत्मा ही धर्म को धारण करने मे समर्थ होता है।

[ २४ ]

दर्शने ! कुरु सत्संग - मसत्संगं विहाय वै ।
पद्मपत्रस्थित तोयं, धत्ते मुक्ताफलश्रियम् ।।२४।।

अर्थ—हे दर्शने ! असत् संग (कुसंग) को छोड़कर सत्संग कर। क्योंकि कमल के पत्ते पर पड़ा हुआ पानी भी मोती जैसी शोभा को प्राप्त करता है :

[ २५ ]

दर्शने ! ऽध्ययनं कुर्याः, कालेऽस्मिन्नप्रमादतः ।
न ह्यकालकृतो यत्नो, भूयानपि फलप्रदः ।।२५।।

अर्थ—हे दर्शने ! इस अध्ययन के समय में अप्रमत्त होकर अध्ययन किए जा, क्योकि अकाल मे किया हुआ महान् प्रयत्न भी फलवान नही होता।

[ २६ ]

दर्शने ! सत्यपथ्यानि, वाक्यानीमानि मानसे ।
हितानि साधुनोक्तानि, मुदा धारय धारय ।।२६।।

अर्थ—हे दर्शने ! साधु के द्वारा कहे गए इन सत्य, पथ्य एवं हितकारी वचनो को अपने मन मे प्रसन्न होकर धारण करते रहना।

[ २७ ]

'प्राज्ञकिकर' नामाख्यो, विद्यार्थी वल्लभो मुनिः ।
शिक्षामिषेण सचक्रे, दर्शनापचविशतिम् ।।२७।।

अर्थ—प्राज्ञकिकर नाम वाले विद्यार्थी वल्लभमुनि ने शिक्षा के बहाने शिष्या साध्वी दर्शनलता के नाम का आधार लेकर इस दर्शनापचविशति की रचना की।



# 卐 विविधोपदेशकाः श्लोकाः 卐

## – विद्यार्थि - जीवनम् –

(अनुष्टुब्-छन्द)

[ १ ]

सुप्रभातं मनुष्याणां, स्मृतं विद्यार्थि - जीवनम् ।
सर्वांगीणविकासोऽस्य, सुखं साध्योऽत्र सम्मतः ।। १ ।।

अर्थ—विद्यार्थी-जीवन ही मनुष्यों के विकास का सुप्रभात है । यही पर जीवन का सर्वांगीण विकास सुखपूर्वक सिद्ध किया जाना माना गया है। इस समय के गृहीत सुसस्कार ही जोवन के भविष्य को समुज्ज्वल बनाते हैं।

## वाचा-मुधा-जल्पनम्

( शार्दूलविक्रीड़ितम् )

[ २ ]

कोप मा कुरुतेति पाण्डुकुरुजान्, वाक्यं व्यलेखीद् गुरुः,
भूयश्चाऽज्ञपयत् स्मरन्तु झटिति, त्वेक बिना तैः स्मृतम् ।
दण्डाप्तावपि सस्मितो निज - गुरुं प्रेम्णाऽऽह धर्मात्मजः,
नाऽर्थश्चेदवधारितो हृदि तदा, वाचा मुधा जल्पनम् ।। २ ।।

अर्थ—कृपाचार्य ने एक बार पांच पाण्डवों एव एक सौ कुरु-पुत्रो यों १०५ विद्यार्थियो को 'क्रोध मत करो' यह वाक्य लिखकर याद करने को कहा। अकेले युधिष्ठिर के अतिरिक्त सभी ने वाक्य यादकर गुरु को सुना दिया। जब युधिष्ठिर को गुरु ने वाक्य सुनाने के लिए कहा तो वे बोले मुझे याद नही हुआ गुरुदेव ! तब उन्हें दण्ड दिया गया, डडे से पीटा गया । वे हसते गए और बोले अब पाठ याद हो गया है। गुरुजी ने बडे प्रेम से पूछा- शिष्य ! जब मैं तुझे मार रहा था तब तू क्यों हँस रहा था ? युधिष्ठिर बोले- मैं यदि मुंह से सुना देता कि-क्रोध मत करो और दण्ड-प्राप्ति के समय क्रुद्ध हो जाता तो मेरा मुंह से बोलना क्या महत्व रखता ? अतः जब तक पाठ को जीवन मे नही उतारा गया तब तक मुंह से सुनाने मे क्या लाभ ? गुरु कृपाचार्य युधिष्ठिर के इस उत्तर से अतीव प्रसन्न थे एवं उनका समुज्ज्वल भविष्य उनके ज्ञान-चक्षुओं में स्पष्ट दिखाई दे रहा था।

## जीवनस्य सारम्

( उपजाति वृतानि )

[ ३ ]

पिष्यन्ति पुष्पाणि विलोक्य केश्चित्,
पृष्ट भवद्भिश्चरित किमेनः ।
विषह्यते दुस्सह - वेदनैषा,
तदाऽवदन् तेषु सुमानि कानि ॥३॥

अर्थ—पिसे जा रहे फूलों को देखकर उनसे पूछा—तुमने ऐसा कौनसा पाप किया कि इस प्रकार की यह दुस्सह वेदना तुम्हें भोगनी पड रही है। यह सुनकर उन फूलो में से कुछ ने इस प्रकार उत्तर दिया—

[ ४ ]

स्वभावमेतत् खलु मानवानाम्.
सहानुभूतिं परिदर्शयन्ति ।
आर्त्तैः जनैः सार्धमनुत्तमा ते,
कुर्वन्ति चेर्ष्यां सुखिभिर्मनुष्यैः ॥४॥

अर्थ—दुःखी प्राणियो के साथ सहानुभूति दिखाना मानवों का स्वभाव रहा है परन्तु न जाने इस श्रेष्ठ प्रकृति मे यह विकृति कहां से आकर घुस गई कि वे सुखी प्राणियों के साथ ईर्ष्या भी किया करते हैं अर्थात् हमारा हँसना, खिलना लोगो से नही सहा गया और हमें पीसने को तैयार हो गए।

[ ५ ]

शेषाणि पुष्पाण्यवदन तदेत्थम्,
ध्यानेन वाच श्रृणु न शुभेच्छो !
सज्जीवनस्येदमुशन्ति सारम्,
त्यजेदसून् लोक हिताय नित्यम् ॥५॥

अर्थ—शेष रहे फूलों ने कहा—हे शुभेच्छो ! आप हमारी बात को जरा ध्यान से सुनिए। श्रेष्ठ जीवन का यही सार है कि लोक-कल्याण के लिए अपने प्राणों को सदा प्रसन्नता पूर्वक छोड़ दे।

## — एकता —

( शार्दूल-विक्रीडित-वृत्तम् )

[ ६ ]

एकस्मिन् समये कुठार - भरिता, गन्त्रीं समागच्छतीम्,
दृष्ट्वा सरूरुदुः समे विटपिनः, किं भाविनः साम्प्रतम् ।
तेषामारुदितं निशम्य खलु तान्, प्रप्रच्छ वृद्धस्तरुः,
अस्मिच्छान्तवने सुषीमपवने, क्रन्दनस्य किं कारणम् ।।६।।

अर्थ—एक समय कुल्हाड़ों से भरी गाड़ी को आती हुई देखकर सभी वृक्ष रोते हुए अपने भविष्य के प्रति आशंकित हो गए कि अब हमारा क्या होगा ? उनके रुदन को सुनकर एक वृद्ध तरु ने उनको पूछा—इस शीतल पवन युक्त शान्त वन में रोने का क्या कारण है ?

[ ७ ]

( अनुष्टुब् - वृत्तम् )

तदा ते पादपाः सर्वेऽवदन् संलक्ष्य गन्त्रिकाम् ।
अस्यां भृताः कुठाराश्च, छेत्स्यन्त्यस्मान्न संशयः ।। ७ ।।

अर्थ—तब सभी वृक्षों ने आती हुई गाड़ी की ओर इशारा करते हुए कहा—इसमें भरे हुए कुठार हमे काट डालेंगे इसमें अब कोई संशय नहीं है ।

[ ८ ]

( वसन्त तिलका वृत्तम् )

ईषद् विहस्य विटपी ह्यवदत् अवदत् स वृद्धः,
भो पादपाः बिभित मा खलु सार्धमेतैः ।
यावन्न नो ह्यनुलगिष्यति बन्धुकाष्ठः,
तावल्लवो व्यथयितुं न कदापि शक्ताः ।।८।।

अर्थ—तब उस वृद्ध तरु ने कुछ हँसते हुए कहा—हे वृक्षो ! तुम अपने हृदय में किंचित् भी भय नहीं करो । जब तक अपना भाई (लकड़ी का डंडा) इनके साथ नहीं लगेगा तब तक ये कुठार हमें व्यथित करने में कदापि समर्थ नहीं हो सकेंगे ।

卐

खण्ड २

# हिन्दी छन्द विभाग

वल्लभ मुनि
"प्राशकिकर"

卐 प्राज्ञाष्टक स्तोत्र–१ (पद्यानुवाद)

卐 प्राज्ञ वन्दनाष्टक

卐 श्लोकत्रयो पद्यार्थ

卐 देव - महिमा - पंचक

卐 गुरु - महिमा - पंचक

卐 प्रश्न + उत्तर

卐 श्रमण के मनोरथ

卐 श्रावक के लक्षण

卐 ज्ञान चालीसा

卐 रतन शिक्षा - पच्चीसी

卐 कमल - शिक्षा - पच्चीसी

卐 प्रेमाष्टक

卐 वल्लुड़ा रा सोरठा

卐 शिक्षा दशक

卐 सम्बोधना - पद्यानुवाद

# श्री प्राज्ञाष्टक स्तोत्र

( वसन्त तिलका वृत्तम् )

(प्राज्ञाष्टक-१ का पद्यानुवाद)

श्री श्री जिनेन्द्रगण - सेवित शुद्ध दीक्षा,
आनन्ददा अथ च मंगल कारिणी को ।
स्वीकार के सफलता जिसने मिला ली,
श्री 'प्राज्ञचन्द्र' गुरू को विधि से नमूं मैं ॥ १ ॥

देखो प्रभाव तप का जिनके पदों में,
आके नमा मुदित हो वनराज नामी ।
जाता हुआ तज गया अघ - कार्य को जो,
श्री 'प्राज्ञचन्द्र' गुरू को विधि से नमूं मैं ॥ २ ॥

थे धीर किन्तु दिल में जिसने दया ला,
भोले निरीह पशु की बलि को रुकाया ।
है धर्म उत्तम दया उनको सुझाया,
श्री 'प्राज्ञचन्द्र' गुरू को विधि से नमूं मैं ॥ ३ ॥

दे दीनछात्र - विधवादि - सहायतार्थ,
श्रद्धालु भक्तजन को उपदेश सच्चा ।
मोहान्ध मर्त्यगण को जिसने जगाया,
श्री 'प्राज्ञचन्द्र' गुरू को विधि से नमूं मैं ॥ ४ ॥

मिथ्यात्व के तिमिर में भटके जनों को;
दे बोध मोक्ष पथ का परिचै कराके ।
"स्वाध्यायि सघ" अति उत्तम योजना दी,
श्री 'प्राज्ञचन्द्र' गुरू को विधि से नमूं मैं ॥ ५ ॥

हैं ज्येष्ठ साधु गुण से यति धर्मधारी,
हैं श्रेष्ठ जो मदन के विजयी जनों में।
निष्ठा सदा जन हिताय रही जिन्हों की,
श्री 'प्राज्ञचन्द्र' गुरू को विधि से नमूं मैं ॥ ६ ॥

आत्मा सरोवर जहां जल शुद्ध - बुद्धि,
सोहे सरोज जिसमें सुविवेक वाले ।
इत्यादि शुद्ध गुण से अति शोभितात्मा,
श्री 'प्राज्ञचन्द्र' गुरू को विधि से नमूं मैं ॥ ७ ॥

संसार सिन्धु जल में गिरते जनो को,
सज्ज्ञान, दर्शन, विशुद्ध चरित्र वाला।
श्री मोक्ष मार्ग जिसने कृपया बताया,
श्री 'प्राज्ञचन्द्र' गुरू को विधि से नमूं मैं ॥ ७ ॥

## —प्रशस्ति—

श्री प्राज्ञाष्टक स्तोत्र यह, वल्लभ ने धर प्यार ।
रचा साल सतरह सुखद, विक्रम दोय हजार ॥१॥
यशकारी इस स्तोत्र को, शुद्ध भाव हिय लाय ।
पढ़े सुने जो भक्तजन, परमा गति वह पाय ॥ २ ॥



# श्री प्राज्ञ वन्दनाष्टक

( द्रुत विलम्बित छन्द )



शशि समान तवाऽऽनन देखि के, हरस से युत हो मम चेतना ।
करत हू विधि से पद पद्म मे, सतत प्राज्ञ मुनीश्वर ! वन्दना ।। १ ।।

जनक है तुमरे सिरी बालजी, तुलसि मा प्रिय हो सुत लालजी ।
शिशु समै शुद्ध संयम धारना, सतत प्राज्ञ मुनीश्वर ! वन्दना ।। २ ।।

जगत के जन देख हि धैर्यता, कहत ये गुरू है धरणी समा ।
निपुण जो रतनत्रय मे घना, सतत प्राज्ञ मुनीश्वर ! वन्दना ।। ३ ।।

नयन से लख के तव सौम्यता, चरण मे हरि आकर के झुका ।
प्रमुद हो मुख से गुण गावना, सतत प्राज्ञ मुनीश्वर ! वन्दना ।। ४ ।।

पशु गलो पर तेग कटारियां, चलत है सुन तत्र पधारिया ।
पशु बलि चट बन्द करावना, सतत प्राज्ञ मुनीश्वर ! वन्दना ।। ५ ।।

विगत दूषण, भूषण सघ के, तिरण - तारण मानव वृन्द के ।
पतित - पावन हो अघ टारना, सतत प्राज्ञ मुनीश्वर ! वन्दना ।। ६ ।।

कठिन पच महाव्रत धार के, सकल पातक को परिहार के ।
श्रमण पूज्य बने मन भावना, सतत प्राज्ञ मुनीश्वर ! वन्दना ।। ७ ।।

बहुत ही गुण के निधि आप हो, कहत 'वल्लभ' पार न पा सके ।
प्रिय पदाम्बुज ! सागर तारना, सतत प्राज्ञ मुनीश्वर ! वन्दना ।। ८ ।।



# श्लोक त्रयी पद्यार्थ

( तर्ज — जिसने राग द्वेष कामादिक )

卐

नमस्कार होवे गुरुवर को, जो जिन शासन भास्कर हैं।
भव्य दिव्य है, भव्य जनो की, उन्नति मे जो तत्पर है।
रत्नत्रय से सदा समुन्नत, ज्ञान सिधु हैं आत्माराम।
पूज्य प्रवर्त्तक सोहन गुरू को, सविधि वन्दना करें प्रणाम ॥१॥

नमस्कार होवे गुरुवर को, जो करुणा के सागर हैं।
ज्ञान बुद्धि के वरदाता है, इन्द्रिय जेता नागर है।
सुभग भाग्य गुण रत्नाकर जो, शिव साधक हैं संघ ललाम।
पूज्य प्रवर्त्तक सोहन गुरू को, सविधि वन्दना करे प्रणाम ॥२॥

नमस्कार होवे गुरुवर को, निमल पकज लोचन है।
क्रोधादिक से दूर, शुभाशयवान, भवोदधि मोचन है।
वीतराग पथ के उपदेशक, सघ शिरोमणि हैं अभिराम।
पूज्य प्रवर्त्तक सोहन गुरू को, सविधि वन्दना करें प्रणाम ॥३॥



# देव महिमा पंचक

( — सोरठा — )

केवल ज्ञान अनन्त, केवल दर्शन धारके ।
पायो पद अरिहंत, कर्म वेद रिपु टारके ।। १ ।।

एक सहस पुनि आठ, लच्छन निज तन धारिया ।
मोटा गुण चउ आठ, श्री जिनवर सभारिया ।। २ ।।

अतिशय है चौतीस, वाणी पिण पणतीस है ।
तिन के तुम हो ईश, भविक नमाते शीश है ।। ३ ।।

चौसठ सुरपति सेण, सेवा कर हर्षित रहे ।
सुनकर जिन मुख बेण, आनन्द ते अधिको लहे ।। ४ ।।

छूटत भव की पाश, जो धारे श्रद्धा करी ।
वन्दत "वल्लभ" तास, श्री चरणे मस्तक धरी ।। ५ ।।



# गुरु महिमा पंचक

( —सोरठा— )

पच महाव्रतधार, रक्षक षट् काया तणां ।
ह्वैग्या दीनदयाल, सोहत तां मे गुण घणा ।। १ ।।

तोन गुप्ति से गुप्त, समित हो समिति पच से ।
बने नही तुम लुब्ध, दुखद जगत परपंच से ।। २ ।।

रागादिक से मुक्त, बनकर जिन पथ पे चढ्या ।
सम दम से बन युक्त, करम शत्रु जीतन बढ्या ।। ३ ।।

द्वादस - दस परकार, परिषह जिनवर ने कह्या ।
सहते हो धर प्यार, नही कदापि थे त्रव्या ।। ४ ।।

पालत सयम खास, मन वच काया दृढ़ करी ।
वन्दत 'वल्लभ' तास, श्री चरणे मस्तक धरी ।। ५ ।।

# प्रश्न (गौतम के) उत्तर (महावीर के)

( —दोहा— )

गौतम पूछे वीर को, सविनय बारम्बार।
कृपानाथ ! करके कृपा, शंका दीजै टार ॥ १ ॥

कृपा पात्र गुरूदेव का, शिष्य बने है केम ?
सुनने को इच्छा मुझे, फरमावें हो जेम ॥ २ ॥

वीर कहे भो शिष्यवर ! प्रश्न किया है श्रेष्ठ।
सावधान होकर सुनो, यथा पक्ति से ज्येष्ठ ॥ ३ ॥

गुरु आज्ञा पाले सदा, बैठे गुरु के पास।
चेष्टायें उनकी समझ, करे कार्य सोल्लास ॥ ४ ॥

तजकर जो वाचालता, रहे ज्ञानि के पास।
वात निरर्थक छोड कर, करे तत्त्व की खास ॥ ५ ॥

क्रोध सहित झूंठ न कहे, बोले अधिक न वैन।
समय व्यर्थ खोवे नही, आत्मलीन दिनरैन ॥ ६ ॥

पूछे यदि गुरूदेव तो, कहे सत्य ही वात।
कीने को कीना कहे, नहि को नही बतात ॥ ७ ॥

अड़ियल घोड़े की तरह, जो न चहे आघात।
बार वार गुरूदेव से, नहीं कहावे बात ॥ ८ ॥

सुनकर के गुरु वचन को, करे न क्रोध वितान।
किन्तु दवा हित की समझ, जो करता है पान ॥ ९ ॥

जो पीछे भी ना करे, गुरू की निन्दा भूल ।
दिल में धारे गहनता, समझ धर्म का मूल ।। १० ।।

क्रोध, झूठ छल कपट की, लपट रखे ना लेश ।
इत उत बातें बोलकर, जो न बढ़ावे क्लेश ।। ११ ।।

शिष्य वह सुविनीत है, सुन गौतम ! धर ध्यान ।
कृपा पात्र होकर सदा, पाता उन्नत स्थान ।। १२ ।।

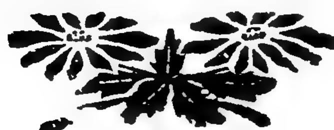
किन्तु ठीक इससे उलट, जो होता अविनीत ।
वह सूकर सम भात तज, अशुचि लहै नचीत ।। १३ ।।

सड़ी क़ान की कुत्ति सम, पाता वह अपमान ।
गुरू का प्यारा भी नहीं, होता जग दरम्यान ।। १४ ।।

अतः कृपा गुरू की चहो, विनय लीजियो धार ।
बिना विनय गुरु का नही, मिल सकता है प्यार ।। १५ ।।

सूत्र उत्तराध्ययन के, पहले ही अध्याय ।
गौतम से श्री वीर ने, दीना यों फरमाय ।। १६ ।।

तहत् वचन कह शिष्य ने, गुरू आज्ञा ली शीश ।
'वल्लभ' वैसा यत्न कर, बनजा तू जग ईश ।। १७ ।।



# श्रमण के मनोरथ

( —सवैया— )

वह शुभ दिन कब, आयेगा दयाल जब ।
थोड़ा या बहुत श्रुत, ज्ञान लूंगा धार रे ।।

एकल बिहारी बन, भिक्षु प्रतिमा को धार ।
विचरूं भू मण्डल पे, ममता निवार रे ।।

अन्तिम समय कर, संथारा सलेखणा औ ।
पडित मरण पाऊं, राग द्वेष टार रे ।।

एह तीन मनोरथ ठाणायंग सूत्र माही ।
तीजे ठाणे प्रभुजो ने, कह्या क्रम वार रे ।।१।।

— दोहा —

तीन मनोरथ चिन्तताँ, कर्म निर्जरा थाय ।
भव परित्त करके त्वरित 'वल्लभ' शिव सुख पाय ।।



# श्रावक के लक्षण

जिसने त्याग दिया निशि भोजन, जमीकंद जो नहीं खाता ।
परदारा को सदा मानता, अपनी माता सम माता ।।

सप्त व्यसन का करे न सेवन, दीर्घ वैर नहीं मन लाता ।
'मुनि वल्लभ' इन गुण का धारक, सच्चा श्रावक कहलाता ।।२।।



# ज्ञान-चालीसा

( दोहा )

परमेष्ठी पद-कज नमूं, गुरुवर 'प्राज्ञ' निधान ।
ज्ञान कला दिन दिन बढे, द्वितीया चन्द्र समान ॥१॥

सम्यग्ज्ञान प्रकाश क्या ? कौन पात्र सुविचार ।
करु कथन सक्षेप में, नदी सूत्रनुसार ॥२॥

## - तीन प्रकार की सभा -

ज्ञानी, अज्ञानी सभा, दुर्विदग्ध, ये तीन ।
दो ज्ञानार्जन योग्य है, तृतीया कही मलीन ॥३॥

## - ज्ञानी सभा के लक्षण -

दोष तजे, सद्गुण भजे, दूध लहे जिमि हस ।
वह ज्ञानी परिषद् सदा, शुभ सुविनीत प्रशंस ॥४॥

## - अज्ञानी सभा के लक्षण -

सरल स्वभावी नम्र मृदु, ज्ञान क्षुधा अविशेष ।
अज्ञानी ज्ञानी बने, मृग शिशु तुल्य वनेश ॥५॥

## - दुर्विदग्ध - सभा - लक्षण -

परिभव वश पूछे नही, मन में गर्व न मांय ।
वायुपूरित मशक ज्यूं, दुर्विदग्ध कहलाय ॥६॥

दुर्विदग्ध बनना नही, अरुचि ज्ञान से थाय ।
भव भव मे भटकत फिरे, अन्त निगोदे जाय ॥७॥

## – श्रोताओं के भेद –

श्रोता जन संसार में, चवदह विध विख्यात ।
उत्तम श्रोता है वही, ग्रहे ज्ञान की बात ॥८॥

## – ज्ञान के भेद –

वीतराग जिनराज ने, पांच बताये ज्ञान ।
मति, श्रुति, अवधि और मनः-पर्यय केवल ज्ञान॥६॥

## – परोक्ष-ज्ञान –

मति, श्रुति ज्ञान परोक्ष हैं, मन इन्द्रिय अवलम्ब ।
भाव रुप दोनों पृथक, रहे सदा इक सग ॥१०॥

## – मति ज्ञान के भेद –

मतिज्ञान के भेद दो, श्रुत अश्रुत निश्रीत ।
अश्रुत के चउ भेद है, चारो बुद्धि सहीत ॥११॥

## – औत्पातिकी बुध्दि –

सुना न देखा जो कभी, यत्किंचित् अवदात ।
सर्वमान्य निर्णय करे, त्वरा बुद्धि उत्पात ॥१२॥

## – वैनयिकी बुध्दि –

गुरु ज्येष्ठ के विनय मे, जो मद्बुद्धि विकास ।
वैनयिकी गुण ग्राहिका, कही जिनागम खास ॥१३॥

## – कार्मिकी बुध्दि –

करत करत अभ्यास के, ज्ञान कला विस्तार ।
वह बुद्धि है कार्मिकी, होय सुखी समार ॥१४॥

## – पारिणामिकी बुद्धि –

आयु साथ अनुभव बढ़े, या जाति स्मृति योग ।
पारिणामिकी बुद्धि वह, मिले पुण्य के योग ।।१५।।

## – श्रुत-निश्रित मति ज्ञान –

अवग्रहादिक भेद से, श्रुत निश्रित चउ रुप ।
जिनके उत्तर भेद को, सुनो सूत्र अनुरूप ।।१६।।

## – अवग्रह के भेद –

अर्थ और-व्यजन विषय, दोय अवग्रह भेद ।
पुन: सुनो विस्तार से सक्षम ज्ञान अखेद ।।१७।।

## – व्यंजनावग्रह –

चारों-इन्द्रिय विषय से, स्पर्श वस्तु का होय ।
वही व्यजनावग्रह, मन चक्षु बिन जोय ।।१८।।

प्रति बोधक व सराव का, दिये दोय दृष्टान्त ।
नंदी सूत्र प्रमाण है, ज्ञान विषय सिद्धान्त ।।१६।।

## – अर्थावग्रह और ईहादि के भेद –

अर्थावग्रह और ईहा, अवाय धारणा चार ।
सबके छह छह भेद हैं, मन इन्द्रिय आधार ।।२०।।

श्रुतनिश्रित मति ज्ञान के, सभी भेद अठवीस ।
अश्रुत के चउ भेद यों, हो गये सब वत्तीस ।।२१।।

## – मति ज्ञान की क्षमता –

उपदेशादि निमित से, मति ज्ञानी सविशेष ।
द्रव्यादिक सब भेद को - जाने, सके न देख ।।२२।।

## – अवग्रहादि का काल प्रमाण –

समय एक असंख्य तक, अवग्रह काल प्रमाण।
ईहा अवाये धारणा, अन्तर्मुहूर्त समान ।।२३।।

संख्य/असख्या वर्ष भी होय धारणा काल ।
पहले मति फिर श्रुत बने, जाने तीनों काल ।।२४।।

## – श्रुत ज्ञान –

श्रवण, मनन और धारणा-से श्रुत ज्ञान कहाय ।
जिसके चौदह भेद हैं, सुनो सभी चित्त लाय ।।२५।।

## – श्रुत ज्ञान की क्षमता –

सम्यग् शुद्धोपयोग से, श्रुत ज्ञानी मुनिराज ।
देश काल और भाव को, जाने योग्य सुकाज ।।२६।।

## – प्रत्यक्ष ज्ञान के भेद –

इद्रिय, नो इन्द्रिय पने, द्विविध है प्रत्यक्ष ।
इन्द्रिय परतिख पंचधा, नदी सूत्र समक्ष ।।२७।।

## – नो इन्द्रिय प्रत्यक्ष के भेद –

नो इन्द्रिय प्रत्यक्ष है, अवधि मन:पर्याय ।
केवल क्षायिक ज्ञान है, रवि शशि सम सुखदाय ।।२८।।

## – अवधि ज्ञान –

द्विविध अवधि ज्ञान है, भव और गुण प्रत्याय ।
भव प्रत्यय सुर नरक मे, जन्म साथ प्रकटाय ।।२९।।

गुण प्रत्यय के स्वामी है, मनुज और तिर्यंच ।
पुद्गल मूर्त स्वरूप का, सीमित क्षेत्र सुरूच ।।३०।।

अनुगामी व अननुगामी, हीयमान वर्द्धमान ।
प्रतिपाती ये स्थिर नहीं, स्थिर अप्रतिपाती मान ।।३१।।

## – मन पर्यव ज्ञान –

मनपर्यव द्विविध कहा, ऋजु विपुल मति खास ।
चौदह पूर्वधर साधु को, हो अप्रमत्त निवास ।।३२।।

ऋजुमती प्रतिपाती है, विपुलमती ध्रुव जान ।
दर्शन ज्ञान चरण शुध, प्रकटे वही निधान ।।३३।।

जन्मे ढ़ाई द्वीप मे, सन्नी असख्य प्रमाण ।
जाने मन के भाव को, उपयोगे निज भान ।।३४।।

छद्मस्थों मे ज्ञान हो, दोय तीन और चार ।
जानत सब उपयोग से, लब्धिवन्त सुखकार ।।३५।।

## – केवल ज्ञान –

पूरे लोकालोक की, स्थूल सूक्ष्म पर्याय ।
तीनो काल अनन्त सब, केवल ज्ञान जनाय ।।३६।।

सहज शुद्ध उपयोग है, आत्म शक्ति साक्षात ।
निरालम्ब निश्चय अचल, निर्विकल्प आख्यात ।।३७।।

## — प्रशस्ति —

पूज्य प्रवर्त्तक कुन्दन गुरू, शहर मेडता खास ।
दो हजार इकतीस का, करके चातुर्मास ।।३८।।

मरुधर जोधाणा फरस, पाली सेखे काल ।
विचरत ठाणा पांच से, आये दीन दयाल ।।३९।।

वर्णन पाचों ज्ञान का, अल्प बुद्धि अनुसार ।
चालीसा अर्पण किया, 'मुनि बल्लभ' अणगार ।।४०।।

卐 卐 卐

# रतन - शिक्षा - पच्चीसी

— दोहा —

रतन ! रतन सम तन तणो, जतन राख भरपूर ।
रतन तीन ले धार तूं, भव बाधा हो दूर ॥१॥

रतन ! मान मेरा कथन, विनय रतन उर धार ।
विनयवान में ही सदा, होत धर्म विस्तार ॥२॥

रतन ! मेघ तो सब जगह, बरसत है घनघोर ।
पर पानी आवे वहां, जहां नमी है ठौर ॥३॥

रतन ! नित्य झुक जावणो, गुरु आज्ञा सिर धार ।
गुरुवर की शुभ महर सूं, पार होय संसार ॥४॥

रतन ! वचन नहीं बोलना, कड़वा आक समान ।
पर की तो हानी हुवे, निज का हो अपमान ॥५॥

रतन ! जतन सूं चालणो, पग पग जयणा राख ।
जयणा से पातक टले, धर्म सुधा ले चाख ॥६॥

रतन ! जतन सूं राखणो, जो भी पढ़ियो ज्ञान ।
ज्ञान बिना किरिया नहीं, बिना क्रिया निर्वाण ॥७॥

रतन ! प्रेम सूं रहण में, आनन्द होय अखूट ।
प्रेम बिना प्रभु ना मिले, टले न यम की कूट ॥८॥

रतन ! धर्म अनमोल है, ज्यूं अमृत की घूंट ।
भाव सहित जो धार ने, बन्धन जावे टूट ॥९॥

रतन ! सार संसार में, मन्त्र राज नवकार ।
श्रद्धा युत जपता थकां, मिटे कर्म जंजार ॥१०॥

रतन ! कदे करणी नही, पर की निन्दा भूल ।
अधः पतन हो नरक में, जीवन होवे धूल ।।११।।

रतन ! छोड़ मिथ्यात्व को, ले समकित उर धार ।
समकित बिन चारित्र से, होय नहीं उद्धार ।।१२।।

रतन ! तत्त्व नव जानकर, सीखो निज पर भेद ।
भेद ज्ञान बिन ना मिटे, लख चौरासी खेद ।।१३।।

रतन ! यतन सूं दूर कर, क्रोध कपट मद लोभ ।
क्षमा विनय सन्तोष धर, फैले जग में शोभ ।।१४।।

रतन ! ज्ञान - मणि से सदा, होय अज्ञ तम दूर ।
ज्यो दिनकर के उदय से, अन्धकार हो चूर ।।१५।।

रतन ! भजन भगवान का, हरे कोटि भव पीर ।
क्षणिक दुःख में भूलकर, कभी न हो दिलगीर ।।१६।।

रतन ! अगर विद्या चहे, आलस को दे छोड़ ।
लगन राख दिन रात तू, उद्यम कर तन तोड़ ।।१७।।

रतन ! शीघ्र सरतन करो, नरतन है दुष्वार ।
जागे तो आगे बढे, सोवे तो संसार ।।१८।।

रतन ! सुणो चेतन तणो, वतन बहुत है दूर ।
या जग एक सराय है, तजणी पड़े जरुर ।।१९।।

रतन ! तिरो भव सिन्धु से, बैठहि नरतन नाव ।
नाविक चेतन हो सदा, मोक्ष पुरी को राव ।।२०।।

रतन ! जीव तो शुद्ध है, करमां कयों कलंक ।
जो चेतन समरथ बने, मिटे कर्म को डंक ।।२१।।

रतन ! समय कलि काल है, चेतो चतुर सुजाण ।
नहि तो बटमारा मिली, हर लेसी धन प्राण ॥२२॥

रतन ! भाव उज्ज्वल रखो, भावा ऊपर खेल ।
क्षण में केवल ज्ञान दे, क्षण मे नरका मेल ॥२३॥

रतन ! वही संसार में, वड़ो कहावे वीर ।
प्राणों की बाजी लगा, हरे पराई पीर ॥२४॥

रतन ! डरो मत मौत सूं, मार्या मरां न मौत ।
पुद्गल तो गलसी सही, चेतन अक्षय ज्योत ॥२५॥

## — प्रशस्ति —

पच्चीसी शिक्षा तणी, रतन नाम आधार ।
रची साठ ही मिनिट में, 'वल्लभ मुनि' अणगार ॥२६॥



# कमल - शिक्षा - पच्चीसी

卐 दोहा 卐

अरे कमल ! तू कमल सम, रहिजे नित निर्लेप ।
विषय कीच का जीव पर, मती लगाजे लेप ।। १ ।।

अरे कमल ! तू कमल बन, महका सद्गुण गंध ।
अलि सम सज्जन आवसी, लेने को मकरंद ।। २ ।।

अरे कमल ! तू विनय का, सद्गुण लेना धार ।
विनय धर्म इस जीव को, कर दे भव से पार ।। ३ ।।

अरे कमल ! तू और सुन, विनय धर्म का मूल ।
मूल रहे फल फूल है, मूल बिना सब धूल ।। ४ ।।

अरे कमल ! गुरू विनय से, प्रकटे ज्योति महान ।
चण्डरोद्र के शिष्य सम, पावे केवल ज्ञान ।। ५ ।।

अरे कमल ! मत छोडना, कभी विनय अनुराग ।
पूज्य जनों का हृदय से, स्वागत कीजे भाग ।। ६ ।।

अरे कमल ! विष अग्नि से, होय न जितनी हान ।
उससे भी अति हानिकर, है गुरू का अपमान ।। ७ ।।

अरे कमल ! श्री वीर का, शिष्य जमाली एक ।
अविनय कर गुरु की रुला, भव सागर में देख ।। ८ ।।

अरे कमल ! तू ज्ञान का, कभी न करना मान ।
मान शत्रु है ज्ञान का, रोक देत उत्थान ।। ९ ।।

अरे कमल ! स्वाध्याय में, रहना नित लवलीन ।
जीवन ऊंचा होयगा, इसमे मेख न मीन ॥१०॥

अरे कमल ! तू छोड़ जे, क्रोध कपट की तान ।
दुर्गति में इस जीव को, पहुंचा दे अभिमान ॥११॥

अरे कमल ! निज हृदय को, इतना बना उदार ।
तेरा मेरा का वहां, पनप न सके विकार ॥१२॥

अरे कमल ! निज चित्त से, भेद भाव कर दूर ।
सबको अपना समझि के, बढ़ा प्रेम भर पूर ॥१३॥

अरे कमल ! करना नही, कभी किसी से दाह ।
मोक्ष मार्ग पर जो तुझे, है बढ़ने की चाह ॥१४॥

अरे कमल ! संसार में, कर्म बन्ध के मूल ।
राग द्वेष दो जबर है, मत आदरजे भूल ॥१५॥

अरे कमल ! गुस्सा बुरा, गुस्सा समझो निंद्य ।
जो इसको दूरा तजे, वही होय जग वंद्य ॥१६॥

अरे कमल ! ये विषय सुख, फल किंपाक समान ।
ऊपर से रमणीक पर, अन्त दुखो की खान ॥१७॥

अरे कमल ! ये विषय तो, है विष से भी क्रूर ।
जिनके चिन्तन मात्र से, जीवन होवे धूर ॥१८॥

अरे कमल ! रख सादगी, जिसकी मौज अपार ।
जीवन तो सादा रहे, ऊंचे रहे विचार ॥१९॥

अरे कमल ! वह त्याग है, जो इच्छा से होय ।
परवश कुछ पावे नहीं, त्याग न कहिये सोय ॥२०॥

अरे कमल ! निद्रा, विषय, विकथा, गर्व, कषाय ।
इन पाचो परमाद को, तजे तो आनन्द पाय ॥२१॥

अरे कमल ! सुकुमालता, छोड़ करो पुरुषार्थ ।
कर्म मुक्ति हो छिनक में, फले सकल परमार्थ ॥२२॥

अरे कमल ! सयम तथा, जप तप लीजे साध ।
उर पछतावा ना रहे, अवसर निकले बाद ॥२३॥

अरे कमल ! अर्हन् तथा, सिद्ध, साधु, जिनधर्म ।
चार शरण ये धार ले, टूट जाय सब कर्म ॥२४॥

अरे कमल ! जिस ध्येय से, उठा हृदय वैराग्य ।
उससे मत डिगना कभी, अमर बने सौभाग्य ॥२५॥

## — प्रशस्ति —

पच्चीसी शिक्षा तणी, कमल नाम आधार ।
'वल्लभ मुनि' ने यों रची, अल्प बुद्धि अनुसार ॥२६॥



# प्रेम महिमाष्टक

( दोहा )

प्रेम परस्पर पालिये, प्रेम धर्म का मूल।
प्रेम बिना निकसे नहीं, चुभी जो अन्तः शूल ॥ १ ॥

प्रेम चढ़ाकर प्रेमली, बना वनस्पति बोर।
आकृति कीमत बढ़ गई, लेते मानव दौर ॥ २ ॥

पय पानी का देखिये, कितना दृढ़तर प्रेम।
एक दूसरे के बिना, दोनो का नहीं क्षेम ॥ ३ ॥

पय ने पानी को दिया, अपना रूप व मूल्य।
जल भी हसि हसि बलि हुआ, समझ प्राण तृण तुल्य ॥४॥

किन्तु प्रेम रहता वहा, जहा सरल हो भाव।
टेढाई करदे खतम, भर न सके फिर घाव ॥ ५ ॥

घृत मिश्री को पाय कर दुग्ध बने बलदाय।
किन्तु तनिक पा खार को, स्नेह सभी फट जाय ॥६॥

टूटा प्रेम कपट्ट से, फिर वह कठिन जुड़ाय।
फूटा मोती लाख से, लाख किये न मिलाय ॥ ७ ॥

इतनी कीमत समझ कर, रखो परस्पर प्यार।
'वल्लभ मुनि' सर्वत्र ही, रहे मंगलाचार ॥ ८ ॥



# वल्लुड़ा रा सोरठा

अष्ट करम रो रोग, छिन ही में मिट जावसी ।
वश में कर त्रय योग, गुरू पद रमले वल्लुड़ा ।। १ ।।

गुरू आज्ञा अनुसार, पग आगे जो मेलसी ।
जन्म मरण रो द्वार, सटक बन्द हो वल्लुडा ।। २ ।।

पाले गुरू का वेण, पास बसे इगित लखे ।
वह विनीत अरु सेण, शिष्य कहावे वल्लुडा ।। ३ ।।

मिनख जमारा मांय, काज धरम को ना कियो ।
नीच गति दुखदाय, व्हेसी व्हांरी वल्लुडा ।। ४ ।।

करणी हो तैयार, महल वणै मोटो घणो ।
बिन करणी भव पार, पावे किम कर वल्लुड़ा ।। ५ ।।

आगे जाणो ठोर, रहणो यहा पर ना सखे ।
ले ले धरम रो जोर, चेतावे गुरू वल्लुड़ा ।। ६ ।।

जावे जो जो रात, लौट न पाछी आवसी ।
करे धरम की बात, व्हां रे सफली वल्लुड़ा ।। ७ ।।

जावे जो जो टेम, कहो कदै पाछो फिर्यो ।
करले सुकृत नेम, नरभव मत खो वल्लुडा ।। ८ ।।

आवत करे किलोल, जावत जावे हरस से ।
ते नर है सिरमौर, पडित दीसै वल्लुडा ।। ९ ।।

आवत सूमड सोल, जावत जावे रूठ ने ।
ते नर गोल मटोल, मूरख दीसै वल्लुड़ा ।।१०।।

गुरू द्रोही, अरू क्रूर, शिष्य ठौर नही पावसी ।
सड़ी कान री कूत, काढै ज्यो जग वल्लुड़ा ।।११।।

गुरू आज्ञा विपरीत, चाले पास न वैठहि ।
जाण उसे अविनीत, दूरा त्यागो वल्लुड़ा ।।१२।।

# – शिक्षा दशक –

( दोहा )

मुनि वल्लभ ! जीवन बना, मीठा ईख समान ।
कभी न कड़ुआ आक सा, सीख गुरू की मान ॥ १ ॥

मुनि वल्लभ ! बाहर कछू, भीतर में कछु और ।
इस बहुरूपी ढग से, मिटे न भव को दौर ॥ २ ॥

मुनि वल्लभ ! छल कपट कर, ठगना कभी न सीख ।
वरना भव भव की कभी, नही मिटेगी चीख ॥ ३ ॥

मुनि वल्लभ ! पर फूंक से, जो बोले वह शख ।
ऐसे नर का मूल्य है, लाख शून्य बिन अक ॥ ४ ॥

मुनि वल्लभ ! चेतन समझ, देते हैं गुरू फूंक ।
फिर भी जो समझे नही, तो तेरे में चूक ॥ ५ ॥

मुनि वल्लभ ! अपना भला, किसमे है यह सोच ।
तेरी उन्नति मे कहीं, रह जावे नही पोच ॥ ६ ॥

मुनि वल्लभ ! बस समझ ले, थोड़े मे सब सार ।
निन्दा चुगली छोड़कर, अपनापन ले धार ॥ ७ ॥

मुनि वल्लभ ! गुरु तो सदा, कहते हित की बात ।
फिर तेरा भावी प्रबल, टाले नही टलात ॥ ८ ॥

मुनि वल्लभ ! सच बात तो, लगती है कटु साफ ।
पर जो उसको धार ले, मिट जावे संताप ॥ ९ ॥

मुनि वल्लभ ! हित लक्ष्य कर, समझाते गुरुदेश ।
सर्वोदय के हित रहे, चिन्तन के निर्मेष ॥१०॥

卐 卐 卐

# * सम्बोधना *

शास्त्र-ग्रन्थो का पठन कर, अति कुशल जो हो गया,
वचन पटुता प्राप्त करके, जो सुवक्ता बन गया।
विज्ञान का कर ज्ञान संचय, किये आविष्कार हैं,
किन्तु ये अध्यात्म-अमृत-रस विना निस्सार है॥ १॥

द्वीप का पाना जलधि मे, वृक्ष रेगिस्तान मे,
घोरतम में दीप पाना, अग्नि हिम के स्थान मे।
अति कठिन है, त्यो अरे, दुर्लभ है मिलना धर्म का,
जो पा सका कलि काल मे, मानों उदय शुभ कर्म का॥ २॥

तेज फैलाते हुए अध्यात्म रवि के उदय में,
अस्त हो मिथ्यात्वतम पुनि भोगमय कीचड नसे।
आत्म के समतादि गुण को लूटने वाले अरी,
क्रोधादि तस्कर शीघ्र ही भागे नही आवे फिरी॥ ३॥

ससार मे रुलते हुए इस भव्य ने चिर काल मे,
चार गति के भोग बहुधा भोग लीने बहुत से।
फिर भी न पाई तृप्ति जो अब ढूंढता इस जन्म मे,
किन्तु पाएगा नही वह तृप्ति इस नर जन्म मे॥ ४॥

देहधारी सर्व प्राणी, अष्ट कर्माधीन है,
तब बता? फिर कौन किसको कर सके स्वाधीन है।
है स्वय ही दीन जो दारिद्रय का नही अन्त है,
क्या कर सकेगा अन्य जन को वह कभी श्रीमन्त है॥ ५॥

स्वार्थ मे है मग्न सब जन स्वार्थ ही को चाहते,
ससार के सम्बन्ध भी इक स्वार्थ पर ही है टिके।
प्रेम रुपी दीप का भी स्वार्थ ही तो तैल है,
उस तैल के सम्पूर्ण होते ही न कोई मेल है॥ ६॥

ये भव्य महलायत बगीचे और सुन्दर अङ्गना,
चर्मदृग् से देखने पर प्राप्त मोह विड़म्बना।

किन्तु अन्तर्दृष्टि से जो देखता उन वस्तु को,
वैराग्य श्री को प्राप्त करके प्राप्त करता मोक्ष को ॥ ७ ॥

मरीचिका को मान पानी, दौड फिर मृग दौड़ता,
पाता नहीं पानी मगर निज प्राण भी है छोड़ता।
भोग में सुख मान मृगवत दौड़ते दिन रात हैं,
मोहवश मानव अरे ! आश्चर्य की यह बात है ॥ ८ ॥

कस्तूरिका की गन्ध से मृग मस्त हो दौड़ा फिरे,
अज्ञानवश जाने नहीं वह विद्यमान निजोदरे ।
ऐसे सुखों को प्राप्त करने व्यक्ति दर दर दौडता,
किन्तु अन्तः स्थित सुखों की ओर मन नहीं जोड़ता ॥ ९ ॥

नारी किसी की है नहीं तो, पुत्र किसके है ? बता,
मित्रगण भी ना किसी के, ना किसी के है पिता।
परलोक मे जाना अकेला, सग में कुछ भी नहीं,
तब शुभाशुभ कर्म पुद्गल, साथ जायेंगे सही ॥ १० ॥

छिप भले ही जा उदधि में, गिरि गुहा में वा भला,
पाताल में जा छिप भले, जा देवलोकों मे चला।
पर तुझे नहीं छोड सकता, मृत्यु अपनी चाल में,
मृत्यु का अस्तित्व तो सर्वत्र है संसार मे ॥ ११ ॥

संसार अटवी मे घनी क्रोधादि ज्वाला जल रही,
जलता जगत जो छोड धर्मोद्यान मे सोता कहीं।
तब उसे जन्मादि संकट दुःख नहीं पहुंचा सके,
ठहरता है क्या कभी तम सूर्य के लगते पके ॥ १२ ॥

श्री चंचला मन है चपल, तट ग्रामर के सम गात्र है
पर पदारथ और परिजन स्वप्न ही के मात्र है ।
मृत्यु रावण भी पड़ा है, व्यक्ति के पीछे सदा,
इस हेतु धर्माराधना में, दत्तचित्त हो सदा ॥ १३ ॥

---

१. [illegible] २. [illegible] ३. [illegible]

जिस देह से जो अज्ञजन, ससार की वृद्धि करे,
उस देह से आश्चर्य ? ज्ञानी, भव भवान्तर को हरे।
देह का दोनों जनों के, भेद कुछ भी है नही,
भेद है निज कृत्य का, उपयोग भावों का सही ।। १४ ।।

उन्नति औ अवनति जो, विश्व मे होती रही,
मूल उनका कहा क्रमशः पुण्य पातक दोय ही।
पुण्यक्षय से हो पतन, उत्थान पुण्य प्रकाश से,
फिर करे नश्वर सुखों में, मोह क्यों विश्वास से ।। १५ ।।

इन्द्र, सुर, चक्री, नरेश्वर और ओजस्वी महाँ,
लक्ष्मीपति, बलदेव, वासुदेव तीर्थंकर यहाँ।
होते सभी अपने किए शुभ कर्म के अनुभाव से,
क्यों करे तब कर्मफल मे मोह सन्त स्वभाव से ।। १६ ।।

रात दिन के चक्र सम यह चक्र सुख दुख का चले,
सुख मिले, फिर प्राप्त हो दुख, यह अनादि नही टले।
किन्तु सुख दुख चक्र से, दिलगीर बनना ना हमे,
धीरता जग को दिखाना, वीरता के साथ में ।। १७ ।।

उदय में औ, अस्त में, रवि एक सा रहता सदा,
वैसे महाजन एक रहते, चलित नहि होते कदा।
सम्पत्ति और विपत्ति मे, सम्मान मे, अपमान में,
सूर्य सम समभाव मे, रमते प्रभू के ध्यान मे ।। १८ ।।

आग मे गिर कर यथा, सोना समुज्जवल होत है,
आपत्ति आती है तभी चमके महाजन ज्योत है।
स्वर्ण-शक्ती की परीक्षा, के लिए दुख भी कही,
है कसौटी वस्तुतः 'बल्लभमुनि' सशय नहीं ।। १९ ।।

मातृमुख होकर रहा यह जीव शैशव काल मे,
तारुण्य आह ! बता दिया फंस दार के जजाल में।
आई जरा देखा किया निज पुत्र की ही ओर हैं,
पर न आत्मोन्मुख हुआ ? इस मोह का क्या छोर है ।। २० ।।

आया बुढ़ापे को बुढ़ापा ? मौत आई मौत को ?
रोग हो गए नष्ट ? या, यौवन रहेगा सौ तको ?
धन धान्य क्या निश्चल सदा ? क्यों सुप्त मोह प्रसंग मे,
जाग ! उठ !! सद्धर्म का पाथेय ले ले संग में ॥ २१ ॥

वीर है वह, वीर है वह, है वही विद्वान् भी,
जो जीतले, अन्तःकरण को वही सयमवान् भी।
बाद पाँचो इन्द्रियों को, जो करे वश मे सदा,
मोक्ष सुख पाता वही, सशय नही "वल्लभ" कदा ॥ २२ ॥

मन-सारथी, इन्द्रिय-हयों को प्रेरणा करता यथा,
उन उन पदार्थो की तरफ वे, शीघ्र बढ़ जाते तथा।
गुण मूढ़ आत्मा को त्वरित, ये गर्त में जा डालते,
कैसी पराश्रयता अहो ! यह, क्यो न इसको टालते ॥ २३ ॥

चाहते हैं सुख सभी, और ढूंढते सर्वत्र ही,
किन्तु सुख पाते नही, पाते दुखों का बन्ध ही।
कैसे मिले सुख ? है नही-जग मे, सुखो की कल्पना,
अत एव ज्ञानी बन अभगो ध्यान ध्याते आत्म ना ॥ २४ ॥



खण्ड ३

स्त

व

न

वि

भा

ग

# ( देव )

— गीतिका —

हे दयालो ! दीन बन्धो !
दास तेरे पास हैं;
शीश पे आशीष का शुभ
हाथ धर दो खास हैं।

आश लेकर पास आया
नाश सारे पाप हों;
'प्राज्ञ' गुरू ने यों बताया
पाप - हारी आप हो ॥



卐 नवकार मन्त्र

卐 अरिहन्त स्तुति

卐 सिद्ध स्तुति

卐 चौबीसी

卐 ऋषभ स्तुति

卐 शान्ति स्तवन

卐 राजुल की पुकार

卐 पार्श्व स्तुति

卐 महावीर स्तुति

卐 भगवत्प्रार्थना

卐 जिनवाणी स्तुति

# नवकार मन्त्र

( तर्ज—जय बोलो महावीर स्वामी की )

अति उत्तम मंत्र है नवकारा,
जो ध्यावे, पावे भवपारा ॥टेर॥

अरिहन्त प्रथम पद सुखकारी,
भविजन के भव भव दुःख हारी ।
हितकारी जीवन के सहारा ॥अति० १॥

है अजर अमर शुद्ध अविनाशी,
श्री सिद्ध प्रभु शिवपुर वासी ।
अमूरति निर्मल अविकारा ॥अति० २॥

आचार्य देव पचाचारी,
है अष्ट सम्पदा के धारी ।
श्री संघ के जो खेवन हारा ॥अति० ३॥

जिन आगम के पाठक पूरे,
जो रहे कषाय से अति दूरे ।
वे उपाध्याय पद गुण धारा ॥अति० ४॥

निज स्वरुप के जो साधक है,
जिन आज्ञा के आराधक है ।
वे सर्व साधुजी सुखकारा ॥अति० ५॥

यह मत्र जपे जो श्रद्धा से,
उसके दुख दारिद सहु नासे ।
हो आनन्द मगल अनपारा ॥अति० ६॥

श्री 'पन्ना' गुरुवर मन भाये,
तसु कृपा 'बाल वल्लभ' गाये ।
गर चाहे कर्म से छुटकारा ॥अति० ७॥

# अरिहन्त स्तुति-१

( तर्ज—जो भगवती त्रिशला तनय ........ )

जो तीर्थपति भगवन्त है, सर्वज्ञ महिमा वन्त है ।
चौतीस अतिशय वन्त है, अरिहन्त वे मति मन्त हैं ।।१।।

जो शुद्ध बुद्ध विशुद्ध हैं, जो मुक्त परमानन्द हैं ।
आनन्द कन्द अमन्द है, त्रय ताप हारी चन्द है ।।२।।

त्रय लोक के जो ईश है, जो वीतराग महन्त है ।
मिथ्यात्व तम हारी प्रभु, वे ज्ञान ज्योतिर्मन्त है ।।३।।

जो शान्त दान्त प्रशान्त है, जो पूर्ण करुणावन्त हैं ।
वे पतित पावन केवली, अरिहन्त जिन गुणवन्त है ।।४।।

भवि जीव के 'वल्लभ' सदा, ऋषभादि वीर जिनन्द हैं ।
त्रयकाल वन्दन है उन्हें, जो 'प्राज्ञ' प्रज्ञानन्द है ।।५।।

# अरिहन्त-स्तुति-२

( तर्ज—जय महावीर प्रभो )

जय अर्हन् स्वामी, प्रभु जय अर्हन् स्वामी ।
लोकालोक प्रकाशक, हो अन्तर्यामी ।।टेर।।

राग द्वेष शत्रु को, दिये तुमने टारी-हो प्रभु ।
तव कहलाये अर्हन्, सद्गुण के धारी ।।ओम् १।।

एक सहस अष्टोत्तर, लक्षण तन धारे-हो प्रभु ।
चौसठ इन्द्रों द्वारा-पूजनीय प्यारे ।।ओम् २।।

चौतीस अतिशय पेतीस, वाणी के धारी-हो प्रभु ।
जग जीवन, जग लोचन, जग रक्षा कारी ।।ओम् ३।।

शांत दांत करुणा निधि, तारक भवियों के-प्रभु ।
कुगति कुमार्ग निवारक, वारक माया के ।।ओम् ४।।

केवल द्वय के धारक, मिथ्यातम हारी-हो प्रभु ।
भविजन जन के मन में, हो आनन्दकारी ।।ओम् ५।।

जघन्य बीस व एक सौ सित्तर, उत्कृष्टा मानो-प्रभु ।
महाविदेह में विचरे, तीर्थंकर जानो ।।ओम् ६।।

अनन्त गुणो के धारक, मोटा गुण बारह-हो प्रभु ।
शक्र स्तव गुण सहित, रहित अट्ठारह ।।ओम् ७।।

पूज्य प्राज्ञ गुरुदेव कृपा से, आए हम शरणे-हो प्रभु ।
बाल रु वल्लभ वन्दत, यथा योग्य चरणे ।।ओम् ८।।

# सिद्ध-स्तुति-१

( तर्ज—जय महावीर प्रभो )

जय श्री सिद्ध प्रभो – स्वामी जय श्री सिद्ध प्रभो ।
अष्ट कर्म क्षय करके, बन गये पूर्ण विभो ।। ओम् ।।

कर्म न काया, जन्म जरा या, मरण रोग नाही - स्वामी ।
सिद्ध सदैव बिराजे अनन्त सुखाँ माँही ।। ओम् १ ।।

वे है अलेशी और अयोगी, अरूपी सिद्धा - स्वामी ।
इन्द्रिय रहित अनुपम सुख से समृद्धा ।। ओम् २ ।।

पन्द्रह भेदी सिद्ध कहाये, नन्दी सूत्र माही - स्वामी ।
आठ गुणों से शोभित अति ही सुखदाई ।। ओम् ३ ।।

सिद्ध प्रभु का सुमिरन, जो कोई करता - स्वामी ।
सिद्ध बुद्ध वह बनता, अक्षय सुख बरता ।। ओम् ४ ।।

पूज्य 'प्राज्ञ' गुरूदेव कृपा से, गाई यह स्तुति - स्वामी ।
शिष्य 'बाल और बल्लभ' चाहते है मुक्ति ।। ओम् ५ ।।



# चौबीसी-१

( तर्ज—जय बोलो महावीर स्वामी की )

जय जय हो चौबीस जिनवर की।
अरिहन्त, सिद्ध तीर्थंकर की ।।टेर।।

श्री ऋषभ, अजित, संभव स्वामी,
अभिनन्दन, सुमति, पदम नामी।
सुपारस, चन्द्र, हितकर की ।। जय० १ ।।
श्री सुविधि, शीतल श्रेयांस प्रभु,
वासु पूज्य, विमल, अनन्त विभु ।
श्री धर्म, शाति, जिन सुखकर की ।। जय० २।।
कुन्थु, अर, मल्ली, सुव्रतजी,
नमो, नेमी, पारस सवृत जी।'
श्री वर्द्धमान गुण सागर की ।। जय० ३ ।।
इन चरणों में जो आता है,
भवसागर को तिर जाता है ।
शुद्ध ज्योति जगे परमेश्वर की ।। जय० ४ ।।
जो इनका ध्यान लगाता है,
मन वांछित फल वह पाता है ।
यह विनय 'प्राज्ञ मुनि किंकर' की ।। जय० ५ ।।

# चौबीसी-२

( तर्ज—सीता माता की गोदी मे )

भव्यों ! चौबीसो जिनवर को, निशदिन ध्यावना रे ।
करके भजन प्रभु का, अपना पाप नसावना रे ।।टेर।।

रिषभ, अजित सभव भवहारी,
अभिनन्दन बन्धन सब टारी,
सुमति प्रभु सुमति के धारी ।
पद्म प्रभु है पद्म से निर्मल, मन मब ढावना रे ।। भव्यों १ ।।

सुपार्श्व, चन्दा चन्द्र से उज्ज्वल,
सुविधि जिनेश्वर रटलो पलपल,
शीतल प्रभु चन्दन से शीतल,
श्रेयांस, बासू पूज्य प्रभु को, लुलि लुलि वन्दना रे ।। भव्यों २ ।।

विमल, अनन्त चतुष्टय धारी,
धर्म जिनेश्वर महा उपकारी,
शाति नाम है साताकारी,
कुन्थु, अर जिनवर ने आठों कर्म हटावना रे ।।भव्यों ३ ।।

मल्ली, मुनि सुव्रत मुझ स्वामी,
नमो, नेम, जिन अन्तर्यामी,
पार्श्व प्रभु शिव सिद्धि पामी,
नामी वर्द्धमान महावीर, पीर मिट जावना रे ।। भव्यों ४ ।।

पूज्य वर्य गुरुदेव हमारे,
श्रीयुत पन्नालालजी प्यारे,
श्रमण सघ के उज्ज्वल तारे,
सारे गावो मिल गुणगान, पार होय जावना रे ।। भव्यों ५ ।।

धर्म प्रभावना करते करते,
सोहन गुरू त्रय ठाणा विचरते,
लघु पादू मे आनन्द बरते,
अक्षय तृतीया वर्ष उन्नीस की 'बल्लभ' गावना रे ।। भव्यों ६ ।।

## चौबीसी-३

( तर्ज—मीठो टपको है ससार )

जपलो चौवीसी को जाप, कटसी जनम जनम रा पाप ।
सगला मिट जासी सताप, जिवडो सुख पासी ।।टेर।।

जिनवर रीषभ, अजित नाथ, संभव अभिनन्दन विख्यात ।
सुमति पदम ने जोड़ो हाथ, आनन्द बरतासी ।। जप लो १ ।।

जिनवर सुपारस ने चद, सुविधी शीतल प्रभु श्रेयंस ।
सुमरो वासुपूज्य सुख कद, फंदा मिट जासी ।। जप लो २ ।।

जिनवर विमलनाथ अनन्त, धरम, शांतो शांति करन्त ।
कुंथु, अर जिनवर अरिहन्त, वणग्या अविनासी ।। जप लो ३।।

जिनवर मल्लि बाल ब्रह्मचारी, श्री मुनि सुव्रत महाव्रत धारी ।
नमी नेम जाऊं बलिहारी, पातक धुल जासी ।। जप लो ४ ।।

जिनवर पारस को मैं ध्याऊं, तृसला सुत महावीर मनाऊ ।
सादर चरणे शीश झुकाऊं, मुगती मिल जासी ।। जप लो ५ ।।

जिनवर बीसो विहरमान, ग्यारह गणधर गुण की खान ।
ध्याऊं सोलह सति को ध्यान, मगल होय जासी ।। जप लो ६ ।।

सवत अड़तीसा गणगौर, गुरुवर 'कुन्दन' जी सिरमौर ।
बिराज्या राताकोट शुभ ठौर महिमा सब गासी ।। जप लो ७ ।।

गावे 'बल्लभ मुनि' गुणगान, नित का कीज्यो गुरु को ध्यान ।
ज्यासू बढ़सी यश सम्मान, हिवड़ो हरसासी ।। जप लो ८ ।।



# चौबीसी-४

( तर्ज—साता कीज्यो जी ........ )

आनन्द पाओ रे, चौबीस जिनन्द का ध्यान लगाओ रे ।।टेर।।

ऋषभ, अजित, संभव, अभिनन्दन, सुमति पदम गुण गाओ रे ।
सुपारस और चन्द्र प्रभु को शीश झुकाओ रे ।।१।।

सुविधि, शीतल श्रेयास, वासुपूज्य, विमल, अनन्त मनाओ रे ।
धर्मनाथ और शांति नाथ जप, शाति बढाओ रे ।।२।।

कुन्थु, अर, मल्ली, मुनि सुव्रत, नमी नेम को ध्याओ रे ।
पारस प्रभु महावीर सिमर के, कर्म खपाओ रे ।।३।।

'ज्ञान' 'दर्शन' 'चारित्र' आराधो, जप तप को अपनाओ रे ।
धर्म ध्यान कर जोवन में कु० सो० चा० व० चा० ओ रे ।।४।।

दो हजार उनचाली जयपुर, चौमासो गुरु ठायो रे ।
'वल्लभ मुनि' कहे लाल भवन मे, मगल छायो रे ।।५।।

# ऋषभ स्तुति—१

( तर्ज—जय बोलो महावीर स्वामी की )

जय बोलो ऋषभ जिनेश्वर की ।
इस जगती के आदीश्वर की ।।टेर।।

मरु देवी के तुम लाला हो,
नाभी कुल के उजियाला हो ।
माला हो गुण मुक्तावर की ।। जय० १ ।।

जन जन को ज्ञान सिखाया था,
असि मसी कृषी बतलाया था ।
शिक्षाएं दी पुरुषारथ की ।। जय० २ ।।

फिर संयम मे मन को जोडा,
सांसारिक मोह बधन तोड़ा ।
तपस्या कर आतम उज्ज्वल की ।। जय० ३ ।।

फिर चार तीर्थ प्रकटा करके,
जिन धर्म का मर्म बताकर के ।
शुद्ध राह दिखाई शिवपुर की ।। जय० ४ ।।

श्रद्धेय प्रवर्त्तक गुरु ज्ञानी,
श्री 'प्राज्ञ चन्द्र' थे सुखदानी ।
मुनि 'वल्लभ' के हृदयेश्वर की ।। जय० ५ ।।

# ऋषभ स्तुति—२

( तर्ज—देख तेरे ससार की हालत )

आदीश्वर ! जिननाथ ! दयाकर ! करूणा के भडार !
बन्दूँ प्रेम सहित चरणार ।। टेर ।।
चार तीर्थ को स्थापित कर, कर दीनी नैया पार ।। बन्दूँ ।।

नाभिराय सुत आप कहाये, मां मरुदेवी के अंग जाये।
सुरपति चौसठ मिलकर आये, जन्म महोत्सव कर सुख पाये।
चैत्र मास की कृष्ण अष्टमी घर घर मगलाचार ।।बन्दूं १।।

देख व्यवस्था धर्म कर्म की, करी व्यवस्था चार वर्ण की।
भोग भूमि बन गई कर्म की, फिर फरका दी ध्वजा धर्म की।
सयम लेकर कर्म हटा, पुनि लीना केवल धार ।।बन्दूं २।।

चारों दिशि मे भ्रमण करी ने, मिथ्यातम को दूर हरी ने।
पंच शील सिद्धात करी ने, हिंसा मत का अन्त करी ने।
अष्ट कर्म कर नष्ट मोक्ष मे गये आप पधार ।।बन्दूं ३।।

नित्य निरजन स्वामी केरा, शरण पडा इक सेवक तेरा।
जन्म जरा मृत्यु का फेरा मिटे, मिले मुक्ति का डेरा।
अरजी श्री चरणों में करता, गरजी बारम्वार ।।बन्दूं ४।।

'प्राज्ञचन्द्र' गुरुराज पसाये, मुनित्रय विचरत विचरत आये।
मदनगज मे आनन्द छाये, होली चौमासी कर सुख पाये।
जग 'वल्लभ' यदि बनना हो तो,लो भक्ति उर धार ।।बन्दूं ५।।

卐 卐 卐

## —: शांति स्तवन :—

( तर्ज—मारवाडी माढ़ )

हो प्रभु तारण हारा, अचिरा दुलारा, प्यारा प्राणाधार ।।टेर।।

विश्वसेन कुल दिन मणी तुम, अचिरा सुत भगवान।
दीनों के हो नयन सितारे, जैसे जग प्रिय भान ।। १ ।।

चक्रीश्वर भी तुम कहलाये, जीते छहों खण्ड।
छिन मे छोड़ी सारी माया, आया वैराग्य प्रचण्ड ।। २ ।।

सयम लीना, तप अति कीना, दीना कर्म हटाय।
तीर्थंकर सोलहमा स्वामी, पहुचे शिवपुर माय ॥ ३ ॥

शाति प्रभु तव शरणे आयो गायो दिल धरि प्यार।
'वल्लभ मुनि' भी तुम सुमिरण से, पावे भव जल पार ॥४॥

# ※ राजुल की पुकार ※

( तर्ज—म्हाने जैपुरिया रो )

जादू वश रा सिणगार, आया आया तोरण द्वार।
व्हाला नेमजी कुमार, पाछा कु कर फिरग्या ओ अन्दाता।
कापे म्हारी आंतडली ॥टेर।

थे जद आया जान बणाय, म्हारो हुलस्यो हियो सवाय।
म्हारी आशा लौ ने कु'कर बुझाग्या ओ म्हारा अन्दाता।
कांपे म्हारी आतडली ॥ १ ॥

लाजो जादूवा री जान, कहसी नेमीजी अज्ञान।
थोडी आगे की विचार्या बिना, कू कर भाग्याओ अन्दाता।
कांपे म्हारी आतडली ॥ २ ॥

कीनी पशुओं पे थे करुणा, जिणसू' पाछा होग्या फिरणा।
थोडी म्हा पर भी दया री दृष्टि, करता ओ म्हारा अन्दाता।
कापे म्हारी आतडली ॥ ३ ॥

प्रीती आठ भवां री थारी-म्हारी भूल गया क्यू' सारी।
थे तो छिटका दी छिनक मे, वैरागी बण ने अन्दाता।
कापे म्हारी आतडली ॥ ४ ॥

लागी चातक ज्यू दिल आशा, गिणगिण काढ्या कई मासा।
दे दे दिलडा ने दिलासा, शांति राखी ओ म्हारा अन्दाता।
कापे म्हारी आतडली ॥ ५ ॥

थे तो देकर बरसी दान, लीनो संयम पाया ज्ञान ।
मै भी पाछी नीं रेवूलाँ स्वामी आऊं लारे अन्दाता ।
पालूं पूरी प्रीतडली ।। ६ ।।

लेइ ने दीक्षा करम काट, प्रभु रा पेली शिवपुर ठाट ।
पाया पाया हो अजर ने अमर सुख सती जी ।
पाली पूरी प्रीतडली ।। ७ ।।

धन धन राजुल ने भगवान, शां को करस्यां नित म्हे ध्यान ।
जिण सूं करमां रा बधण म्हांरा ढीला पडसीओ अन्दाता ।
आनन्द 'वल्लभ' बरतासी ।। ८ ।।

# पार्श्व स्तुति-१

( तर्ज—देख तेरे संसार की )

आज मनाए पार्श्व जयन्ती, गाये मिल गुणगान ।
जय जय पार्श्वनाथ भगवान ।।टेर।।
जय तीर्थंकर, विश्व हितकर, जिनपति देव महान ।। जय ।।

अश्वसेन सुत आप कहाये, बामा दे माता के जाये ।
नगर बनारस अति सुखपाये, जन्म भूमि प्रभु की कहलाये ।
जन्मोत्सव करने को आये, सुरपति देव महान ।। जय १ ।।

निर्भय हो मिथ्यात्व मिटाया, नाग दम्पती जलते बचाया ।
कमठ चित्त मे द्वेष भराया, देव असुर बन ठन वह आया ।
समय देख उपसर्ग किये पर, रहे सुमेरु समान ।। जय २ ।।

संयम लेकर तप अति कीना, आखिर केवल को ले लीना ।
दे उपदेश दया रंग भीना, भवजल पार भविक को कीना ।
काट दिये कर्मों के बन्धन, गए मोक्ष दरम्यान ।। जय ३।।

पार्श्व प्रभु से अरजी मेरी, शीघ्र मिटे भव भव की फेरी ।
इसमें अब ना होवे देरी, और मिले मुक्ति का मेरी ।
'वल्लभ' मुनि तारक है जग में, एक प्रभु का ध्यान ।। जय ४।।

# पार्श्व स्तुति—२

( तर्ज—खम्मा खम्मा खम्मा म्हारा वीर )

घणी घणी खम्मा रे पारस जिनराज ने,
म्हारी आधि व्याधि चूरण हारो जियो,
तेवीसवां तीर्थंकर दिनमणी,
मेट्यो अज्ञान अंधारो जियो ।। घणी० टेर ।।

बामाजी रो प्यारो पिता अश्व रो दुलारो,
लियो काशीपुर में अवतारो जियो,
तीन ज्ञान ले गर्भ मे आया प्रभु,
वे तो नाम जिस्यो गुण धारो जियो ।। घणी० १ ।।

बाल पणां मांही योगी कमठ को,
वे तो गर्व मिटावण वारो जियो,
नाग दम्पती जलता बचाया,
वां ने शरण दियो नवकारो जियो ।। घणी० २ ।।

दोनु ही भवनपति देवता में उपन्यां,
वे तो प्रभु रा हुआ अनुचारो जियो,
कमठ धुतारो बण मेघमाली देवता,
ऊ तो दिया उपसर्ग अपारो जियो ।। घणी० ३ ।।

प्रभुजी तो मेरु सम अडिग ही रहिया,
काई समता रस अनुसारो जियो,
करम काट ने केवल पाया प्रभु,
ज्ञानी बण्या अविकारो जियो ।। घणी० ४ ।।

चार तीर्थ की करी स्थापना,
वे तो तीर्थंकर हितकारो जियो,
भवि जीवां ने तार आप खुद,
गया मुगती मझारो जिओ ।। घणी० ५ ।।

तिर्यंच ने भी तार्या प्रभुजी,
म्हारे मिनख जमारो जियो,
ज्यूँ त्यूँ करी ने अबके म्हारो,
कर दीज्यो उद्धारो जियो ।। घणी० ६ ।।

म्हारा गुरु 'पन्ना' उपकारी,
ज्यांरो शरण लियो चरणा रो जियो,
'बाल' मुनि 'वल्लभ' मुनि गावे,
गायन तव सुगुणां रो जियो ।। घणी० ७ ।।



# पारस प्रार्थना-३

( तर्ज—जो आनन्द मगल चाहो रे )

जो पारस प्रभु ने ध्यावे जी,
बरतावे मगल माल ।।टेर।।

प्रभु अश्वसेन के नंदा, मां वामा के सुख कदा,
तन नील वरण सोहन्ता जी ।। बर० १ ।।

प्रभु चिंतामणी कहलावे, सब चिंता शोक नसावे,
जो भक्ति युक्त नित ध्यावे जी ।। बर० २ ।।

दिल दया सिंधु लहराया, झट जलता नाग बचाया,
जग का मिथ्यात्व मिटाया जी ।। बर० ३ ।।

हम भक्तों को लो अपना, ज्यूं मिटे त्रिविध यह तपना,
हो सफल हमारा जपना जी ।। बर० ४ ।।

गुरु राज 'प्राज्ञ' उपकारी, श्रद्धेय पूज्य गुणधारी,
हम जावें नित बलिहारी जी ।। बर० ५ ।।

हो कृपा सिद्धि पद पावे, यह 'बाल' व 'वल्लभ' चावे,
रच विजयनगर में गावे जी ।। बर० ६ ।।

# पारस योगी संवाद—४

( तर्ज—मेरी छोटी सी है नाव )

बोले पारस कुमार, देके कड़ी फटकार,
सुनो कमठ धुतार, पाखण्ड मचा दिया जोर का ।।टेर।।

तू पचाग्नि तप यह तपता, होता धर्म धर्म यों जपता,
कैसा रचाया है ढ़ोग, खम्मा खम्मा करे लोग,
नही देखे योगायोग, पाखण्ड .... .... ।।१।।

रमा भस्मी बना तू फक्कड़, चारों ओर जला रहा लक्कड़,
हिसा हो रही अथाग, इसमे जल रहे नाग,
तेरे फूट गये भाग, पाखण्ड . ।।२।।

आके जोश मे योगी बोला, अयि राजकुमर तू भोला,
क्या तू समझे है नादान, नहीं धर्म की पिछान,
खाली करे खीचातान, धर्म का मर्म समझ लो .. . ।।३।।

है जहा दया, तहां धर्म है, होती हिंसा वहां अधर्म है,
बोले अवधि ज्ञान वान, सुन ले अरे तू अज्ञान,
नही समझे धर्म ध्यान, पाखण्ड मचा . ... . . ।।४।।

चली चर्चा बहुत ही वहा पर, आखिर चीरा पारस नें लक्कड़,
निकले दम्पति भुजग, सभी देख हुए दग,
किया योगी मान भग, पाखण्ड मिटा दिया विश्व का ... ।।५।।

झुलसे सर्पो को मन्त्र सुनाया, समता भावों मे रमण कराया,
हुए धरणेन्द्र देव, पद्मावती तत्खेव,
करी पारस की सेव, पाखण्ड मिटा ... .... .... ।।६।।

जहा सर्पों को तुमने तारा, क्या मैं सेवक नही हूं तुम्हारा,
तो फिर क्यो नही उद्धार, करो विनती स्वीकार,
नही रूलू मैं संसार, पार उतारो मेरी जहाज को ... . . ।।७।।

श्री 'पन्ना' गुरु उपकारी, ज्यांरी चरण शरण मैं धारी,
साल इक्की पोष मास, कृष्णा दसमी दिन खास,
करे 'वल्लभ' अरदास. पार उतारो ·· --- ·· ।।८।।



# पारस गुण गाथा—५

( तर्ज—कंवर तेजा रे )

गावो गावो गावो प्रभु पारस रा गुण गावो हो,
जीवन बणावो ऊंचों आपणो ।।टेर।।

वाराणसी नगरी में, घर घर बँटी वधायाँ हो,
पोष बदी तो दसमी रे दिना ।।१।।

अश्वसेन भूप रे घर, आनन्द सवायो हो,
वामा माता री पूरी कूंख ने ।।२।।

कंवर पणा रा खेल खेल ने यौवन परण्या नारी हो,
पछे तो किनारो कीनो भोग सूं ।।३।।

एकदा कमठ तपसी, आयो नगरी बाहर हो,
तपे पंचाग्नि तप जोर सूं ।।४।।

चारों ओर जलावे लक्कड़, मोटा मोटा लाई हो,
भस्म रमाई सारा अंग में ।।५।।

देख तपस्या सारी जनता आई दरसण करवा हो,
हाथ जोड़ी ने महिमा गा रही ।।६।।

सुणी प्रशंसा लाखां आया, पाखण्ड पूर पूजायो हो,
जय जय कारो तो हुयो शहर में ।।७।।

पारस सुण ने ज्ञान लगायो, देख्यो पाप घणेरो हो,
दौड़ी आया रे रक्षा कारणे ॥८॥

आकर तपसी ने ललकार्यो, झूंठो ढोग रचावो हो,
पाप करे रे तू तो धाप ने ॥९॥

पचेद्री प्राणी री हिंसा, धूणी माही होवे हो,
कोई ना जोवे हो मरता जीव ने ॥१०॥

फक्कड बन तू लक्कड़ बाले, पिण नही ध्यान लगावे हो,
पाप बाँधी ने नरका जावसी ॥११॥

बात सुणी तापस री आंख्यां राती राती ह्वैगी हो,
कड कड करतो यूँ बोल्यो क्रोध मे ॥१२॥

तू कई जाणे पाप पुण्य मे, सुण राजा रा बेटा हो,
ढेढाई करे क्यूँ अठे आय ने ॥१३॥

लक्कड मे तो नाग नागनी जल रया मूरख तपसी हो,
कोरो धरम रो धोरी हो रयो ॥१४॥

धूणी सू काढ्यो है लक्कड, लोगां रे देखन्ता हो,
चीर्या सू निकल्या है नाग रु नागणी ॥१५॥

नाग नागणी झुलस्योडा ने पारस मन्त्र सुणायो हो,
भावा सू सुणियो है नवकार ने ॥१६॥

नाग दम्पति काल करी ने देव गति वे पाई हो,
वणिया है धरणेन्दर पद्मावती ॥१७॥

तपसी रो पाखण्ड देख ने, लोगाँ धिक् धिक् कीनो हो,
साधु नही यो ढोगी पापियो ॥१८॥

लाजा मरता तापस भाग्यो, पाछो नाही आयो हो,
घेस कियो है पारम नाथ सू ॥१९॥

सीधी तो नही लीधी तापस, ताणी ऊंधी खोटी हो,
.करियो निहाणो दु.ख देवणो ॥२०॥

खोटा भावां मरने कम्मठ मेघमाली बणियो हो,
वैर लेवण रो मोको जोवतो ॥२१॥

वरसी दान देई पारस नाथ संयम लीनो हो,
ध्यान कीनो है वन में जाइने ॥२२॥

मोह करम ने जीतण सारु विषय कषाय निवारी हो,
ममता उतारी सारी देह सू ॥२३॥

मौको पा उपसर्ग किया है, धूलि, जल, दानव रा हो,
प्रभुजी अचल रह्या मेरु सा ॥२४॥

धरणेन्दर पद्मावती दोनों सेवा खूब वजाई हो,
करम काटी ने केवल पामिया ॥२५॥

साँचा पारस स्वामी थे तो, नावारस रा वारस हो,
दीन दयालु करुणा रा धणी ॥२६॥

आज जयन्ती घणा हरस सूं सारा मिल मनावां हो,
थांने तो ध्यावा हो चित्त चाव सूं ॥२७॥

पूज्य प्रवर्त्तक 'कुन्दन' गुरुजी, व्याख्यानी गुरु 'सोहन' हो,
'बाल' मुनि ने 'बल्लभ' 'चांद' है ॥२८॥

शहर मेड़ता कर चौमासो मरुधर में विचरता हो,
पीपाड़ सिटी में आया प्रेम सूं ॥२९॥

मिगसर सुद चवदस ने आया शनिवार सुहावे हो,
पोप दसमी तो कीनी ठाठ सूं ॥३०॥

इगतीसा रो साल सलूणो गाथा इकतीस गाई हो,
भरी सभा में "बल्लभ" मोद सूं ॥३१॥

# महावीर स्तुति-१

( तर्ज—जय बोलो महावीर )

जय बोलो वीर जिनेश्वर की,
जिन शासन गगन दिनेश्वर की ।।टेर।।

तृशला की कुक्षी जाये थे,
सिद्धारथ जनक सुहाये थे,
उन वर्द्धमान गुण आगर की ।। जय० १ ।।

यौवन मे संयम धारा था,
कर्मो का बंधन टारा था,
उस दिव्य पुरुष परमेश्वर की ।। जय० २ ।।

अज्ञान तिमिर संयुत मन को,
उपदेश सुनाया भविजन को,
मिथ्या तम हारी दिनकर की ।। जय० ३ ।।

हिसा का तांडव छाया था,
उसको भी तुमने मिटाया था,
उस पतितोद्धारक प्रभुवर की ।। जय० ४ ।।

जिन स्याद्वाद समझाया था,
नही पक्षपात अपनाया था,
शुभ निर्मल ज्योति यतीश्वर की ।। जय० ५ ।।

श्री 'पन्ना' गुरुवर उपकारी,
थे दीन दयालु गुणधारी,
मुनि 'वाल' 'रु' 'वल्लभ' प्रियवर की ।।जय० ६।।



# महावीर स्तुति—२

(तर्ज-उठ भोर भई टुक)

श्री वीर प्रभु के चरणों में,
मैं सादर शीश झुकाता हूं,
निज आत्म ज्ञान की ज्योति जगे,
केवल यह भिक्षा चाहता हूं ॥टेर॥

मैं भान भूल कर भटक रहा,
इस चतुर्गतिक में अटक रहा,
मुझे जन्म मरण दुख खटक रहा,
इस दुख से मुक्ति चाहता हूं ॥ १ ॥

पर पुद्गल परिणति में फसकर
कर्मों के बन्धन से कस कर
निज अमित शक्ति जो मन्द हुई,
उसका अब स्पन्दन चाहता हूं ॥ २ ॥

मिथ्यात्व दशा मेरी विनसे.
और समकित शुद्ध दशा विकसे,
मुझ शुद्ध स्वरुप सदा विलसे,
यही अंतिम भिक्षा चाहता हूं ॥ ३ ॥

थे महा स्थविर श्रद्धेय प्रवर,
श्री 'प्राज्ञ चन्द्र' जी गुरु ज्ञानी,
उन पूज्य चरण के चरणो का,
भव भव में शरणा चाहता हूं ॥ ३ ॥



# महावीर स्तुति—२

( तर्ज –म्हाने राठौड़ा री बोली प्यारी )

हो म्हाने वीर जिनन्द प्यारा लागे हे मांय,
नित उठ सुमिरण म्हैं करस्यां ।। टेर ।।

प्रभु त्रिशलाजी के जाया है,
सिद्धारथ जनक सुहाया हैं,
ज्यारी कचन वरणी काया हे मांय ।। नित १ ।।

मभ्र यौवन में दीक्षा धारी,
मोह ममता सारी दी टारी,
वे तो ज्ञानी बण्यां अविकारी हे माय ।। नित २ ।।

फिर फिर कर धर्म फैलाया था,
मिथ्यात्व तिमिर को नसाया था,
कोई समकित सूर्य उगाया हे मांय ।। नित ३ ।।

कईयों का जीवन उद्धारा,
पतितो को कीना भव पारा,
जो आया शरण वो तारा हे मांय ।। निल ४ ।।

अव मैं भी शरणे आया हूं,
भव भव में अति दुख पाया हूं,
मो ही तार तार जिनराया हे मांय ।। नित ५ ।।

श्री 'पन्ना' गुरुवर सुखदाई,
ज्यांरी महिमा जग मे अति छाई,
मुनि 'वल्लभ' अरज सुनाई हे माय ।। नित ६ ।।



# वीर स्तुति- ४

(तर्ज-खम्मा खम्मा खम्मा म्हारा वीर लोकाशाह ने)

घणी घणी खम्मा म्हारा तृशला रा लाल ने,
आनन्द रंग बरसायो जियो,
मरतोड़ा बचाया जीव म्हारा अन्तर्यामी,
म्होटो उपकार करायो जियो ॥ टेर ॥

चेत सुदी तेरस भाया मझ रातरि में,
ओ तो लाखीणो रुपालो पूत जायो जियो,
सोना वर्णी काया ज्यांरी दिप दिप दीपे,
ओ तो पूनम केरो चांद सुहायो जियो ॥ १ ॥

इन्दर इन्द्राणी मिल मेरु परबत पे,
ओ तो मोटोडो मेलो मडवायो जियो,
हाथा हुलराया ने सुख बहु पाया,
ओ तो माताजी रो मोद पूरायो जियो ॥२॥

कवरपणा रा खेल खेलने कन्हैया,
वे तो संयम रो साज सजायो जियो,
कष्ट उठाया पिण घेस नहीं आण्यो,
वे तो समता रो पाठ पढ़ायो जियो ॥ ३ ॥

केवल ज्ञान पाया [illegible] मिटाया
वे तो करमा रो [illegible] जियो
[illegible]न्दाता रो नाम [illegible] गा
वे [illegible] मोड़ [illegible] ४

बाबजी अन्दाता म्हारो मुजरो [illegible]
दीज्यो दीज्यो मुख मन च[illegible]
'प्राज्ञ' गुरु शिष्य नवां [illegible]
ओ तो 'वल्लभ' जस थारो गायो जि[illegible]

# महावीर स्तुति-५

( तर्ज-वीर जिनेश्वर सोई )

लागे महावीर प्यारो, शरणो है म्हाने थांरो,
जल्दी भव जल से तारो, शरणों ॥ टेर ॥

मोह ममता मद के मांही,
फँसिया हां गहरा आई,
करुणा कर अब तो म्हाने,
बेगा ही बाहर निकारो ॥ १ ॥

केई डाकू चोर तिराया,
महा पापी पार लगाया,
करमां रो भारी भारो,
म्हां को भी वेग उतारो ॥ २ ॥

त्रिशला के लाल दुलारे,
सिद्धारथ प्राण पियारे,
आप सिवा ना कोई,
म्हांको है और सहारो ॥ ३ ॥

यूं मुनि 'बल्लभ' गुण गावे,
श्रद्धा से तुम्हें मनावे,
चरणों में वन्दन मेरा,
स्वामिन्! सविनय स्वीकारो ॥४॥



# वीर स्तुति- ६

( तर्ज-मन डोले, मेरा तन डोले )

गुण गाओ, सब जन आओ, करलो आतम सुधार रे,
यह वीर जयन्ति आई है ।। टेर ।।

माता तृशला, राय सिद्धारथ, जिनके तनुज कहाये,
चैत्र सुदी शुभ त्रयोदशी को, जन्म प्रभुजी पाये, अजी हा-
कुण्डलपुर में, सब जन उर में, छाई खुशिया अपार रे ।। यह १ ।।

भौतिक वैभव तुच्छ समझ कर त्यागी ऋद्धि सारी,
तीस बरस के मझ यौवन में, दीक्षा ली सुखकारी प्रभु ने,
परिषह जीते, समरस पीते, कीना अति उपकार रे ।। यह २ ।।

बारह वर्ष और तेरह पक्ष तक प्रभु ने तप था कीना,
घन घातिक कर्मों को जीतकर, केवलि पद को लीना-प्रभु ने
गौतम स्वामी, हुए है नामी, प्रभु के शिष्य प्रधान रे ।। यह ३ ।।

छतीस सहस्र हुई आर्जिकाए, चौदह सहस्र हुए साधु,
समोशरण में तजे शत्रुता, लगे प्रभु का जादू-अजी हा,
जिन वाणी, सुन ले प्राणी, करले बेडा पार रे ।। यह ४ ।।

चण्ड कोशिया विषधर को भी तार दिया प्रभु तुमने,
खून से सने हाथ रहते थे, तारा प्रदेशी तुमने प्रभुजी,
और अनेको, पापी जनो को, शरणे रख दिया तार रे ।। यह ५ ।।

वीर प्रभु के बनो पुजारी शुद्ध भाव रख प्यारे,
राग द्वेष और दल कलह को जड़ से दूर हटा दे-अजी हां,
दुर्मति से, बच दुर्गति से, करले शुद्ध विचार रे ।। यह ६ ।।

स्वाध्यायी बनकर के हम सब वीर वाणी फैलावे,
सच्चे देव, गुरु धर्म तत्व को '[illegible]' मुनि सुनावे-अजी हां,
शुद्धाचारी, समकितधारी, हों अटल प्रतिज्ञा धार रे ।। यह ७ ।।

---

# महावीर स्तुति-७

( तर्ज- बाजरा री पाणत करतां )

अाज तो जन जन रे मन मे खुशिया छाई,
'क' अाई आई रे महावीर जयन्ति आई ।। टेर ।।

आई रे जयन्ती एक सदेशो लाई ।
'क' उणने सुणज्यो रे सारा ही थे भाई बाई ।। १ ।।

जागो रे सिपाही किसी नीन्द या अाई ।
'क' रक्षा करो रे जिन शासन की बेला आई ।। २ ।।

अाज जो थामे ने म्हा मे अाई ढ़िलाई ।
'क' वी ने निकालो साहस धरी ज्ञान लाई ।। ३ ।।

गर जो उन्नति चाहो पाछी वाही ।
'क' ले लो अाज सूँ सज्झाय रो थे नेम भाई ।। ४ ।।

नेम ने निभावण में जो राखी सच्चाई ।
'क' जदे जयन्ती मनाबो होसी सफली भाई ।। ५ ।।

पूज्य गुरुदेव श्री पन्ना सुखदाई ।
'क' ज्या री कृपा सू 'वल्लभ' मुनि कथ गाई ।। ६ ।।



# वीर स्तुति- ६

( तर्ज-मन डोले, मेरा तन डोले )

गुण गाओ, सब जन आओ, करलो आत्म सुधार रे,
यह वीर जयन्ति आई है ॥ टेर ॥

माता तृशला, राय सिद्धारथ, जिनके तनुज कहाये,
चैत्र सुदी शुभ त्रयोदशी को, जन्म प्रभुजी पाये, अजी हां-
कुण्डलपुर में, सब जन उर में, छाई खुशियां अपार रे ॥ यह १ ॥

भौतिक वैभव तुच्छ समझ कर त्यागी ऋद्धि सारी,
तीस वरस के मझ यौवन में, दीक्षा ली सुखकारी प्रभु ने,
परिषह जीते, समरस पीते, कीना अति उपकार रे ॥ यह २ ॥

बारह वर्ष और तेरह पक्ष तक प्रभु ने तप था कीना,
घन घातिक कर्मों को जीतकर, केवलि पद को लीना-प्रभु ने
गौतम स्वामी, हुए है नामी, प्रभु के शिष्य प्रधान रे ॥ यह ३ ॥

छतीस सहस्र हुई आर्जिकाए, चौदह सहस्र हुए साधू,
समोशरण मे तजे शत्रुता, लगे प्रभु का जादू-अजी हां,
जिन वाणी, सुन ले प्राणी, करले बेड़ा पार रे ॥ यह ४ ॥

चण्ड कोशिया विषधर को भी तार दिया प्रभु तुमने,
खून से सने हाथ रहते थे, तारा प्रदेशी तुमने-प्रभुजी,
और अनेको, पापी जनों को, शरणे रख दिया तार रे ॥ यह ५ ॥

वीर प्रभु के बनो पुजारी शुद्ध भाव रख प्यारे,
राग द्वेष और दन कलह को जड़ से दूर हटा रे-अरे हां,
दुर्मति से, बच दुर्गति से, करलो शुद्ध विचार रे ॥ यह ६ ॥

स्वाध्यायी बनकर के हम सब वीर वाणी फैलाते,
सच्चे देव, गुरु धर्म तत्व को 'वल्लभ' मुनि सुनाते-अजी हां,
शुद्धाचारी, समकितधारी, हों अटल प्रतिज्ञा धार रे ॥ यह ७ ॥

---

# महावीर स्तुति-७

( तर्ज- बाजरा री पाणत करतां )

आज तो जन जन रे मन में खुशिया छाई,
'क' आई आई रे महावीर जयन्ति आई ।। टेर ।।

आई रे जयन्ती एक सदेशो लाई ।
'क' उणने सुणज्यो रे सारा ही थे भाई बाई ।। १ ।।

जागो रे सिपाही किसी नीन्द या आई ।
'क' रक्षा करो रे जिन शासन की वेला आई ।। २ ।।

आज जो थामे ने म्हां मे आई ढिलाई ।
'क' वी ने निकालो साहस धरी ज्ञान लाई ।। ३ ।।

गर जो उन्नति चाहो पाछी वाही ।
'क' ले लो आज सूँ सज्झाय रो थे नेम भाई ।। ४ ।।

नेम ने निभावण मे जो राखी सच्चाई ।
'क' जदे जयन्ती मनाबो होसी सफली भाई ।। ५ ।।

पूज्य गुरुदेव श्री पन्ना सुखदाई ।
'क' ज्या री कृपा सू 'वल्लभ' मुनि कथ गाई ।। ६ ।।



# वीर निर्वाण-८

(तर्ज—बाजरा री पाणत करता)

आज तो भगवान रो निर्वाण दिन आयो,
"क"ए तो चोवीसमां तीर्थंकर प्रभुजी मोक्ष पद पायो ॥टेर॥

त्रिशलाजी रा जाया, राजा सिद्धारथ रा बेटा,
"क"ए तो महावीरजी साधना मे खूब रया सेठा ॥१॥

साढ़ी बारह साल ताही, घोर साधना कीनी,
"क"ए तो कर्मा री फौजा ने भाई जीत जो लीनी ॥२॥

केवली होई ने कीनी तीरथ थापणा,
"क" ए तो तीर्थंकर होग्या रे भाई अन्तिम आपणा ॥३॥

तीस साल तक तीर्थंकर री पदवी भोगी,
"क"ए तो बाद में पाया रे गुणस्थान अजोगी ॥४॥

देह ने छोड प्रभुजी तो मुगती सिधाया,
"क" थोड़ी देर का पछे तो गौतम केवल पद पाया ॥५॥

पच्चीसो दो साल हुआ है, सिद्ध पद ने पाया,
"क" आ तो साल तीसरी लागगी है सुणल्यो भाया ॥६॥

विजयनगर रा चौमासा मे "बल्लभ" गुण गावे,
"क" सिद्धि पावेगा वोही जो रत्नत्रयी ने आराधे ॥७॥

---

# भगवत्प्रार्थना

(तर्ज— मे क्या करू नाथ)

भज लो भक्ति से भगवान, पार होवेगी नैय्या ।
कहते ज्ञान के निधान, पार .... ॥ टेर ॥

भक्ति से भजा था प्रभु को सेठजो सुदर्शन,
शूली से बना था जिनके सोने का सिहासन ।
करे सभी यशोगान ॥पार ... .... ॥१॥

सतीजी सोमा ने प्रभु को निश्चल मन से धारा,
बना था फूलों का हार नाग लो था काला ।
हुए सभी समकितवान ॥पार . .... ॥२॥

जाप जो जपा था प्रभु का तस्कर दृढ़सूर ने,
करेगा सफल वो काम, कर्म दल को चूर ने ।
करे किन किन का आख्यान ॥पार . .. ॥३॥

पूज्य गुरुदेव श्री 'पन्ना' थे उपकारी,
बाल औ "वल्लभ" मुनि जाते है बलिहारी ।
हमे देना शुद्ध ज्ञान ॥पार . .. . ॥४॥

# जिनवाणी - प्रार्थना-१

(तर्ज—वीणा वादिनी ऐसा वर दो)

श्री जिन वाणी दिल मे धर लो,
भवसागर फिर सत्वर तिर लो ॥टेर॥

ज्यूं भूखा नर भोजन पावे,
उस पर ही वह ध्यान लगावे ।
त्यूं यह अमृत जी भर भर लो ॥श्री० ॥१॥

शुद्ध भाव से जो कोई ध्याता—
अपनी नैय्या पार लगाता ।
पाता सुख वह अजर अमर लो ॥ श्री० ॥२॥

पापी भी यदि इसको सुन ले,
निश्चय ही वह शिव पथ चुन ले ।
जग 'वल्लभ' वह बनता नर लो ॥ श्री० ॥३॥

---

# जिनवाणी - प्रार्थना-२

( तर्ज—सो सौ जोडूं हाथ ए मायड़ )

सो सौ जोडूं हाथ ए मायड़,
झुक झुक कर जोडूं हाथ ए मायड़।
म्हांने मोक्ष बताय दे ए ॥
सुण ले ए जिनवाणी मायड़,
म्हांरी विनती सुन ले ए मायड़।
म्हाने मोक्ष बताय दे ए ॥ टेर ॥
भव भव रुलता इण भव माही,
थांरो मिलियो जोग ए।
अब तू म्हारी सुध लो सारी,
जिण सूं नासे रोग ए ॥सो० १॥
माता तू मैं सन्तति थारी,
म्हांरी ओर निहाल ए।
म्हांरी कैसी होगी अवस्था,
कैसी बिगड़ी चाल ए ॥सो० २॥
विषय कषाय को पुतलो होकर,
पडियो मिथ्यामत्त ए।
छांडो शुद्ध स्वभाव ने हूं,
फसियो उलटी गत्त ए ॥सो० ३॥
जग में पूत कपूत हो जावे,
मात कुमात न थाव ए।
ओही थारो बिड़द विचारी,
म्हांरा पासे आव ए ॥सो० ४॥
जद तू म्हारा पासे आसी,
करस्यूं पूरी सेव ए।
थां ने खूब रिझाय ने मैं,
पास्यूं सुख नित मेव ए ॥सो० ५॥
म्हारा श्री 'पन्ना' गुरु पाने,
अब के पूरी पिछाण ए।
जीनी 'सज्जन' हिरदय धारी,
पावे उत्तम ज्ञान ए ॥सो० ६॥

खण्ड ४

स
व
न
वि
भा
ग

## ( गुरु )

सौ सौ चन्दा ऊगिया,
सूरज उग्या हजार ।
तोहि उजारो ना हुओ,
गुरु बिन घोर अंधार ।।



卐 सद्गुरु स्तुति

卐 नानक गुरु स्तुति

卐 लिछमन गुरु स्तुति

卐 रेणु गुरु स्तुति

卐 प्राज्ञ गुरु स्तुति

卐 छोट गुरु स्तुति

卐 कुन्दन गुरु स्तुति

卐 मोहन गुरु स्तुति

# वन्दे सद्गुरूम्

(तर्ज— आओ बच्चों ! तुम्हें दिखाए)

आओ मित्रो ! सब मिल गाये, गुरूवर के गुण गान को ।
विधि सहित वन्दन भी करलें, गुरूदेव गुणवान को ।।
वन्दे सद्गुरूम्... वन्दे सद्गुरूम् . वन्दे सद्गुरूम् ।। टेर ।।

राग-द्वेष और कषाय वर्धक, इस संसार असार से,
विमुख होय के पंच महाव्रत, किये अंगीकृत प्यार से ।
धन्य कोटिशः कोटि धन्य है, ऐसे इन पुण्यवान को ।।विधि० १।।

जिन वचनानुकूल जिन्होंने अपना जीवन कीना है,
भव सागर से तिरने हेतु, उत्तम संयम लीना है ।
सत्वर तत्पर बने, हटाने कर्म शत्रु बलवान को ।।विधि० २।

भगवन ने परिषह फरमाये, द्वादश दस प्रकार के,
सहते है सब गुरूवर उनको, सहन शीलता धार के,
क्षमाशील बन शील धर्म का, दिया सदेश जहान को ।।विधि० ३।।

कुमति हारक, सुमति कारक, तारकहो तुम भव्यो के,
पार करन मे डगमग नैय्या. सच्चे नाविक भव्यों के ।
कृपा सिन्धु हो, दीन बन्धु हो, प्रिय हो भव्य जनान को ।।४।

पूज्य प्रवर्त्तक गुरुदेव श्री पन्नालालजी थे स्वामी,
जिन शासन के उज्ज्वल तारे, रत्नत्रय के गुणधामी ।
'बाल' मुनि 'वल्लभ' मुनि मण्डल, पाये दिव्य उड़ान को ।।विधि० ५ ।

# रखो दिल आशा

( तर्ज—पल पल बीते उमरिया )

गुरुवर के गुण गाने से, होवे कर्मों का नाशा ।
रखो दिल आशा - आशा - रखो ।। टेर ।।

शुद्ध भाव से जो गुरु के गुण गाते हैं—गाते है ।
श्रद्धा रख उत्कृष्ट रसायन लाते हैं—लाते है ।।
तीर्थङ्कर गोत्र उपाते वे, ज्ञाता सूत्तर मे देखो—
मल्लि जिन रासा — रासा — रखो ।।१।।

पच महाव्रत पाले, पचाचारी है, आचारी है ।
पंच समिति से समित, गुप्ति के धारी है, धारी है ।।
कनक कामिनी के त्यागी, है जो वैरागी पूरे—
उनके हम दासा — दासा — रखो ।। २ ।।

गुरु वचनों पर जो कोई नर, चलते है—चलते है ।
पाप ताप सताप, उन्ही के टलते हैं—टलते हैं ।।
शुद्ध स्वरूपी बनकर वे, ज्योति मे ज्योति समाते—
हटा कर्म पाशा — पाशा — रखो ।। ३ ।।

पूजनीय श्री पन्ना मेरे, गुणाकर है—गुणाकर है ।
रत्नत्रय के सच्चे साधक, दिनकर है—दिनकर है ।।
'बाल' मुनि 'चन्दन' दोनों, गुरु का आनन्द मनाते—
रहे हम दासा — दासा — रखो ।।४।।



# * गुरु वन्दन *

(तर्ज —उठ भोर भई, टुक जाग सही)

विधि युक्त वन्दना करते है, गुरुराज तुम्हारे चरणो मे ।
मन वच तन तीनो अर्पित है, गुरुराज ।।टेर।।

तुम पच महाव्रत धारी हो, उपकारी गुण भडारी हो ।
बलिहारी नित हम जाते है, गुरुराज ।।१।।

तुम रत्नत्रय के साधक हो, आश्रव बन्धन के बाधक हो ।
आराधक आनन्द पाते है, गुरुराज ।।२।।

दीनो के आप दयालु हो, भवियों के परम कृपालु हो ।
हम अपना शीश झुकाते है, गुरुराज ।।३।।

उपदेश तुम्हारा अमृत सा, नव जीवन का सचार करे ।
हर्षित हो सुनने आते है, गुरुराज ।।४।।

तुम काम क्रोध के त्यागी हो, जिन्न आज्ञा के अनुरागी हो ।
सौभागी वह जो प्रेम करे गुरुराज, ।।५।।

गुरुराज 'प्राज्ञ' जग प्यारे थे, जिन शासन के उजियारे थे ।
मुनि 'बाल' रु 'वल्लभ' अनुचर है, गुरुराज ।।६।।

# :: पूज्य शासण रा सैनानी ::

(तर्ज—म्हाने जैपुरिया रो लहरियो)

पूज्य शासण रा सैनानी ध्यानी पडित सुज्ञानी,
म्हाणी विधियुत वदणा ने, झेलो व्हाला गुरु सा-
चरणन बलिहारी ।।टेर।।

थे हो शासण रा सिरताज, थाणी वाणी सिंह री गाज,
नित नित सुणवा ने उमाया, भविजन आवे व्हाला गुरुसा-
चरणन बलिहारी ।।१।।

# रखो दिल आशा

( तर्ज—पल पल बीते उमरिया )

गुरूवर के गुण गाने से, होवे कर्मों का नाशा ।
रखो दिल आशा - आशा - रखो ॥ टेर ॥

शुद्ध भाव से जो गुरु के गुण गाते हैं—गाते हैं ।
श्रद्धा रख उत्कृष्ट रसायन लाते है—लाते है ॥
तीर्थङ्कर गोत्र उपाते वे, ज्ञाता सूत्तर में देखो—
मल्लि जिन रासा — रासा — रखो ॥१॥

पंच महाव्रत पाले, पचाचारी है, आचारी है ।
पंच समिति से समित, गुप्ति के धारी है, धारी है ॥
कनक कामिनी के त्यागी, है जो वैरागी पूरे—
उनके हम दासा — दासा — रखो ॥ २ ॥

गुरू वचनों पर जो कोई नर, चलते है—चलते हैं ।
पाप ताप सताप, उन्ही के टलते हैं—टलते है ॥
शुद्ध स्वरूपी बनकर वे, ज्योति में ज्योति समाते—
हटा कर्म पाशा — पाशा — रखो ॥ ३ ॥

पूजनीय श्री पन्ना मेरे, गुरुवर वे—गुरुवर वे ।
रत्नत्रय के सच्चे साधक, हितकर वे—हितकर वे ॥
'चाल' मुनि 'वल्लभ' दोनो, गुण गा आनन्द मनावे-
रटे हर श्वासा — श्वासा — रखो ॥ ४ ॥



# * गुरु वन्दन *

(तर्ज —उठ भोर भई, टुक जाग सही)

विधि युक्त वन्दना करते है, गुरुराज तुम्हारे चरणों मे ।
मन वच तन तीनो अर्पित है, गुरुराज ।।टेर।।

तुम पंच महाव्रत धारी हो, उपकारी गुण भडारी हो ।
बलिहारी नित हम जाते है, गुरुराज ।।१।।

तुम रत्नत्रय के साधक हो, आश्रव बन्धन के बाधक हो ।
आराधक आनन्द पाते है, गुरुराज ।।२।।

दीनो के आप दयालु हों, भवियों के परम कृपालु हो ।
हम अपना शीश झुकाते हैं, गुरुराज ।।३।।

उपदेश तुम्हारा अमृत सा, नव जीवन का सचार करे ।
हर्षित हो सुनने आते है, गुरुराज ।।४।।

तुम काम क्रोध के त्यागी हो, जिन्न आज्ञा के अनुरागी हो ।
सौभागी वह जो प्रेम करे गुरुराज, ।।५।।

गुरुराज 'प्राज्ञ' जग प्यारे थे, जिन शासन के उजियारे थे ।
मुनि 'बाल' रु 'वल्लभ' अनुचर है, गुरुराज ।।६।।

# :: पूज्य शासण रा सैनानी ::

(तर्ज—म्हाने जैपुरिया रो लहरियो)

पूज्य शासण रा सैनानी ध्यानी पडित सुज्ञानी,
म्हाणी विधियुत वदणा ने, भेलो व्हाला गुरु सा-
चरणन बलिहारी ।।टेर।।

थे हो शासण रा सिरताज, थाणी वाणी सिह री गाज,
नित नित सुणवा ने उमाया, भविजन आवे व्हाला गुरुसा-
चरणन बलिहारी ।।१।।

थे हो सूरज सा तेजस्वी, थाणी सूरतड़ी ओजस्वी,
ज्यांरा दरसण करवा जनता दौड़ी, आवे म्हाला गुरुसा-
चरणन बलिहारी ।।२।।
थे हो चंदा ज्यूं शीतल, प्रतिभाषणी हो विमल,
त्रयताप ने मिटाई शांति आपे हो म्हाला गुरुसा-
चरणन बलिहारी ।।३।।
थे हो केसरी ज्यूं सूरा, ज्यांरा चमक रह्या है नूरा,
थे तो करी रह्या करमां रा चूरा ओ म्हाला गुरुसा-
चरणन बलिहारी ।।४।।
थे हो सागर ज्यूं गंभीरा, पूरा धरणी ज्यूं हो धीरा,
थे तो बाईस परीसा नित वेवो म्हाला गुरुसा-
चरणन बलिहारी ।।५।।
थे तो रत्नत्रय आराध, लीना कारज अपणा साध
शिष्य 'बाल' रु 'वल्लभ' नित वन्दे ओ म्हाला गुरु सा-
चरणन बलिहारी ।।६।।

## गुरु महिमा गान

(तर्ज—थारी मोह माया ने छोड)

गुरुदेव तुम्हे हम बार बार रटते है ।
जिससे कि हमारे अशुभ कर्म कटते है ।।टेर।।
हो आप समिति मे समित, गुप्ति के धारी ।
हो पंच महाव्रत पालक शुद्धाचारी ।।
उपसर्ग देख शिव पथ से नही हटते है ।। जिससे १।।
इस पंचम आरे माहि, नहीं अरिहंता ।
है नही केवली, मन, अवधि गुणवन्ता ।।
बस एक सहारा, तेरा ही रटते हैं ।। जिससे २ ।।
हो धर्म दीप तुम मिथ्या - तिमिर भगाते ।
हो धर्म देव भक्तों को पार लगाते ।।
अतएव तेरे वचनों पर हम डटते है ।। जिससे ३ ।।
श्रद्धा से जो 'वल्लभ', वन्दन करते ।
वे कोटि कोटि जन्मों के दुष्कृत हरते ;
फिर रत्नत्रय पा शाश्वत, शिव को वरते है ।। जिससे ४ ।।

# नानक गुरु स्तुति १

(तर्ज—जय बोलो महावीर स्वामी की)

जय बोलो नानक गुरुवर की, आचार्य देव महिमा धर की ।।टेर।।

पूज्य राज धर्म अवतारी थे, गभीर गुणों के धारी थे ।
शासन मणि, धर्म धुरन्धर की ।। जय० १ ।।

जिसने मिथ्यात्व हटाया था, समकित का सूर्य उगाया था ।
उस गंगानन्दन गणिवर की ।। जय० २ ।।

महाकिरण पिता के लाल तुम्हे, वन्दन है शत शत बार तुम्हे ।
मुनि 'वल्लभ' विश्व हितकर की ।। जय० ३ ।।

# आचार्य गुण कीर्तिका २

(तर्ज—नगरी नगरी द्वारे द्वारे ढूढू रे)

पूज्य सिरी आचार्य प्रवर्तक, नानक गुरु हमारे थे ।
जैन धर्म के प्रबल प्रचारक, भव्यजनो के प्यारे थे ।।टेर।।

जीवराज जी प्रथम पूज्य थे, जैन धर्म चमकाया था ।
लाल अमोलक जैन सघ का, पूज्य लाल मन भाया था ।।
भव सिधु मे डूबे भवि को, द्वीप समान सहारे थे ।। पूज्य० १ ।।

मिथ्यातम नाशन को आये, दीपचन्द्रजी पूज्य रे ।
श्री मलूक थे दीप शिष्य, और थे देवो से पूज्य रे ।।
परम पूज्य श्री नानक गुरुवर, इनके शिष्य सितारे थे ।। पूज्य० २ ।।

वीर वचन के बन अनुयायी, जप, तप, त्याग बढ़ाया था ।
घोर परिषह आये सम्मुख, पद पीछे न हटाया था ।।
बढे निरन्तर आगे आगे, सहन शीलता वाले थे ।। पूज्य० ३ ।।

खण्डन कीना था पाखण्ड का, जिन वचनो का मण्डन रे ।
शांति, धीरता, सम दमता से, काटे कर्म के बधन रे ।।
त्याग, विराग की दिव्य प्रभा से, बहुत क्षेत्र उजियारे थे ।। पूज्य० ४ ।।

महा मुनिवर ! धर्म प्राण ! तुम, रत्नत्रय साकार थे ।
भव्य जनो को 'वल्लभ' थे, तुम और हृदय के हार थे ।।
कोटि कोटि वन्दन है तुमको, तुम ही भाग्य हमारे थे ।। पूज्य० ५ ।।

# नानक गुरु स्तुति १

(तर्ज—जय बोलो महावीर स्वामी की)

जय बोलो नानक गुरुवर की, आचार्य देव महिमा धर की ।।टेर।।

पूज्य राज धर्म अवतारी थे, गभीर गुणो के धारी थे ।
शासन मणि, धर्म धुरन्धर की ।। जय० १ ।।

जिसने मिथ्यात्व हटाया था, समकित का सूर्य उगाया था ।
उस गगानन्दन गणित्वर की ।। जय० २ ।।

महाकिरण पिता के लाल तुम्हे, वन्दन है शत शत बार तुम्हे ।
मुनि 'बल्लभ' विश्व हितकर की ।। जय० ३ ।।

# आचार्य गुण कीर्तिका २

(तर्ज—नगरी नगरी द्वारे द्वारे ढू ढू रे)

पूज्य सिरी आचार्य प्रवर्तक, नानक गुरु हमारे थे ।
जैन धर्म के प्रबल प्रचारक, भव्यजनो के प्यारे थे ।।टेर।।

जीवराज जी प्रथम पूज्य थे, जैन धर्म चमकाया था ।
लाल अमोलक जैन सघ का, पूज्य लाल मन भाया था ।।
भव सिधु मे डूबे भवि को, द्वीप समान सहारे थे ।। पूज्य० १ ।।

मिथ्यातम नाशन को आये, दीपचन्द्रजी पूज्य रे ।
श्री मलूक थे दीप शिष्य, और थे देवो से पूज्य रे ।।
परम पूज्य श्री नानक गुरुवर, इनके शिष्य सितारे थे ।। पूज्य० २ ।।

वीर वचन के बन अनुयायी, जप, तप, त्याग बढ़ाया था ।
घोर परिषह आये सम्मुख, पद पीछे न हटाया था ।।
बढे निरन्तर आगे आगे, सहन शीलता वाले थे ।। पूज्य० ३ ।।

खण्डन कीना था पाखण्ड का, जिन वचनो का मण्डन रे ।
शाति, धीरता, सम दमता से, काटे कर्म के बधन रे ।।
त्याग, विराग की दिव्य प्रभा से, बहुत क्षेत्र उजियारे थे ।। पूज्य० ४ ।।

महा मुनिवर ! धर्म प्राण ! तुम, रत्नत्रय साकार थे ।
भव्य जनो को 'बल्लभ' थे, तुम और हृदय के हार थे ।।
कोटि कोटि वन्दन है तुमको, तुम ही भाग्य हमारे थे ।। पूज्य० ५ ।।

# आचार्य - नाम - महिमाष्टक - ४

(तर्ज- नित पार्श्व जपो श्री जिन रुड़ो)

पूज्य नानक गुरुवर हुए भारी, जिन शासन महिमा विस्तारी ।
घट घट मे ज्ञान प्रकाश, करे जो नानक गुरू को ध्यान धरे ।।१।।

पूज्य राज गुणी थे गुणरागी,
त्यागी ने तपसी वैरागी ।
गगा सुत सबके पाप हरे ।। जो २ ।।

मिथ्यात्व तिमिर को दूर किया,
समकित का सबको बोध दिया ।
महाकिरण सूर्य सम ज्योति भरे ।। जो. ३ ।।

जो भक्तिभाव से नाम रटे,
उसके दुख दारिद शोक मिटे,
घर घर मे मगल मोद भरे ।। जो. ४ ।।

पूज्य नाम से व्याधि दूर रहे,
तन स्वस्थ रहे, सुख शांति रहे ।
मन इच्छित सब ही काज सरे ।। जो. ५ ।।

पूज्य नाम से रिपु भी मित्र बने,
निन्दक भी पूजक शीघ्र वने ।
नित जीत मिले जहां पैर धरे ।। जो. ६ ।।

पूज्य नाम तणी महिमा छाजे,
सब डायणि सायणि भय भांजे ।
और राज कचहरी फतह करे ।। जो ७ ।।

श्रद्धा से सब ही आस फले,
और रत्नत्रय का लाभ मिले ।
जग 'वल्लभ' हो जग में विचरे ।। जो. ८।।

---

# पूज्य वन्दन - ३

(तर्ज- आंधी आये, तूफां आये)

परिषह आये, संकट छाये, फिर भी किया प्रचार रे ।
उन्हीं पूज्य श्री नानक गुरु को, वन्दन हो स्वीकार रे ।। टेर ।।

मिथ्यातम जब जोरों से आ, जन मानस पर छाया था ।
निज पथ का कर त्याग यदा, पर पथ पर कदम बढ़ाया था ।।
तब प्रकटाया ज्योति देने, श्री नानक दिनकार रे ।। उन्हीं १ ।।

धर्म नाम पर भ्रान्त धारणा, व अज्ञान दशा आई ।
तपस्तेज की दिव्य रश्मि तब, भव्य दिलों तक पहुंचाई ।।
शुद्ध धर्म का मर्म बताकर, कीना बहुत सुधार रे ।। उन्हीं २ ।।

देख प्रतिष्ठा पाखण्डी तब, मन ही मन अकुलाये थे ।
देने आपको कष्ट अनेकों दुष्प्रपंच फैलाये थे ।।
धार धीर धरणी सम संकट, दीने सभी निवार रे ।। उन्हीं ३ ।।

अनुपम विरति देख जिन्हों की, दौड़ दौड़ भवी आते थे ।
जिनवाणी का अमृत पीकर, मन ही मन हरसाते थे ।।
भवसागर में गिरते भवि का, किया त्वरित उद्धार रे ।। उन्हीं ४ ।।

उस शासन के सेनानी ने, डगमग शासन चमकाया ।
सम्यग्दर्शन, ज्ञान, क्रिया, मय मोक्ष मग को बतलाया ।।
'प्राज्ञ' कहत मुनि 'चन्दन' नित हो चरणों में बलिहार रे ।। उन्हीं ५ ।।

---

# आचार्य - नाम - महिमाष्टक - ४

(तर्ज- नित पार्श्व जपो श्री जिन रुड़ो)

पूज्य नानक गुरुवर हुए भारी, जिन शासन महिमा विस्तारी ।
घट घट मे ज्ञान प्रकाश, करे जो नानक गुरू को ध्यान धरे ।।१।।

पूज्य राज गुणी थे गुणरागी,
त्यागी ने तपसी वैरागी ।
गगा सुत सबके पाप हरे ।। जो २ ।।

मिथ्यात्व तिमिर को दूर किया,
समकित का सबको बोध दिया ।
महाकिरण सूर्य सम ज्योति भरे ।। जो. ३ ।।

जो भक्तिभाव से नाम रटे,
उसके दुख दारिद शोक मिटे,
घर घर मे मगल मोद भरे ।। जो. ४ ।।

पूज्य नाम से व्याधि दूर रहे,
तन स्वस्थ रहे, सुख शाति रहे ।
मन इच्छित सब ही काज सरे ।। जो. ५ ।।

पूज्य नाम से रिपु भी मित्र बने,
निन्दक भी पूजक शीघ्र बने ।
नित जीत मिले जहां पैर धरे ।। जो. ६ ।।

पूज्य नाम तणी महिमा छाजे,
सब डायणि सायणि भय भांजे ।
और राज कचहरी फतह करे ।। जो ७ ।।

श्रद्धा से सब ही आस फले,
और रत्नत्रय का लाभ मिले ।
जग 'वल्लभ' हो जग में विचरे ।। जो. ८।।

———

# लिछमण गुरु स्तुति - १

( तर्ज- घूंसो बाज्यो रे )

जय बोलो रे लिछमन गुरुवर की - जय बोलो ॥ टेर ॥

विनय पिता के प्राण पियारे, चम्पा मां के सुतवर को ॥ जय० १ ॥
पादू रूपारेल में जनमें, महिमा आंचलिया गोत्तर की ॥ जय० २ ॥
शादी के सब साधन तज के, दीक्षा लीनो जिनवर की ॥ जय० ३ ॥
जप तप रत्नत्रय को साधी, ज्योति जगाई अन्तर की ॥ जय० ४ ॥
वचन सिद्धि थी जिनमें जबरी, जपाचर लब्धिधर की ॥ जय० ५ ॥
जो नित जाप जपे गुरु सा रो, पग पग जीत उसी नर की ॥ जय० ६ ॥
आधि व्याधि सब चिन्ता चूरे, आशा पूरे 'वल्लभ' की ॥ जय० ७ ॥

# दादा - गुरु महिमाष्टक - २

(तर्ज- नित पार्श्व जपो श्री जिन रुडो)

गुरु वीरभाण की सुन वाणी,
वैराग्य लियो उत्तम प्राणी ।
नित चाव चढ्यो शुद्ध संयम रो,
श्री लिछमन गुरु को ध्यान धरो ॥ १ ॥

गम्भीर भ्रात की नाव लई,
सब ममता घर की त्याग दई ।
आराधन कीनो [illegible] ॥ श्री० २ ॥

गुरु लब्धिवन्त गुणधारी ने,
और वचन सिद्ध सुखकारी ने ।
जगती में [illegible] ॥ श्री० ३ ॥

[illegible] पादू में गुरु जाये ने,
मां चम्पा [illegible] ।
आंचलिया [illegible] ॥ श्री० ४ ॥

गुरू आत्म शक्ति के महाधनी,
श्री नानक गच्छ के मुकुटमणी ।
उनके वचनों पर कदम भरो ।। श्री ५ ।।

ओम् लब्धिधारिणे नमो नमो,
ह्रीँ लिछमन गुरवे नमो नमो ।
सब चिन्ता व्याधि दूर हरो ।। श्री ६ ।।

सकट की घडिया आन पडे,
जो दुष्ट विरोधी तान खडे ।
गुरु नाम लियां टल जाय परो ।। श्री ७ ।।

शुध भावों से गुरू नाम जपो,
तुम मिथ्यामत में मती डफो ।
'वल्लभ' मुनि परमानन्द वरो ।। श्री ८ ।।

# रेण मुनीश्वर स्तुति

**(तर्ज- चांदनी ढ़ल जायगी)**

हिल मिल आओ, सद्‌गुण गाओ,
गुरू हितकारी रे, महिमा भारी रे ।। टेर ।।

उन्नीसो छत्तीस में, पचमी वसन्त मे ।
हुए अवतारो रे ।। महिमा १ ।।

देव किरण जी तात थे, वन मालो विख्यात थे ।
जालिया मझारी रे ।। महिमा २ ।।

विजय गुरूवर ज्ञानी थे, रत्नत्रय के खानी थे ।
शिष्यता स्वीकारी रे ।। महिमा ३ ।।

जेष्ठ सुदी एकम, विक्रम सवत बावन ।
बने अणगारी रे ।। महिमा ४ ।।

सोकलिया में दीक्षा ली, सविनय सच्ची शिक्षा ली ।
ज्ञान के भण्डारी रे ॥ महिमा ५ ॥

पुष्कर तीर्थ राज में, छियासी चौमास में ।
स्वर्ग सिधारी रे ॥ महिमा ६ ॥

गुरुदेव धूलचन्द, मिटा सभी कर्म फंद ।
बनो अविकारी रे ॥ महिमा ७ ॥

ये है अन्तर्भावना, 'वल्लभ' गुण गावना ।
होवे जयकारी रे ॥ महिमा ८ ॥

# रेणु मुनीश्वर स्तुति-२

## ( तर्ज- घूंसो बाज्यो रे )

जय बोलो रे धूल मुनीश्वर को, जय बोलो ॥टेर॥

देव किरण के सुत तुम नीके,
माली वंश उजागर को ॥ १ ॥

ग्राम चालिया जन्म भूमि है,
ज्ञानी ध्यानी श्रुतधर को ॥ २ ॥

विजय गुरु के वीर शिष्य ने,
आज्ञा पाली जिनवर की ॥ ३ ॥

रत्न त्रय की शुद्ध आराधना,
मार्ग बढ़ाई शिवपुर की ॥ ४ ॥

पन्ना गुरु के भाग्य विधाता,
जय हो जग सुधाकर की ॥ ५ ॥

मुनि 'वल्लभ' गुण भक्ति [illegible]
यही भावना प्रभुवर की ॥ ६ ॥
जय बोलो रे रेणु मुनीश्वर की जय बोलो ॥

प्राज्ञ - स्तुति

# मेरे गुरुवर ! मेरे दयाल

( तर्ज - मेरे नगपति मेरे विशाल )

मेरे गुरूवर ! मेरे दयाल !!

बाल्यकाल से सयम लेकर,
पंच महाव्रत निर्मल पाल ।
बने श्रमण वीरों के किरीट,
मेरे जीवन के दिव्य भाल ॥
मेरे गुरूवर ! मेरे दयाल ॥ १ ॥

'बालचन्द' सम जगत्पूज्य जे,
तुलसा सम थे निर्मलतर ।
मरूधरीय नागौर प्रान्त मे,
जन्म भूमि थी कीतलसर ॥
मुक्ता गुरु के प्रेम पात्र थे,
शिष्य प्रवर थे अति सुखमाल ॥ मेरे २ ॥

श्री गजमल रेणु गुरुवर की,
सविनय सादर आज्ञा पाल ।
स्वमत परमत सिद्धान्तों का,
कीना चिन्तन मनन विशाल ॥
फिर स्वपर कल्याण साधना,
हेतु बने तत्पर तत्काल ॥ मेरे ३ ॥

जैन सघ सम्बुद्ध किया था,
दे उपदेश दया रस सार ।
दया द्रवित हो जैन सघ मे,
किये अनेकों ही उपकार ॥
नानक श्रावक समिति सस्था,
निर्बाध गति से चल रही चाल ॥मेरे ४॥

जिस समय मूक चतुष्पदों पर,
हा ! आन पड़ा था कष्ट कराल ।
धर्म नाम पर बली चढ़ाते,
तीक्ष्ण खड्ग कंठों पर डाल ॥
ऐसे निर्दय व्यवहारों को,
कृपया तुमने दीना टाल ॥ मेरे ५ ॥

युग युग तक भी याद रहेगा,
बहु विध संघ सदा दिन रात ।
युग युगान्त गर्वोन्नत होगा,
पाकर आपका कृपा प्रसाद ॥
'श्री स्वाध्यायी संघ' आपको,
'अमरदेन' है 'रक्षा ढाल' ॥ मेरे ६ ॥

यतिवर ! देख तुम्हारा तेज,
मानव वृन्द बना चाकर ।
हिंसक वृत्ति त्याग चरण में,
तन मस्तक सिर् बना आकर ॥
दया सुधा का किया पान औ,
चरण स्पर्श कर बना निहाल ॥ मेरे ७ ॥

व्याख्यान आपका जिन श्रोताओं,
मानों केहरी की गुंजार ।
सुनकर अभिमान भाग गये
और भाग गये पाखण्ड अपार ॥
श्रोता भक्त मुग्ध हो कहते,
धन्य धन्य गुरु 'जवाहर लाल' ॥ मेरे ८ ॥



# * जय जय गुरुदेवा *

## ( तर्ज- जय महावीर प्रभो )

जय जय गुरूदेवा स्वामी जय जय गुरूदेवा ।
नर पति मुनिजन करते, चरण कमल सेवा ।।ओम्।।टेर।।

बालचन्दजी पिता आपके, तुलसाजी माता - स्वामी ।
कीतलसर में जन्मे, जग जन सुखदाता ।।ओम् १।।

उन्नीसौ पैतालि भादवा, सुदी तीज सोहे - स्वामी ।
जन्म महोत्सव कर कर, नागर मन मोहे ।।ओम् २।।

बारह वर्ष की ऊमर माही, सयम स्वीकारा - स्वामी ।
श्री मोती गुरूवर के, शिष्य बने प्यारा ।।ओम् ३।।

ज्ञान ध्यान को खूब बढ़ाया, जप तप अपनाया-स्वामी ।
छात्रालय खुलवाया, पशु वध रूकवाया ।।ओम् ४।।

दीन सहायक सब विधि लायक नायक तुम नामी-स्वामी ।
श्री स्वाध्यायी संघ के, सत्प्रेरक स्वामी ।।ओम्. ५।।

जैन जगत के उज्जवल तारे, तारक भविजन के-स्वामी ।
पच महाव्रत धारक, वारक दूषण के ।।ओम् ६।।

सद्गुण सागर धर्म उजागर, तुम हो उपकारी - स्वामी ।
वन्दन निशिदिन करते, चरणन वलिहारी ।।ओम् ७।।

पूर्ण दयालु, परम कृपालु, हो तुम ही त्राता - स्वामी ।
'वालमुनि' 'वल्लभ' को, शुध्द सयम दाता ।।ओम् ८।।

---

जिस ममय मूक चतुष्पदों पर,
हा ! आन पडा था कष्ट कराल ।
धर्म नाम पर बली चढ़ाते,
तीक्ष्ण खड्ग कंठो पर डाल ।।
ऐसे निर्दय व्यवहारों को,
कृपया तुमने दीना टाल ।। मेरे ५ ।।

युग युग तक भी याद करेगा,
चहु विध संघ सदा दिन रात ।
युग युगान्त गर्वोन्नत होगा,
पाकर आपका कृपा प्रसाद ।।
'श्री स्वाध्यायी सघ' आपकी,
'अमरदेन' है 'रक्षा ढाल' ।। मेरे ६ ।।

यतिवर ! देख तुम्हारा तेज,
मानव वृन्द बना चाकर ।
हिंसक वृत्ति त्याग चरण मे,
तन मस्तक सिंह बना आकर ।।
दया सुधा का किया पान औ,
चरण स्पर्श कर बना निहाल ।।मेरे ७।।

व्याख्यान आपका प्रिय ओजस्वी,
मानो केहरी की गूंजार ।
सुनकर भविजन जाग गये
और भाग गये पाखण्डी स्यार ।।
श्रोता मन्त्र मुग्ध हो कहते,
धन्य धन्य गुरू 'पन्नालाल' ।। मेरे ८ ।।



# * जय जय गुरुदेवा *

( तर्ज- जय महावीर प्रभो )

जय जय गुरूदेवा स्वामी जय जय गुरूदेवा ।
नर पति मुनिजन करते, चरण कमल सेवा ।।ओम्।।टेर।।

बालचन्दजी पिता आपके, तुलसाजी माता - स्वामी ।
कीतलसर में जन्मे, जग जन सुखदाता ।।ओम् १।।

उन्नीसौ पैंतालि भादवा, सुदी तीज सोहे - स्वामी ।
जन्म महोत्सव कर कर, नागर मन मोहे ।।ओम् २।।

बारह वर्ष की ऊमर माही, सयम स्वोकारा - स्वामी ।
श्री मोती गुरूवर के, शिष्य बने प्यारा ।।ओम् ३।।

ज्ञान ध्यान को खूब बढाया, जप तप अपनाया-स्वामी ।
छात्रालय खुलवाया, पशु वध रूकवाया ।।ओम् ४।।

दीन सहायक सब विधि लायक नायक तुम नामी-स्वामी ।
श्री स्वाध्यायी संघ के, सत्प्रेरक स्वामी ।।ओम्. ५।।

जैन जगत के उज्जवल तारे, तारक भविजन के-स्वामी ।
पच महाव्रत धारक, वारक दूषण के ।।ओम् ६।।

सद्गुण सागर धर्म उजागर, तुम हो उपकारी - स्वामी ।
वन्दन निशिदिन करते, चरणन वलिहारी ।।ओम् ७।।

पूर्ण दयालु, परम कृपालु, हो तुम ही त्राता - स्वामी ।
'बालमुनि' 'बल्लभ' को, शुध सयम दाता ।।ओम् ८।।

---

# 卐 जय बोलो 卐

## (तर्ज- जय बोलो महावीर)

जय बोलो प्राज्ञ मुनीश्वर की ।
श्री पूज्य प्रवर्त्तक गुरूवर की ।।टेर।।

तुम तुलसा तनय दुलारे थे,
श्री बाल पिता के प्यारे थे।
थी जन्म भूमि कीतलसर की ।। जय. १ ।।

लघु वय में संयम लीना था,
फिर काम क्रोध तज दीना था ।
जय मोती गुरू के शिष्यवर की ।। जय २ ।।

जिनवाणी की बिगुले बागी,
सोती हुई जनता फिर जागी ।
वाणी सुन केसरी मरूधर की ।। जय. ३ ।।

श्री नानक समिति फड बना,
स्वधर्मी की सेवा करना ।
समझी जिसने पीडा पर की ।। जय ४ ।।

छात्रालय की महिमा जहारी,
जहां पढे छात्र गण सुखकारी ।
यों घर घर धर्म ध्वजा फरकी ।। जय० ५ ।।

स्वाध्यायी संघ बना करके,
जिन धर्म की ज्योति जगा कर के ।
जिन शासन सेवा जी भर की ।। जय० ६ ।।

गुरू दीनन के प्रति पालक है,
भवियों के संकट टालक हैं।
मुनि 'बाल रु 'बल्लभ' हितकर की ।।जय० ७ ।।

★★

# गुरूवरजी दीनदयाल

[ तर्ज–जो आनन्द मंगल चाहो रे ]

अरजी पर मरजी करना जी, गुरुवर जी दीन दयाल । टेर ।
हो आप महा गुण आगर, समतादि धर्म के सागर ।
जिन शासन के हो उजागर जी ।। गुरु० १ ।।

दिया अभय दान गुरुवर ने, जो जाते थे पशु मरने ।
दिल दया धर्म को धरने जी ।। गुरु० २ ।।

गुरुदेव पूर्ण ब्रह्मचारी सिर झुका दिया धर प्यारी ।
वह केसरी था बहुभारी जी ।। गुरु० ३ ।।

दे रत्न त्रय जिनवाणी, बहु तारे आपने प्राणी ।
मै शरण लियो पहिचानी जी ।। गुरु० ४ ।।

मुनि 'बल्लभ' की यह अरजी, धर प्यार सुनो गुरुवर जी ।
भव पार करो मोहे सत्वरजी ।। गुरु० ५ ।।

——

# – लाखों प्रणाम –

[ तर्ज – काली कमली वाले ]

श्री पन्ना गुरुदेव, तुमको लाखों प्रणाम ।। टेर ।।
'बालचन्द्र' के बालक प्यारे, 'तुलसा' मां के नन्द दुलारे ।
सबके नयन सितारे । तुमको १ ।।
बचपन में रत्न त्रय धारा, काम क्रोध को दूर निवारा ।
धारा ज्ञान अपारा ।। तुमको २ ।।
श्री स्वाध्यायी सघ बनाया, जो सब ही जन मन को भाया ।
धर्मोद्योत कराया ।। तुमको ३ ।।
हिंसाएं भी बन्द कराई, दया धर्म की ध्वजा फहराई ।
अभयदान सुख दायी ।। तुमको ४ ।।
जय हो गुरुवर सदा तुम्हारी, भव्य भावना यही हमारी ।
मुनि 'बल्लभ' गुणधारी ।। तुमको ५ ।।

# – गुण गाले –

[ तर्ज—मन डोले-मेरा तन डोले ]

गुण गाले, गुरु गुण गाले, तेरा होवेगा उद्धार रे
यह गुण गाने की बेला है । टेर ।
मरुधर केसरी पद से विभूषित, प्रवर्त्तक महाज्ञानी ।
प्रांत मन्त्री गुरुदेव श्री जी, 'प्राज्ञ चन्द्र' सुखदानी, गुरुवर ।
बाल पिता के, मां तुलसा के, तुम हो नयन सितार रे ॥ यह १ ॥

बाल्यकाल में त्यागी बन कर हुए मुनिव्रत धारी,
पंच महाव्रत, छह काया का, व्रत लीना स्वीकारी- गुरु ने
ब्रह्मचारी, पर उपकारी, है महिमा अपरम्पार रे ॥ यह २ ॥

वाणी आपकी मधुर मनोहर मधु सम है हितकारी,
कष्ट निवारी भवोदधितारी जा सुन ले नर नारी, वाणी को
उन सब का, जन्म मरण का, मिट जावे संसार रे ॥ यह ३ ॥

पूर्ण दया कर गुरुदेव ने पशु वध बन्द कराया,
फिर नहीं होगी हिंसा ऐसा शिलालेख रुपवाया-भक्तों ने
गुरुवर की, पूज्य प्रवर की, होवे जय जयकार रे ॥ यह ४ ॥

भवभव में गुरुदेव श्री जी रत्न त्रय को पावे,
कर्म खपा कर सभी अन्त मे अजर अमर हो जावे गुरुजी
'बाल' मुनि के, 'वल्लभ' मुनि के, तेरा है आधार रे ॥ यह ५ ॥

——

# धन जिन मार्ग दिपायो

[ तर्ज : धन्ना मुनि धन मानव भव पायो ]

पन्ना मुनि, धन जिन मार्ग दिपायो, दसों दिशि यश फैलायो । टेर ।

कीतलसर सोहे मरुधर मे, जन्म तिहा तुम पायो ।
बाल को लाल सदा सुखकारी, तुलसा कूंख दिपायो ।। पन्ना १ ।।

द्वादश वर्ष की ऊमर मॉही, मुक्ता गुरू दर्शन पायो ।
सुन उपदेश विराग सुहायो, सयम मे चित्त चायो ।। पन्ना २ ।।

नम्र बनी सहु आगम सीख्या, जप तप तेज बढ़ायो ।
सम्यग्दर्शन, ज्ञान चारित्तर, रत्न त्रय अपनायो ।। पन्ना ३ ।।

व्याख्यान शैली है अति अद्भुत, सुनि-सुनि जन हरषायो ।
मद सहु गाल्यो पाखडी को, धर्म को मर्म बतायो ।। पन्ना ४ ।।

बहुत गुणों के धारक हो तुम, ताँ को पार न पायो ।
अल्प मति किंचित गुण मुख से 'बाल' रू वल्लभ गायो ।। पन्ना ५ ।।

— -

# गावांला गुणगान

( तर्ज : खेलन दो गणगौर )

गावांला गुण गान, गुरू सा रा, गावांला गुण गान ।
ए जी ए तो प्यारा है प्राण समान । गुरू सा० टेर ।

मरूधर देश सलूनो जहां पर, कीतलसर है ग्राम ।
ए जी जहाँ पे जन्म्या सद्गुण खान ।। गुरू सा० १ ।।

बालू रो लाडलो लाल है, यो तुलसा हियरो हार ।
ए जी ज्याँ री महिमा अपरम्पार ।। गुरू सा० । २ ।।

बालक वय में सयम धार्यो, मोती गुरुवर पास ।
ए जी ज्यां सू लीनो ज्ञान प्रकाश ।। गुरू सा० ३।।

पशु वध वन्द कराय गुरूने, कीनो अति उपकार ।
ए जी ए तो दान अभय दातार ।। गुरू सा० ४ ।।

स्वाध्यायी सघ खोल के स्वामी, लीनो शोभ सवाय ।
ए जी जिन शासन दियो चमकाय ।। गुरु सा० ५ ।।

दीन सहाय लायक हो तुम गुण रो नहीं कुछ पार ।
ए जी मैं तो बलिहारी बार हजार ।। गुरू सा० ६ ।।

गुरू आज्ञा से 'बाल' रु 'वल्लभ' गाय रह्या मुख मोद ।
ए जी थे तो बैठो गुरूजी री गोद ।। गुरू सा० ७ ।।

# वन्दन हजार है

( तर्ज — छुप छुप आते हो )

श्री पन्ना गुरू की जय जयकार है ।
वन्दन हजार है जी वन्दन हजार है ।.टेर।।

जन्म भूमि कितल शहर सुखदाई है,
पिता बालचन्द माता तुलसा सुहाई है जी ।
भादवा सुदी तीज लिया अवतार है ।। वन्दन. १ ।।

मोती से निर्मल गुरू मोतीलालजी,
जिन्होंने किया है शिष्य पन्ना को निहालजी हा-
बाल ब्रह्मचारी बने मुनि सुकुमार है ।.वन्दन. २।।

अज्ञान तिमिर को हटाया सद्ज्ञान से,
विवेक वैराग्य मय क्षमा रस ध्यान से जी ।
दया की पवित्र गगा वही हितकार है ।।वन्दन. ३।।

नानक छात्रालय, स्वाध्यायी सघ है,
मोक्षपुरी जाने की यह सीढ़ी उतु ग है जी ।
चढ़ चढ़ पा रहे भवि भवपार है ।।वन्दन ४।।

दीन जन हितकारी समिति खुलाई है,
करी खूब सघ सेवा, दीन के सहाई है जी ।
गुण तो अनेक, एक मेरे रसधार है ।।वन्दन. ५।।

जनम दिवस आज आयो गुरुराज को,
मनायो खुशी से, भाग्य जग्यो है समाज को जी-
'बाल' मुनि 'वल्लभ' के गुरू ही आधार है ।।व ६।।

---

# गुरुदेव की जय जयकार है

( तर्ज — जरा सामने तो आओ )

जरा प्रेम सहित तुम बोलिये, गुरुदेव की जय जयकार है।
जो ध्यावे उसी भवि जीव का, भव सिन्धु से बेड़ा पार है ।। टेर ।।

'तुलसा' के प्यारे, हृदय सितारे, 'बालचन्द्रजी' के लाल हैं।
बाल ब्रह्मचारी, पर उपकारी, नाम जिन्हों का पन्नालाल है।
ग्राम कीतलसहर मारवाड़ है, जहां लिया गुरु ने अवतार है ।। १ ।।

मोती से उज्ज्वल, मोती गुरु से, रत्नत्रय को धार लिया।
गुरुवर की भक्ति, कर यथा शक्ति, जीवन को श्रेष्ठ बनाय लिया ।।
कर विनय गुरु की हर बार है, लिया ज्ञान भी धार अपार है ।। २ ।।

वीर सिपाही, सद्गुण ग्राही, धीर वीर गम्भीर के ।
सघ सुधारक, प्रबल प्रचारक, बने आप जिन वीर के ।।
गुरुदेव दया के आगार हैं, और किये अनेकों उपकार है ।। ३ ।।

गुरुकुल भी खोला, बहुत अमोला, दीन छात्र जहां पढ़ते हैं।
स्वाध्यायी सघ है, सीढ़ी उत्तुंग है, भव्य जीव जहा चढ़ते है।
जो करते धर्म प्रचार है, उन्हे वन्दन भी बारम्बर है ।। ४ ।।

कुरीति रोकी, हिंसा भी रोकी, दीन पशु निर्भय कीने।
मुक्ति का फूल है, धर्म का मूल है, जीओ और दो जीने ।।
उपदेश दिया हितकार है, जो दान अभय दातार है ।। ५ ।।

ज्ञान के आगर, धर्म उजागर, सागर हो आप गुण रत्नों के।
लीना जो शरणा, मुक्ति है तिरणा, भव जल में आतम प्रयत्नों से ।।
मुनि 'वल्लभ' चरण नमस्कार है, तारें अर्ज यह बारम्बार है ।। ६ ।।

---

# घणी घणी खम्मा

( तर्ज — घणी घणी खम्मा म्हारा वीर )

घणी घणी खम्मा म्हारा 'पन्ना' गुरु राज ने,
धरम री ज्योति जगाई जियो ।
नगर नगर और डगर डगर पर,
आप री महिमा छाई जियो ।।घणी०।। टेर ।।

मरुधर मांही जन्म लियो और कीतलसर सुखदाई जियो ।
'बालचन्द्रजी' पिता आपरा, माता 'तुलसाबाई' जियो ।। घणी० १ ।।

मोती गुरु का चेला बणिया, नानक सम्प्रदा माही जियो ।
ज्ञान, दरस, चारित्र आराधी, आश्रव दिया हटाई जियो ।। घणी० २ ।।

पूरण बाल ब्रह्मचारी आप हो, चमके कान्ति सवाई जियो ।
देख तेज चरणा मे आपरे, मस्तक सिह झुकाई दियो ।। घणी० ३ ।।

छात्रालय मे दीन छात्र को, मिले निःशुल्क पढाई जियो ।
विधवाओ की सेवा हेतु, नानक समिति खुलवाई जियो ।। घणी० ४ ।।

एक काम तो अनुपम करियो, मैं कांई करूं वड़ाई जियो ।
सारो देश ही शोभा कर रह्यो, मुक्त कठ से गाई जियो ।। घणी० ५ ।।

'श्री स्वाध्यायी सघ' बणायो, साल चौराण माही जियो ।
पर्यूषण मे धरम ध्यान की, सेवा रह्यो बजाई जियो ।। घणी० ६ ।।

अभयदान भी मूक पशु ने, दियो दया चित्त लाई जियो ।
चावण्डिया, धनोप, घनेड़ा, पुष्कर, तिलौरा माहो जियो ।। घणी० ७ ।।

काई म्हे गुण गावा आपरा, जिह्वा एक ही पाई जियो ।
क्रोड जिह्वा हो फिर भी गुण की, सीमा कबहूं न आई जियो । घणी० ८ ।।

अबके म्हारो करो उद्धारो, चरण शरण लियो आई जियो ।
'बाल' मुनि 'वल्लभ' दोनो हो, जोड ममूदा गाई जियो ।। घणी० ९ ।।

# * जन्म जयन्ती *

( तर्ज — घुड़लो घूमेला जी घूमेला )

है जन्म जयन्ती आज, गुरु की जय बोलो जी जय बोलो।
ए जी मिलकर सकल समाज गुरु की . . ॥ टेर ॥

श्री 'पन्ना' गुरु था उपकारी,
पूज्य प्रवर्त्तक पदवी धारी ।
ए जी तिरण तारण री जहाज—गुरुकी ॥ १ ॥

बालपणा सूं था ब्रह्मचारी,
कीरत ज्यांरी जग विस्तारी ।
रही प्रतिभा रवि ज्यूं छाज—गुरुकी ॥ २ ॥

वे अमृत वाणी बोला हा,
भवियां रा हृदय खोला हा ।
ए जी करता घन ज्यूं गाज—गुरुकी ॥ ३ ॥

जिन मारग ने खूब दिपायो,
लाबो भी लीनो मन चायो ।
वे बण्यां श्रमण सिरताज—गुरुकी ॥ ४ ॥

कर्म काट मुक्ति थे पाज्यो,
अर्ज करूं पुरुषार्थ बढाज्यो ।
'किंकर' की अरदास—गुरुकी ॥ ३ ॥



# श्री पन्ना गुरु महिमाष्टक

( तर्ज — नित पार्श्व जपो श्री जिन रुडो )

गुरु राज हुआ पनजी म्होटा, जिन चरणां रा सब लो ओटा ।
यश लाभ हुवे जग मे नीको, नित नाम जपो गुरु पनजी को ।। १ ।।

गुरु 'बालचन्द्र' सम प्यारे थे,
निकलक नित्य उजियारे थे ।
अमृत बरसायो वाणी को ।। नित० २ ।।

गुरु 'तुलसा' सम गुणकारी थे,
शुभ समकित सौरभ धारी थे ।
भव रोग हर्‌यो केई प्राणी को ।। नित० ३ ।।

जिन शासन की यह फुलवारी,
दे ज्ञान सुधा सींचो भारी ।
उस शासन रक्षक "माली" को ।। नित० ४ ।।

जिन शास्त्रो से चुन चुन "मोती"
चमकाई जवरी जिन ज्योति ।
स्वाध्यायी सघ रच्यो टीको ।। नित० ५ ।।

गुरु संघ सुधारक वर नामी,
थे दीन दयालु हितकामी ।
उन पूज्य प्रवर्त्तक स्वामी को ।। नित० ६ ।।

विश्वास धरो दिल मांही खरो,
तुम यन्त्र मन्त्र से नाही डरो ।
पकरो शुद्ध मारग नेकी को ।। नित० ७ ।।

'वल्लभ' मुनि गुरु का गुण गावे,
मानस मे श्रद्धा युत ध्यावे ।
रत्नत्रय तेज वधे तीखो ।। नित० ८ ।।

# ओ ! मेरे गुरु प्राणाधार !!

( तर्ज — मेरे नगपति मेरे विशाल )

ओ ! मेरे गुरू प्राणाधार !!

विना कहे ही आप अचानक, छोड़ गये क्यों स्वर्ग मझार !!
ओ ! मेरे गुरू प्राणाधार ।। लय ।।

**( वि० सं० २०२४ माघ शुक्ला ५ की बात है )**

प्रातः प्रतिक्रमण की आज्ञा लेने को जब हुए तैयार,
इतने में इक भाई आकर बोला ऐसे सोच विचार ।
गुरूवर के है दर्द अधिक यों मिला फोन हमको इस बार,
सूर्योदय होते ही जावे, विजयनगर को आप पधार ।।
पर मेरा तो मन कहता है - शायद जावें स्वर्ग सिधार ।। ओ० १ ।।

कभी नहीं हो सकता ऐसा, पुनः फोन से पूछो हाल,
शायद सर्दी से घुटनों मे दर्द हुआ होगा विकराल ।
गये वक्त भी ऐसा ही कुछ दर्द हो गया था तत्काल,
अतः सूचना वापिस लाओ, चले गए मुनि देवीवाल ।।
उन भाई के वचनों को मन नहीं कर रहा था स्वीकार ।। ओ० २ ।।

प्रतिक्रमण कर तीनों मुनिवर जब करने को प्रत्याख्यान,
घटे हुए तब उसी भ्रात ने वहीं सुनाया फिर आख्यान ।
प्रतिलेखन हम करें तभी जब पूर्व दिशा में निकले भान,
किन्तु वह थोड़ी सी वेला हम जाती थी वर्ष समान ।।
प्रतिलेखन कर शीघ्र बाद में [illegible] ने किया विहार ।। ओ० ३ ।।

रह रह करके राह बीच में सोच रहा था दिलो दिमाग,
वीर प्रभु की सच्ची वाणी जीवन है पानी का झाग।
इसे विलय मे देर न लगती ज्यों मिटता संध्या का राग,
त्यो ही क्या सचमुच में गुरुवर स्वर्ग पधारे देह को त्याग ।।
इतना सब कुछ होने पर भी मेरा मन कर रहा इन्कार ।। ओ० ४ ।।

बिजयनगर मे आकर देखा, बड़े पाट पर रहे बिराज,
वही कातिमय देह और था वही भव्य भाल विभ्राज।
जब मै आता 'आ रे बल्लू' कह यो सिर पर धरते हाथ,
पर क्यों आंखे मीच ध्यान मे, बिन बोले बैठे है आज ।।
देख देख फिर देखा मैने तब आया मन मे एतबार ।। ओ० ५ ।।

निर्वाणवर्ती काउस्सग के बाद हृदय मे उठा विचार,
चौथे आरे जैसी गुरू ने कीनी आज हमारी लार।
गौतम को श्री वीर प्रभु ने दूर किया वैसे इस बार,
तीन दिनो के खातिर हमको भेज दिया सरिता के पार ।।
(खारी नदी के उत्तरी तट पर बिजयनगर एव दक्षिणी-
तट पर गुलाबपुरा बसा हुआ है)
तन से दूर हुए हो गुरुवर ! मानस मे कर रहे विहार ।। ओ० ६ ।।

मोती गुरु का पन्ना कहा है ? कहा रेणु गज गुरु का लाल ?
नानक गण का पूज्य कहां वह ? कहां चतुर्विध संघ की ढाल ?
कहा गरीबो का आश्रय वह ? कहां अनाथो का रिछपाल ?
कहां सरलता की वह मूर्ति ? कहा दया का सिन्धु विशाल ?
कहा ज्ञान दर्शन चरित्र का, आराधक वह गुण भण्डार ? ।। ओ० ७ ।।

पंच महाव्रत धारी कहां है ? पंच समिति से समित सुजान,
तीन गुप्ति से गुप्त कहां वह ? परिषह-जेता सिंह समान ।
ब्रह्मचर्य, यश तेज तपस्या का, स्वामी वह प्रतिभावान,
कहां गया है महा मनस्वी, आन बान का धनी महान ?
पुष्पों सा मृदु, कठिन व्रज सा, दिल वाला वह कहा अणगार ? ॥ओ० ८॥

जैन जगत का स्तम्भ कहा वह ? कहां संगठन का दृढ़ प्राण ?
कहा जैन शासन का दीपक, जगमग करता ज्योतिर्मान ?
कहां मरुधर मुनियों का नेता ? शांत हृदय जल निधिप्रमाण,
शांति दूत, क्षमा का सागर, महा तपस्वी वह पुन्यवान ॥
सत्य साधना कर तुमने तो धन्य धन्य कीना अवतार ॥ ओ० ९ ॥

छोट मुनि के साथी साधक, कुन्दन मुनि के प्राणाधार,
सोहन मुनि के कृपा छत्र और बाल मुनि के हिय के हार ।
'वल्लभ' के सर्वस्व आत्मा, चांद मुनि का तारणहार,
सहसा सब को छोड़, त्वरित ही चले गये तुम स्वर्ग मझार ।
पल पल क्षण क्षण याद तुम्हारी आती हम को हिये अपार ॥ ओ० १० ॥



# : म्हासूं बोलो जी :

[ तर्ज : बोल बोल म्हारा ऋषभ कन्हैया ]

बोलो बोलो म्हारा गुरूजी ! मौन क्यूं धारीजी
म्हासूं बोलोजी ।। टेर ।।

जद मैं आतो शीश झुकातो माथे हाथ धर देता जी ।
बिन बोल्या म्हारा सूं गुरुवर कदियन रहताजी ।। म्हासूं १ ।।

पास बिठा मीठी बोली सूं थे पूछ्या सुख साता जी ।
घणी देर तक ज्ञान ध्यान की करता वातां जी ।। म्हासूं २ ।।

'वल्लू - वल्लू' जद फरमाता दौड़ झटापट आतो जी ।
हेज हिया रो पाय आप रो हरषित थातो जी ।। म्हासू ३ ।।

पिण नी बोलो आज गुरुवर, कई अपराध मैं करियोजी ।
होवे सो फरमावो स्वामी, मौन क्यूं धरियोजी ।। म्हासू ४ ।।

बोलण वाला तो गया चाली जो नित शिक्षा करताजी ।
ज्ञान दरस चारित री बातां हिय मे भरता जी ।। म्हासू ५ ।।

केवल ओ तो देह आपरो दीख रह्यो है म्हाने जी ।
पिण ओलम्भो एक आज मैं देऊ थाने जी ।। म्हासू ६ ।।

म्हाने थे दूरा क्यूं भेज्या माघ सुदी द्वितीया ने जी ।
पांचम ने क्यू स्वर्ग सिधाया छाने माने जी ।। म्हासूं ७ ।।

(जब नही बोले तब)

खैर आपरा मारग पे मैं चालूंला धर प्रेमोजी
ओ ही आज करे 'वल्लुडो' हियमे नेमो जी ।। म्हा०

# - छोड़ गया गुरुराज -

(तर्ज :- खेलण दो गणगोर)

छोड़ गया गुरुराज, अचानक छोड़ गया गुरुराज ।
हे जी म्हासूं बिन बोल्या महाराज ॥ टेर ॥

दीन दयालु, दीन सहायक, दीन जनो के ताज ।
हे जी कोई दीन दुख्या री जहाज ॥ अचा० १ ॥

महा मनस्वी, महा यशस्वी महा तपस्वी राज ।
हे जी कोई महापुरुष महाराज ॥ अचा० २ ॥

जिन चरणां री शरण लिया सूं शीघ्र सुधरता काज ।
हे जी कोई सब दुख जाता भाज ॥ अचा० ३ ॥

श्री जिन वाणी म्हाने सुणाता कर कर सिंह ज्यूं गाज ।
हे जी ज्यांरो हो सबने ही साज । अचा० ४ ॥

हे जग तारक ! हे जग वल्लभ ! तुमको जैन समाज ।
हे जी कोई याद करे सुबह सांझ ॥ अचा० ५ ॥



## — सवैया —

कोइक पावत है ऋषि - सगत, कोइक लाभ उठावत [illegible] ।
कोइक शास्त्र सुनै समुझै पुनि, कोइक हो [illegible] ।
कोइक को रुचि जागत है पर, कोइक [illegible] ।
कोइक पार लगावत '[illegible]', कोइक [illegible] ॥

# : जन जन के प्राण सहारे :

[ तर्ज : जब तुम्ही चले परदेश ]

गुरुदेव हमें यों छोड, कि मुखडा मोड, जो स्वर्ग पधारे ।
जन जन के प्राण सहारे ।। टेर ।।

जब समय आपने जान लिया, फिर क्यो कर हमको दूर किया ।
यह वीर गौतम सा दृश्य देख रहे मारे ।। जन० १ ।।

क्यों वन गये इतने निर्मोही, नही रखा पास में हमको ही ।
विन कहे हमे कुछ झटपट स्वर्ग सिधारे ।। जन० २ ।।

जब प्रात: उठ आसीन हुए, और वीर भजन मे लीन हुए ।
बस माला फिराते प्रभु की शरण पधारे ।। जन० ३ ।।

चेहरा तो गहरा चमक उठा, मानों सूरज ही आन डटा ।
वह ब्रह्मचर्य का तेज खिला उणियारे ।। जन० ४ ।।

हे श्रमण श्रेष्ठ ! हे यशोधनी ! हे सघ प्राण ! हे शिरोमणी ।
हे जैन जगत के जगमग दिव्य सितारे ।। जन० ५ ।

तुम कर्म कटक पर जय पाना, और नित्य निरजन बन जाना ।
यह तिरना भवोदधि सब के तारण हारे ।। जन० ६ ।।

अब कहा मिलेगा गुरु ऐसा, हे दीन दयालो ! तुम जैसा ।
बस तेरी याद मे 'वल्लभ' नाम उच्चारे ।। जन० ७ ।।



# आवे ओल्यूं आज

[ तर्ज : म्हारा राम रघुनाथ ] (लोक गीत)

म्हारा प्यारा गुरुराज आपरा गुणाँ री म्हाने आवे ओल्यूं आज ॥ टेर ॥

जी की पर भी आफत पडती, सभी बिगड़ता काज ।
करुणा लाकर हिये लगाता देता सघरो साज ॥ म्हारा १ ॥
गाल्यां काढ आपने कोई आतो चरणां माय ।
वीं पर भी वा करुणा दृष्टि करता समता लाय ॥ म्हारा २ ॥
आपरी कोई भी करतो निंदा विकथा धाप ।
तो भी व्हारी सदा भलाई करता रहता आप ॥ म्हारा ३ ॥
ज्ञान दरस रो सबने देता भर भर मुट्ठी दान ।
वीरो फल स्वाध्यायी संघ है परतिख राखे शान ॥ म्हारा ४ ॥
श्रद्धा तो सांची ही गहरी, जिन वाणी पर वास ।
शांति शांति को सुमिरण करता झट फल जाती आस ॥ म्हारा ५ ॥
चारित्तर का प्रबल पुजारी नही टिकता कोई हीन ।
खुद मुण्डया परा निकाल्या जो हा चारित हीन ॥ म्हारा ६ ॥
हियो आपरो भर्यो दया सूं सांचा मीठा बोल ।
काया सूं जिन शासन की थे सेवा करी अमोल ॥ म्हारा ७ ॥
पशुआं पर भी करुणा कीनी मिटवायो बलिदान ।
वाह वाह म्हारा प्यारा गुरुवर ! वाह वाह दया निधान ॥ म्हारा ८ ॥
शुक्ल पक्ष में जन्म लियो थे, दीक्षा शुक्ल के माय ।
शुक्ल पक्ष में स्वर्ग सिधाया, शुक्ल पक्षी कहलाय ॥ म्हारा ९ ॥
शनिवार को जन्म आपरो, शनिवार की दीक्षा ।
शनिवार को स्वर्गारोहण आछी हुई समीक्षा ॥ म्हारा १० ॥
बसन्त पंचमी परब सवागो कियो मुगत में वास ।
कर्म काट मुक्ति थे पाग्यो धर्म करे सो दास ॥ म्हारा ११ ॥

---

# : गुरुवर अन्नदाता :

[ तर्ज : लीनो लीनो जी कृष्ण अवतार ]

आवे आवे जी ओल्यूड़ी दिल मांय गुरुवर अन्नदाता ॥ टेर ॥
ज्ञानी ध्यानी निर अभिमानी तुम शानी को आज ।
नही दीसे है हेर्या सूं भी, प्राण पियारो सिरताज ॥ १ ॥

जद भी संघ पर आफत आई, बिगड़्या सारा काज ।
शकर ज्यूं पी गया जहर ने थे ही सुधार्या सब काज ॥ २ ॥

जद समाज पिस रही जोर सूं, कुरीत्यां रे मांय ।
दे उपदेश सुधार्या सबने, गिरता ने लिया रे बचाय ॥ ३ ॥

विद्यारो विस्तार करायो, अणी प्रान्त रे मांय ।
निस्साधन लड़का रे खातिर छात्रालय खुलवाय ॥ ४ ॥

घर घर मे थे दीन दुख्यां री करवाई सभार ।
आज आप री याद मांयने नेणां सूं छूटे आसूं धार ॥ ५ ॥

श्री स्वाध्यायी सघ आपरी अजर अमर है देन ।
जिन शासन सेवा की आछी, सबने वताई शुध लेन ॥ ६ ॥

कुण देसी वा शिक्षा म्हाने वीर वचन री खास ।
जिण सूं म्हां का जनम जनम का करमा रा कट जावे पाश ॥ ७ ॥

'सोहन' 'वाल' र 'वल्लभ' मुनियो करे कामना खास ।
वन्ध तोड़ करमां रा सारा जल्दी थे पाज्यो शिववास ॥ ८ ॥



# : दो हमको शुभ आशीश :

[ तर्ज : जब तुम्हीं चले परदेश ]

दो हमको शुभ आशीष, चढ़ाकर शीश, वीनती करते ।
गुरु चरणों बीच विचरते ।। टेर ।।

तुम 'बालचन्द्र' सम प्यारे थे, निष्कलंकी नित्य उजियारे थे ।
दे धर्म सुधा भय ताप हमारे हरते ।। १ ।।

तुम 'तुलसा' सम गुणकारी थे, और पूजनीय हितकारी थे ।
दे समकित सौरभ कर्म रोग को हरते ।। २ ।।

तुम 'मोती' से शुभ आचारी, थे 'गज' सम प्रतिभा के धारी ।
'रेणु' से नम्र बन शीश स्थान पर सोहते ।। ३ ।।

छोटे से वय मे दीक्षा ली, बन सच्चे 'कुन्दन' शिक्षा ली ।
'सोहन' सा तन यह दीप दिन दीपे जलते ।। ४ ।।

गुरुदेव 'बाल' ब्रह्मचारी थे, जग वल्लभ थे उपकारी थे ।
यह भारत चमका शब्द 'नाद' मग धरते ।। ५ ।।

जय जय हो निश दिन गुरु तेरी, तुम [illegible] ।
यह 'बाल कु वल्लभ' मनोकामना करते ।। ६ ।।

# कृपालु गुरुवर

[ तर्ज : जग सुखकारी जी ]

क्षमा गुणधारी रे, श्री छोटमल्लजी गुरु उपकारी रे ।। टेर ।।

शात मूरति, छवि निराली निरखत मन ले हारी रे ।
हँस मुख चेहरो सदा चमकतो ज्यूं दिनकारी रे ।। १ ।।

विकट कपट की जाल हृदय से, गुरु ने दूर निवारी रे ।
सरल स्वभावी भद्र हृदय जग जाने जहारी रे ।। २ ।।

सेवा मांही चित्त रमायो, पय शक्कर इकतारी रे ।
सेवा ही बन गयो अग जीवन को भारी रे ।। ३ ।।

श्री 'रेणु' के शिष्य कहाये रत्नत्रय को धारी रे ।
समता सागर परम विरागी जाऊँ बलिहारी रे ।। ४ ।।

"खूब" पिता के वश उजागर, मां 'दाखा' अवतारी रे ।
'आचलिया' शुभ गोत्र 'शभूगढ़' ग्राम मँझारी रे ।। ५ ।।

कृपा करो हे कृपालु गुरुवर ! आये शरण तिहारी रे ।
'बाल' मुनि और वल्लभ मुनि नित चरण मझारी रे ।। ६ ।।

## — सवैया —

कै दिन आवत, कै दिन जावत, कै दिन रात चले हि गये हैं ।
छोड़ अनादि नी नीन्द अवै यह, वक्त तुझे फिर नांहि मिले है ।
जाग मुसाफिर, जाग मुसाफिर, श्री गुरू तोहि जगाहि रहे है ।
सार करो निज 'वल्लभ' माल की, चोर फिरै अरु माल गहे है ।।

# प्यारा गुरुवर सा

[ तर्ज : पणिहारी की ]

सटक सिधाया स्वर्ग में हो प्यारा, गुरुवर सा ।
म्हाने रखकर दूर, गुरुवर सा ।
ऐसी तो आशा थी नहीं हो प्यारा गुरुवर सा ।
दर्शन हेसी दूर, गुरुवर सा ॥ टेर ॥

प्रकृति भद्र ये आप हो प्यारा० दीनानाथ दयाल गुरु० ।
प्रवर्त्तक ये गच्छ के हो प्यारा० शांतदांत करुणाल गुरु० ॥ १ ॥

तपकर साधना तेज में हो प्यारा० बन गये 'कुन्दन' आप गुरु० ।
सो ऽहम् भाव सुभाव से प्यारा० कोनी भक्ति अमाप गुरु० ॥ २ ॥

सरल भाव ये बाल से हो प्यारा० आप हिया रे माय गुरु० ।
जग वल्लभ ये चादसा हो प्यारा० ज्यारो निर्मल छाप गुरु० ॥ ३ ॥

अक्षय सुख रख लक्ष्य में हो प्यारा० अक्षय साध्य सनाथ गुरु० ।
अक्षय करली साधना हो प्यारा० अक्षय तृतीया माय गुरु० ॥ ४ ॥

पन्ना गुरु भी दूरा राखिया हो प्यारा० ये बिगु मेल्या दूर गुरु० ।
ऐसी क्या गलती हुई हो प्यारा० जिणसूं मेल्या दूर गुरु० ॥ ५ ॥

अब प्रसाद हो [illegible] हो प्यारा० [illegible] गुरु० ।
'[illegible]' की या भावना हो प्यारा० [illegible] गुरु० ॥ ६ ॥

—••—

# गुरण गाओ सदा

(तर्ज .- स्वप्न ससार है)

पूज्य गुरुराज के, सघ सिरताज के,
गुरण गाओ सदा-ओ .. .. .. ....।।टेर।।

पूज्य नानक दीनदयाल जी थे,
जिनके गच्छ मे गुरु पन्नालाल जी थे ।
उनके आज्ञाव्रती, आये गच्छपति ।।गुण० १।।

ये तो सरल स्वभावी पूज्यवर है,
भद्रहृदय गुणो के जो सागर है ।
नाम छोटमल जो, टाले कर्ममल जी ।।गुण० २।।

ये तो पच महाव्रत पालते है,
जिन आज्ञा में अहोनिशि चालते हैं ।
सोधे सादे सही, नही ढोग कही ।।गुण० ३।।

फूलिया संघ खुशी से फूल रहा,
गुरु भक्ति में देखो यह झूल रहा ।
कहता वल्लभ मुनि,लाभ लेना गुणी ।।गुण.४।।

---

# कुन्दन गुरु स्तुति-१

(तर्ज :– राधेश्याम रामायण)

श्री कुन्दन गुरु की जय बोलो, जो जन मन को प्रियकारी है ।
श्री 'प्राज्ञ' गुरु के शिष्य प्रवर, और पच महाव्रतधारी है ।।१।।

वचपन में भाग्य खिला गुरु का, सयोग मिला था सुखकारी ।
ले सयम मन वच काय दमी, संग छोड़ दिया था ससारी ।।२।।

फिर ज्ञान ध्यान में लीन हुए, बन संस्कृत प्राकृत के पाठी ।
ज्योतिष के ज्ञाता पूर्ण बने, अज्ञान की तोड़ी जा टाटी ॥३॥

दिल खोल नम्र बन गुरुवर की, शुभ भावों से सेवा कीनी ।
सच्चे कुन्दन बन गये आप, यों शोभा श्रमणों में लीनी ॥४॥

ज्ञानी हो निर अभिमानी हो, ध्यानी हो फिर भी मौनी हो ।
श्रद्धेय सुन्दर सुखदानी हो, हो क्षमावन्त गुण खानी हो ॥५॥

मेरे तो भाग्य विधाता हो, सगम सजीवन दाता हो ।
सच्ची शिक्षा के शिक्षक हो, मम जीवन के निर्माता हो ॥६॥

कितने गुण गाऊं गुरुवर के, ना समर्थ हूं कुछ गाने को ।
है चरण शरण में मुनि 'वल्लभ', निज रत्नत्रयी को पाने को ॥७॥

---

# कुन्दन गुरु स्तुति - २

(तर्ज :- जय बोलो महावीर स्वामी की)

जय बोलो कुन्दन गुरुवर की ।
श्री नागक गच्छ प्रवर्तक की ॥टेर॥

आगम के ज्ञाता गुणधारी,
भव जल से त्राता सुखकारी ।
जय छोटे गुरु के शिष्यवर की ॥ जय १॥

गुरु सागर सम गम्भीर हैं,
धरती सम धीरज [illegible] हैं ।
जय [illegible] गुरु के पटधर की ॥ जय २॥

[illegible] जिन शासन के मोती हैं,
[illegible] जगमगाती ज्योति हैं ।
जय 'कुन्दन' मुनि [illegible] की ॥ जय ३॥

# आपका स्वागत शत शत आज-३

(तर्ज :- देख तेरे ससार की हालत)

महातपस्वी, महायशस्वी, महाव्रती महाराज ।
आपका स्वागत शत शत आज ।। टेर ।।

पूज्य प्रवर्तक, सघ प्राण! हे नानक गच्छ सिरताज ।। आपका ।।

तुम हो सयम साधक सच्चे, आगम के हो ज्ञाता अच्छे ।
वृद्ध युवा और छोटे बच्चे, यशोगीत गा रहे समूचे ।।
जय जय गू ज रही है गहरी, घणो खमा गुरुराज ।। आपका १ ।।

जिन शासन के हो उजियारे, भव्य जनों के तारण हारे ।
तेरे चरणो मे हम सारे, तन मन जीवन सव ही वारे ।।
हे उपकारो, गुण भडारी, देओ धर्म का साज ।। आपका २ ।।

महिमावन्त सन्त तुम नामी, वीतराग पथ के अनुगामी ।
सभी प्राणियों के हितकामी, सद्‌गुण के हो सच्चे हामी ।।
जन जन के हो 'वल्लभ' मुनि तुम, तारण तिरण जहाज ।।आपका ३।।

---

# धन्य है आपका जीवन-४

( तर्ज-विना रघुनाथ के दर्शन )

हमे यो छोडकर सहसा, पूज्यवर स्वर्ग को धाये ।
धैर्य का बाध जो टूटा, कहो अव कौन समझाये ।। टेर ।।

जन्म ले शभुगढ मांही, शभु की साधना किनी ।
धन्य है आपका जीवन, जगत के त्राण वन पाये ।। १ ।।

परख कुन्दन की कर ली थी, पारखी "प्राज्ञ" गुरुवर ने ।
चढा सयम कसौटी पर रग संयम का चमकाये ।। २ ।।

धीर थे, वीर थे भारी, दयालु, दीन के बन्धू ।
सरल चेता, विनय धारी, वीर शासन को दीपाये ॥ ३ ॥

सदा मर्यादा पालन में, रहे थे मेरु सम दृढ़तम ।
लगे दोषों का प्रायश्चित शीघ्र कर शुद्ध बन पाये ॥ ४ ॥

कृपालू फूल से कोमल, कठिन भी बज्र जैसे थे ।
तुम्हारी याद मानस मे हमेशा 'बल्लू' को आये ॥ ५ ॥

---

# जय बोलो

( तर्ज-जय बोलो महावीर स्वामी की )

जय बोलो सोहन गुरुवर की ।
प्रिय वक्ता पडित प्रवर की ॥ टेर ॥

देवलिया जन्म मही सुखदा,
श्री सुवालालजी हुए पिता,
श्री भवर कंवर के सुतवर को ॥जय. १॥

शिशुकाल में निश्चय कर लीना,
दीक्षा लू संयम रग भीना,
फिर त्याग दिवी ममता घर की॥जय. २॥

मझ यौवन में सयम लीना,
हुए रत्नत्रय में लव लीना,
आज्ञा उर धारी शास्तर की ॥ जय. ३ ॥

गुरु आज्ञा से विचरे जग मे,
भवियों को लगाया शिव मग मे,
गादी दीपा दी गुरुवर की ॥जय. ४॥

नित वन्दन है शतवार तुम्हे,
दो दया दृष्टि की भीख हमे,
यह विनती बाल रु 'वल्लभ' की ॥जय ५॥

★

# बलि बलि जावां सा

( तर्ज-म्हारो बेड़ो लगाय० )

म्हारा गुरुवर सा गुणवान,
बलि बलि जावां सा ।। टेर ।।

ये पिता सुवा के लाल, माँ भॅवरी नन्दा,
है ओसवंश छाजेड गोत्र के कुल चन्दा ।
ये भगताँ रा भगवान ... बलि० ।। १ ।।

स्वाध्याय शिरोमणि, वीर, धीरता के स्वामी,
है मरुधर छवि महान, आशु कवि नामी ।
ये महाव्रती पुण्यवान् .. बलि० ।। २ ।।

ये शान्त दान्त गम्भीर क्षमा के सागर हैं,
ये समता रस भण्डार, दया के आगर है ।
है निर्मल महिमावान् .. बलि० ।। ३ ।।

ये बोले मीठा बोल, घणा ही प्यारा है,
ये बसिया मानस मांय, नैण का तारा है ।
यांरी जग मे ऊँची शान .. बलि० ।। ४ ।।

ये प्राज्ञ गुरु रा प्राण, त्राण है सब जग का,
ये वल्लभ रा आधार, पथिक है शिवमग का ।
यारा नित्य करां गुणगान .. बलि० ।। ५ ।।



# पूज्य गुरुवर पधारे

( तर्ज-नीठ मनुष्य भव पायो रे )

आनन्द ही आनन्द छाया रे, पुज्य गुरुवर पधारे ।
घर घर वँटत बधायाँ रे ॥ टेर ॥

रत्नत्रयी को शुद्ध आराधे,
साधे जो निज काया रे ॥ १ ॥

स्वाध्याय शिरोमणी, पूज्य प्रवर्तक,
पण्डित रत्न सवाया रे ॥ २ ॥

आशु कवि और मरुधर छवि जो,
सब ही के मन भाया रे ॥ ३ ॥

मधुर स्वभावी, मधुर प्रवक्ता,
सयम दृढ सुखदाया रे ॥ ४ ॥

दीन दयालु, परम कृपालु,
श्री सोहन गुरुराया रे ॥ ५ ॥

पंच महाव्रत निर्मल पाले,
रक्षक है षट्काया रे ॥ ६ ॥

जुग जुग जीओ गुरुवर हमारे,
"वल्लभ" ने गुण गाया रे ॥ ७ ॥



# स्तवन विभाग

## खण्ड-५

कोइक पावत है ऋषि - संगत,
कोइक लाभ उठावत तां से।
कोइक शास्त्र सुने समुझे पुनि,
कोइक ही सरधै ऋजुता से ।।

कोइक की रुचि जागत है अरु,
कोइक पालत है समता से।
कोइक पार लगावत 'वल्लभ',
कोइक फेर रुलै ममता से ।।

धर्म

卐 दीक्षार्थी को नमन

卐 दीक्षार्थी को मातृसन्देश

卐 गुरु - शिक्षा

卐 धार्मिक शिविर

卐 स्वाध्याय

卐 शासन - सैनानी

卐 धर्म माहात्म्य

卐 आत्मिक पद

卐 पर्युषण क्षमापना

卐 चातुर्मास : स्वागत : विदाई

卐 अक्षय तृतीया

# दीक्षार्थी को नमन

( तर्ज-जय बोलो महावीर )

धन धन जो संयम धारे है ।
शत शतशः नमन हमारे है ।। टेर ।।

है कठिन एक दिन घर तजना,
घर तज कर वीर जिनन्द भजना ।
जो घर की ममता मारे है ।। धन १ ।।

जो सत्य अहिंसा धार रहे,
अस्तेय ब्रह्म स्वीकार रहे,
जो सभी परिग्रह टारे हैं ।। धन २।।

जो सम्यग्ज्ञान बढ़ावेगे,
दर्शन को शुद्ध बनावेगे ।
चारित्र धर्म रखवारे है ।। धन ३ ।।

सब जीवो पर समता रखना,
है दुष्कर समदर्शी बनना ।
जो राग द्वेष को टारे है ।। धन ४ ।।

हितकारी परिमित सच कहना,
विन आज्ञा तृण भी नही गहना ।
निर्ग्रन्थ नियम उजियारे है ।। धन ५ ।।

जो समिति गुप्ति को पालेगे,
जिन आज्ञा मे नित चालेगे ।
वे 'वल्लभ' नयन सितारे है ।। धन ६ ।।



# दीक्षार्थी को मातृ संदेश

( तर्ज : नित उठ के सज्जन )

प्यारे प्राण रतन !, करना अपना जतन !, शिव पाना ।
राग द्वेष को दूर हटाना ।। टेर ।।

तूने पुण्य अनन्त कमाया, तब यह देह मनुष्य का पाया ।
मत ना विरथा खोना, पाप मल को धोना ।। शिव १ ।।

मत ना विषयों मे फंसना बेटा !, त्याग मार्ग पे बढ़ना सेठा ।
रमना जप तप में, रहना गुरू वच में ।। शिव २ ।।

मत ना दूजी मात रूलाना, कर्म काट के मुक्ति सिधाना ।
बनना अजर अमर, लीनी कस जो कमर ।। शिव ३ ।।

संयम धर्म है खड्ग की धारा, जिस पर चलता है वीर दुलारा ।
कहता 'बल्लभ' मुनि, बनना खूब गुणी ।। शिव ४ ।।

*——*

# जीवन बन जासी

( तर्ज :- लीनो लीनो जी कृष्ण अवतार )

मानो मानो जी गुरू जी री सीख, जीवन बन जासी ।। टेर ।।

गुरू की शिक्षा मानी गौतम, पहुंच्या मोक्ष मझार ।
और अनन्ता ही पुण्यवन्ता, तिर गया है ससार ।। जीवन १ ।।

जगह जगह आगम में गणधर, भाख गया दिल खोल ।
गुरू की शिक्षा धारो भैया, अमृत सम है अमोल ।। जीवन २ ।।

गुरू की शिक्षा नही मानी, वे रूलिया चहुं गति बीच ।
अन्त समय पछताया वे तो, रोया अँखियाँ मीच ।। जीवन ३ ।।

जो चाहे कल्याण आपणो, चाहे मुक्ति स्थान ।
'वल्लभ' तू नित 'प्राज्ञ' गुरू की, लीजे शिक्षा मान ।। जीवन ४ ।।

——

# धार्मिक शिविर : एक तीर्थ

( तर्ज : बिना रघुनाथ के देखे )

शिविर यह ज्ञान किरिया का, श्रेष्ठतम तीर्थ कहलाता ।
जो आकर के नहाता है, निजातम शुद्धि वह पाता ।। टेर ।।

अनादि काल से चेतन, कर्म मल से मलिन है पर ।
ज्ञान साबुन, क्रिया जल से, शीघ्र ही शुद्ध बन जाता ।। १ ।।

बाहरी तीर्थ तो केवल, बाहरी शुद्धि करते हैं ।
किन्तु आभ्यन्तरी शुद्धि, कभी वहा पर नहीं पाता ।। २ ।।

पुण्यशाली समझियेगा, उसे 'वल्लभ' सदा जग मे ।
उपासक वीर का बनकर, धर्म शिविर मे जो आता ।। ३ ।।

---

# धार्मिक शिविर

( तर्ज : जय बोलो महावीर )

जो धार्मिक शिविर मे आयेगे ।
वे जीवन उच्च बनायेगे ।। टेर ।।

यह जीव ज्ञान का कुंजा है, श्रद्धा का अनुपम पुंजा है ।
यह तत्त्व ध्यान मे लायेगें ।। जो० १ ।।

बिन ज्ञान क्रिया कैसे होगी ? और क्रिया बिना नही गति होगी ।
यहा ज्ञान क्रिया को पायेंगे ।। जो० २ ।।

नव तत्त्वो को यहा समझेंगे, षट् द्रव्यो को ओलख लेंगे ।
निज पर का बोध बढ़ायेंगे ।। जो० ३ ।।

खुद समझे सबको समझावे, हितकारी पथ को अपनावे ।
वे निश्चय बन्ध छुड़ायेंगे ।। जो० ४ ।।

रख लगन मगन हो जावेगे, रग रग मे धर्म रमावेगे ।
वे 'वल्लभ' मुक्ति सिधायेंगे ।। जो० ५ ।।

# न सज्झाय समं तवो

( तर्ज : लीनो लीनो जी कृष्ण अवतार )

कीज्यो कीज्यो जी सदा ही स्वाध्याय, उन्नति होवेला ।। टेर ।।

"न सज्झाय समं तवो" यह वीर प्रभु फरमाय ।
आभ्यन्तर तप में है गिनती, सुन लो ध्यान लगाय ।। १ ।।

वेदों में भी ऋषि महर्षि कहते हैं समझाय ।
'स्वाध्यायान्याप्रमदः' ऐसा सूत्र सदा बतलाय ।। २ ।।

पांच प्रकारे जो करे रे नित का ही स्वाध्याय ।
कर्मों की निर्जरा हुवे रे आतम शुद्धि हो जाय ।। ३ ।।

ज्ञान बढे स्वाध्याय से रे, दर्शन निर्मल थाय ।
चारित्तर उन्नत बने रे, शिथिलाचार नसाय ।। ४ ।।

शास्त्रों का स्वाध्याय है रे, सबसे सच्ची आय ।
इह भव पर भव में सदा रे, आतम ने सुखदाय ।। ५ ।।

पूज्य 'प्राज्ञ' गुरू राज ने रे, खोला संघ स्वाध्याय ।
ज्ञान पिपासा पूर्ण करो तुम बनकर हंस सुभाय ।। ६ ।।

श्री स्वाध्यायी संघ की शाखा, फैले चहुं दिशि माय ।
कल्प वृक्ष ज्यूं आशा पूरे, 'वल्लभ' हियो हुलमाय ।। ७ ।।



# अरे शासन के सैनानी

( तर्ज — बिना रघुनाथ के देखे )

बिना तप त्याग सयम के, कही कीमत नही होगी ।
बिना चारित्र उन्नति के, कभी इज्जत नही होगी ।। टेर ।।

भले दल बन्दी कर करके, सत्य को झूँठ भी कर दे ।
मगर कर्मो के फल भुगते बिना मुक्ति नही होगी ।। १ ।।

भले दे यत्र मत्रादि, पुजा ले, माल भी खाले ।
बिना पाले जिनाज्ञा के, कही कीमत नही होगी ।। २ ।।

भले व्याख्यान कर जग मे, कमा ले नाम भी अपना ।
बिना कथनी समा करणी कही कीमत नही होगी ।। ३ ।।

छिपा सकते नही पातक, करे हम लाख कोशीशे ।
पाप घट जब भी फूटेगा, कही कीमत नही होगी ।। ४ ।।

अगर है सत्यता हम मे तो डरने की जरुरत क्या ?
बिना कुछ तो सचाई के कही कीमत नही होगी ।। ५ ।।

अरे शासन के सैनानी ! किधर निद्रा मे सोया है ।
बिना शासन की रक्षा के कही कीमत नही होगी ।। ६ ।।

सिरी गुरु 'प्राज्ञ' फरमाते, अरे वल्लभ ! जरा सुन तो ।
बिना आचार निष्ठा के कहीं कीमत नही होगी ।। ७ ।।

—o—o—

# ज्योति जगाओ रे

( तर्ज—दिल लूटने वाले जादूगर )

ओ वीर प्रभु के सैनानी ! कुछ अपना ध्यान लगाओ रे।
श्री वीर प्रभु के शासन की, अब जगमग ज्योति जगाओ रे ॥ टेर ॥

जहां ज्ञान बढ़ा और क्रिया घटी, वह ज्ञान अधूरा कहलाता।
और क्रिया सग में ज्ञान बढ़ा, वह ज्ञान अमर सुख का दाता।
चारित्र हमारा उज्ज्वल हो, यह जहां में नांद गुंजाओ रे ॥ १ ॥

शुभ "ज्ञान क्रियाभ्या मोक्षः" का उपदेश ज्ञानियों ने दीना।
दोनों के बिना नहीं काम बने, यह वीर वचन है रंग भीना।
दोनों का पक्ष बराबर हो, यह मधुरी बिगुल बजाओ रे ॥ २ ॥

जो साधु बनकर साधु का, शुभ वेश लजाता दुनियां मे।
जो मूल व्रतो का खडन कर भी, पूजा पाता दुनिया में।
यह कार्य हमे उपयुक्त नही, यो सबको पाठ पढ़ाओ रे ॥ ३ ॥

साहस पूर्वक व्रत पालन मे, अब बनो बनाओ दृढ़तर तुम।
ढीलेपन से नहीं काम चलेगा, करो शुद्धिया डट कर तुम।
कर उदासीनता कार्यक्रमों में, मत ना शान घटाओ रे ॥ ४ ॥

कर कार्य बताओ दुनिया मे, जिससे शुभ कीरति फैलेगी।
गर दृढ़ता की व्रत पालन मे, तो दुनिया आज्ञा झेलेगी।
श्री 'प्राज्ञ' कृपा से "वल्लभ", की विनती पर ध्यान लगाओ रे ॥ ५ ॥



## * धर्म बिन सभी व्यर्थ *

( तर्ज—जो आनन्द मगल चाहो रे )

सब विरथा विरथा विरथा रे ।
सब विरथा कह गये वीर ॥ टेर ॥

ब तक न धर्म को जाना, नही जीवाजीव पिछाना ।
और आत्म शोध नही कीनारे ॥ सब० १ ॥

चाहे केई ग्रन्थ रट डाले, कितनी भी उपाधि पाले ।
पर ज्ञान समान न चाले रे ॥ सब० २ ॥

चाहे वक्ता बन के शूरा, निज नाम कमाले पूरा ।
गर कथनी करणी दूरा रे ॥ सब० ३ ॥

ज्ञानिक बन इस जग मे, विज्ञान जहां तहा सब मे ।
चाहे कर दे प्रति प्रति डग मे रे ॥ सब० ४ ॥

जब तक कुछ भी नही कीना, विज्ञान भेद जो अपना ।
तब व्यर्थ हुआ सब सपना रे ॥ सब० ५ ॥

गुरुराज 'प्राज्ञ' फरमाते, तुम क्यो ना ध्यान लगाते ।
जो मोक्ष नगर को चाहते रे ॥ सब० ६ ॥

---

## धर्म का मिलना दरल

( तर्ज—या हसीना बस मदीना )

और सब मिलना सरल इक धर्म का मिलना दरल ।
वीर प्रभु ने भी कहा इक धर्म का मिलना दरल ॥ टेर ॥

मानो कोई यात्रा करे, जलयान से जल थान मे ।
तूफान से नौ टूटेगी तब द्वीप का पाना दरल ॥ १ ॥

कोई मरुस्थल मे चला, जब ज्येष्ठ की दोपहरी मे ।
सूर्य और पृथ्वी तपे वहां वृक्ष का मिलना दरल ॥ २ ॥

भूलकर के मार्ग को, उन्मार्ग में जो भ्रम गया ।
ऐसे भयावह तिमिर में उद्योत का पाना दरल ।। ३

प्रत्येक को थर्राने वाला, पाला जहा पर गिर रहा ।
तब वहां पर अग्नि का सयोग भी मिलना दरल ।। ४

पूर्वोक्त वस्तुए तुम्हें सभव कभी मिल भी सके ।
किन्तु इस कलिकाल मे इक धर्म का मिलना दरल ।। ५

मेरे गुरुवर 'प्राज्ञ' का भी है सदा फरमान यह ।
पुण्यशाली आत्मा को धर्म का मिलना सरल ।। ६



# आत्म ज्ञान से लाभ

(तर्ज :- जाओ जाओ ओ मेरे भाई)

होता होता है लाभ हमे अति, उदय होय जब सूर्य ।।टेर।।

पहला लाभ मिटे अंधियारा, दूजा कीचड शोष ।
तीजा तस्कर भागे सत्वर, जो लेते धन कोष ।। १ ।।

इसी तरह जब आत्म ज्ञान का, उदय होत है भान ।
तब हमको इस द्रव्य सूर्य सम, मिलता लाभ महान ।।२।।

मिथ्यात्व रूप अंधेरा जिसने, घेरा हमको आय ।
वह होता है नष्ट त्वरित ही, शुद्ध दशा प्रकटाय ।।३।।

भोगो के कीचड मे जो हम, फसे भान निज भूल ।
वह भी जाता सूख, त्याग मे होते ही मशगूल ।।४।।

समतादिक निज गुण की चोरी, करते चोर कसाय ।
आत्म ज्योति को देख शीघ्र ही, जाते वे विरलाय ।।५।।

यही कथन है 'प्राज्ञ' गुरु का, सुनिये श्रद्धा धार ।
आत्म ज्ञान की ज्योति जगाओ, मिले मोक्ष नरनार ।।६।।

# मन को उपालम्भ

(तर्ज :- आशावरी)

मना रे तू मेरी क्यो नही माने ?
ज्यों ज्यों मैं समझाऊ तोने, त्यो त्यों अपनी ताने । टेर।।

मैं लगता स्वाध्याय के माँही, तू पिए सब जग छाने ।
निन्दा चुगली मे रम करके, छप्पर लगे तू उड़ाने ।।१।।

मै जो लागू काम बनाने, तू लग जाय ढ़हाने ।
किन्तू नही तू लग पाता है, निज को शुद्ध बनाने ।।२।।

मर्कट सम चचल बनकर, तू लगता उछल मचाने ।
ज्ञान रज्जू से बाँधू फिर भी, रुकता नही रे ठिकाने ।।३।।

तीनो योगो मे देह वाणी का, सयम सब कोई जाने ।
पर तुझ मन को वश करने मे, पडते कष्ट उठाने ।।४।।

तू असवार बना है सब पे, सबको लगता चलाने ।
पर तुझ पर असवार बनेगे, 'वल्लभ' मुनि मरदाने ।।५।।

---

# पूछूं मैं मनुआ तुझ को

( तर्ज — रिपभ कन्हैया लाला आगने मे )

मनुआ मै पूछू तुझको प्रेम से, तू क्यो नही बोले,
बतलादे मुझको कुछ तो बात रे, क्यो मुख नही खोले ।।टेर।।

पायी है तू ने पुण्य योग से, यह नर की देही ।
मिलियो है जिनवरजी को धर्म, फिर क्यो इन उत डोले ।। १ ।।

साधु की पायी सच्ची साधना, शुभ कर्म प्रभावे ।
परम पुरुषारथ करके शीघ्र, तू अविनाशी होले ।। २ ।।

पांचों महाव्रत को ले आराध, ममता सारी तज दे ।
समिति गुप्ति को रखकर ख्याल, निज का अवगुण धोले ।। ३ ।।

क्रोधादिक छोडी ने कषाय, समता रस को पीले ।
क्षमा विनयादि सद्‌गुण आत्मा मे, प्रकटा भोले ।। ४ ।।

जो तू भव जल से 'वल्लभ', पार जल्दी होणो चावे ।
आत्मा सूं फरसा समकित धर्म ने, गुरूवर यो बोले ।। ५ ।।

---

# आज ही समझ परी

( तर्ज—पद की )

मुझे तो आज ही समझ परी ।
इतने दिन धोखे में खोये पर से ममत करी ।।टेर।।

राग द्वेष के परिणामो से चेतन चूक करी ।
चेत चेत अज हूं अन्तर मे समता भाव धरी ।। १ ।।

बहुत काल वितायो पर मे कुछ ना गरज सरी ।
अब ओलख अपने को मनुआ मिलि अनमोल घरी ।।२।।

समझावे गुरुदेव तुझे नित हित उपदेश करी ।
'वल्लभ' मुनि निश्चै जागेलो, गुरू को विनय धरी ।।३।।

---

# अपनो सोच विचार

( तर्ज — पद की )

अरे मन ! अपनो सोच विचार ।
पर को सोचत समय वितायो, निज को लेहु न पार ।।टेर।।

मात पिता सुत भाई भगिनी, प्राण पियारी नार ।
इनमे तेरो काज न सरियो, उल्टो भयो गुवार ।।१।।

ज्यो ज्यों लाभ बडे धन जन को त्यों त्यो लोभ प्रसार ।
किंतु प्रमादी इह पर भव में, ना लहे भव नो पार ।।२।।

विपय कषाय मे रत रह करके, कीनो वैर अपार ।
किन्तु सयम क्षमा धर्म को, पाल्यो नही आचार ।।३।।

पर मे काल अनन्तो खोयो, अव निज ओर निहार ।
'वल्लभ' शिव वल्लभ तू होजा, कर्म मैल परिहार ।।४।।

---

# म्हासू मुंडे बोल

( तर्ज — बोल बोल म्हारा ऋषभ कन्हैया )

बोल बोल म्हारा आतम रामा ।
काई थारी मरजी रे म्हासू मु डे बोल ।। टेर ।।

काल अनन्तो भ्रमत फिरयो तू चार गतिक चौपाटी रे ।
अव भी जन्म मरण री रस्सी, क्यो नही काटी रे ।।१।।

नरक वेदना सही अनन्ती सुणता रोम कपावे रे ।
तिर्यंच गति मे जो दुख भोग्या, कह्या न जावे रे ।। २ ।।

अनन्त पुण्य के प्रवलोदय से, नर भव हाथे आयो रे ।
सत समागम करके क्यो नही, लाभ कमायो रे ।।३।।

निज पर को जद ज्ञान हो गयो, व्रत भी लीना धारी रे ।
तो फिर विपय कषाय की ममता, क्यो नही मारी रे ।।४।।

किण विध अव तू कर्म काटसी, मुझने दे वतलाई रे ।
छोड ठगाई, धार सरलता, 'वल्लभ' भाई रे ।। ५ ।।



# वो दिन धन होसी

( तर्ज — कोरो काजलियो )

वो दिन धन होसी, जद छोड़ू विषय कषाय ।।टेर।।

मोह कर्म है मोटको, जो भटकावे भव मांय ।। १ ।।
मोह कर्म सूं प्रेरियो, यो मोहे चेतन राय ।। २ ।।
पाचों इन्द्रिय जाल में, कोई मूरख मन फंस जाय । ३ ।।
जो भी फंस गया कीच में, वो अत समय पछताय ।। ४ ।।
एक एक मे जो फसा, वो दीना प्राण गंवाय ।। ५ ।।
पांचों में जो फंस गया, है उनका कौन सहाय ।। ६ ।।
क्रोध मान माया तथा, यो लोभ महा दुख दाय ।। ७ ।।
इस कषाय के चौक मे, अज्ञानी भाव भुलाय ।। ८ ।।
'वल्लभ' या ने त्यागसी, तब बण जासी शिवराय ।। ९ ।।

---

# मैं पराया हूं

( तर्ज- पद की )

अभी तक मैं पराया हूं ।
इसीलिये तो अपनेपन को जान न पाया हूं ।। टेर ।।

मैं अविनाशी, अगम, अगोचर, अमल कहाया हूं ।
किंतु विकारी होय विकारों मे भरमाया हूं ।। १ ।।

प्रेम, विनय, संतोष, सरलता, नहीं रख पाया हूं ।
क्रोध मान और माया, लोभ का दास कहाया हूं ।। २ ।।

विषय विकारों मे फंसकर के सभी गंवाया हूं ।
तन मन को वश में नहीं कीना अति दुःख पाया हूं ।। ३ ।।

राग द्वेष का पुतला बनकर भान भुलाया हूं ।
कर्म तोड़ने के बदले मे, कर्म कमाया हूं ॥ ४ ॥

ऊपर से यह वेष धार कर, सत कहाया हूं ।
अन्दर से कुछ साधा नही, ठग बन आया हू ॥ ५ ॥

पर से निज का साधक होऊ, यह मन लाया हूं ।
इसीलिये गुरूराज 'प्राज्ञ' से सयम पाया हूं ॥ ६ ॥

-*—*-

# धर्म बिन कोई नहीं आधार

( तर्ज - पद की )

धर्म बिन कोई नही आधार ।
ढूढ लियो है फिर फिर जग में सब ही विनसनहार ॥ टेर ॥

जिस तन को पाया था मैने, मा के उदर मझार ।
वह तन भी साथी नही बनता होता छिन मे छार ॥ १ ॥

हिसादिक पापो को करके, सचा धन अनपार ।
किंतु वही चचल चपला, सम तज देता घर द्वार ॥ २ ॥

पागल बनकर मान रहा था, पुत्र मेरे आधार ।
पल मे बदल गये वे, मुझसे करते नही जुहार ॥ ३ ॥

मात पिता भाई भगिनी भी करते जो नित प्यार ।
स्वार्थ क्षीण होते ही सारे छोड़ चले मझधार ॥ ४ ॥

आखिर सब मे धोखा पाकर, सोचा हृदय मंझार ।
"बल्लभ मुनि" भव जल से तिरसी, रत्नत्रय को धार ॥ ५ ॥



# कब ज्ञान आयेगा

( तर्ज : बिना रघुनाथ के देखे )

अरे मन क्यों व्यथित होता, तुझे कब ज्ञान आयेगा ।
किया है कर्म जैसा भी, नतीजा वैसा आयेगा ।। टेर ।।

बुरा है वैर भावों का, नतीजा ओ मेरे चेतन !
सभल कर चल जरा, वरना अंत में पछतायगा ।। १ ।।

कषायों का दमन करले, सदा सम भाव को भरले ।
कि तेरी आत्मा जिससे, मुक्ति का सौख्य पायेगा ।। २ ।।

बिना सोचे बिना समझे, कभी भी बोल बोलेगा ।
दिया गर आल जो झूठा, तो तेरे पर भी आयेगा ।। ३ ।।

तुझे कोई बुरा कहता, उसे तू मान ले अच्छा ।
बुरा तो मिष्ठ होता है, मिष्ठ पकवान पायेगा ।। ४ ।।

कटुक जो जहर से गहरे, तीक्ष्ण तिरसूल से बढ़के ।
सहे जो ऐसे शब्दों को, वही नर पूजा जायेगा ।। ५ ।।

अगर आजाय अपने पर, कभी ऐसा विकट अवसर ।
तो समता भाव रख लेना, जगत 'वल्लभ' कहायेगा ।। ६ ।।



# मुझे देखो तो सही

( तर्ज : मैं का कहूं नाथ )

ओ पूज्य भगवान मुझे देखो तो सही ।
मेरा कैसे हो उत्थान मुझे० ।। टेर ।।

अहिंसा और सत्य का नहीं कुछ ज्ञान है,
विषय कषाय मांही पड़ा जा बेभान है ।
मोह ममता की खान, मुझे ।। १ ।।

जप तप कुछ नही, नही स्वाध्याय है,
नही वयावृत्य और नही सेवाभाव है ।
मैं हू पूरा अनजान मुझे... ॥ २ ॥

धर्म शुक्ल ध्यान मैंने, कबहूं न ध्याया है,
आर्त्त, रौद्र से भी नही छुटकारा पाया है ।
किया क्रोध का वितान मुझे ॥ ३ ॥

शरण में आया तेरे लघु शिष्य 'वल्लभ',
करता है वन्दन तुझे ओ जग वल्लभ ।
यह शिष्य है नादान मुझे ॥ ४ ॥



## थांरो जीवन बणजासी

( तर्ज - पावन पुरूषोत्तम भगवान )

होजा होजा रे तू धरमो, थारो जीवन बण जासी ।
जीवन बण जासी करम की फाँसी कट जासी ॥ टेर ॥

पुनवानी सू नरभव पायो, आगे कद पासी ।
धर्म साधना मे झट आजा, मत कर उदासी ॥ १ ॥

मात पिता भाई और भगिनी, स्वारथ सू व्हासी ।
स्वार्थ बिना सब तुझे छोडकर दूरा भग जासी ॥ २ ॥

माया की नश्वर लाली पर, मूरख ललचासी ।
जो मन ने मजबूत बनासी, माया बिरलासी ॥ ३ ॥

जीवन मे शुभ लक्ष्य बनाले, भव जल तिरजासी ।
वरना[1] चक्कर वात-पात सम, चक्कर तू खासी ॥ ४ ॥

समय अनन्तो बीत गयो, और बीत्यो ही जासी ।
रत्नत्रय ले धार 'वल्लुड़ा' शिव सुख तू पासी ॥ ५ ॥

---

१ चक्र वायु (भभूलिया) में गिरे हुए पत्तो के समान ।

# अन्तर्गान

( तर्ज : तेरे पूजन को भगवान )

ऐसी शक्ति जगे भगवान, कि मैं भी पाऊँ पद निर्वाण ।। टेर ।।

मै हूं अनन्त ज्ञान का स्वामी, मैं हूं अनन्त दरस का धामी ।
मै हूं अनन्त शक्तिमान कि.. ।। १ ।।

क्षायिक ज्ञान प्रकट हो मेरा, क्षायिक समकित मे हो डेरा ।
विलसे क्षायिक चरित महान कि .. ।। २ ।।

मोह ने मुझ को ऐसा घेरा, विषय कषाय जमे चौफेरा ।
इनका कर दूं अब अवसान कि... ।। ३ ।।

रत्नत्रयी को शुद्ध आराधूँ, अक्षय आतम ज्योति जगा दूँ ।
मिटा दूँ कर्म कलक निशान कि .. ।। ४ ।।

भव भव वाल मरण मै पाया, जिससे चारो गति भटकाया ।
मिले अब मरण समाधि स्थान कि ।। ५ ।।

अज, अविनाशी, अगम, अगोचर, अमल अचल अविकारी होकर ।
बनूं मैं तुम सम ज्योतिर्मान कि...।। ६ ।।

प्रतिदिन ऐसे भाव जगाऊँ, वाह्य वृत्ति को दूर भगाऊं ।
भाव हों अन्तर्मुखी प्रधान कि... ।। ७ ।।

दो हजार वत्तीस सुहाया, चौमासा भिलवाडे ठाया ।
गावे 'वल्लभ' अन्तर्गान कि .. ।। ८ ।।



# जनम केई बीतग्या रे

( तर्ज . मेरे मां बाप ने रे )

जनम कई बीतग्या रे ए तो गॉठ्या देताँ देताँ ।। टेर ।।

राग धेस की गॉठ लगाकर, रूलियो लख चौरासी ।
यॉ ने खोल्या बिन नही कटसी, जन्म मरण की फासी ।। १ ।।

क्रोध मान माया तृष्णा की, गॉठ्यॉ जबर लगाई ।
यॉ गॉठ्यॉ सूॅ नरकॉ मॉही, जम की लातॉ खाई ।। २ ।।

धन माया री गॉठ्यॉ खातिर दौड लगाई भारी ।
ये गॉठ्यॉ तो अठे रहेली, जासी जीव अगारी ।। ३ ।।

अब तो गाँठ्याँ खोल शीघ्र तू मत कर पोल पलक री ।
जीवन तो है बूंद ओस री, माटी मॉय ढलक री ।। ४ ।।

पन्ना गुरू की वाणी ने जो 'वल्लभ' हिरदय धरसी ।
रत्नत्रय आराध साध कर शिवपुर पथ पकरसी ।। ५ ।।



# तेरा कितना है विश्वास

( तर्ज—पावन पुरुषोत्तम भगवान )

किसमे उलझ रहा है चेतन ! तेरा कितना है विश्वास ।
कितना है विश्वास तेरा कब रुक जाये श्वाँस ।। टेर ।।

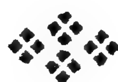
पीपल के पत्ते सम चचल, तेरा जीवन खास ।
फिर भी तू भावी भवनो की खूब लगाता आस ।। १ ।।

जिन पुत्रो को पाल पोषकर, रखता वरसो पास ।
क्षण मे वे उपकार भूल कर तजते होय उदास ।। २ ।।

विष्णु की भी बनी न लक्ष्मी, क्यो तू करता आस ।
धन तृष्णा मे उलझ पुलझ कर क्यो बनता धनदास ।। ३ ।।

दौड़ रहा पुद्गल में बनकर, काम क्रोध का दास ।
अरे समझ ले चेतन अब तो मत कर तू विश्वास ।। ४ ।।

गुरुवर से सद्ज्ञान प्राप्त कर होजा सद्य उदास ।
'प्राज्ञ' कृपा 'वल्लभ' मुनि फिर तो हो शिवपुर के पास ।।५।।



# हीरो खोई ने कंकर लीनो

( तर्ज—भजन )

जन्म मेरो यो ही व्यर्थ गयो रे ।
हीरो खोई ने कंकर लीनो, देखत दीन भयो रे ।। टेर ।।

"क्षमा धर्म ही परम धर्म है", यों उपदेश दियो रे ।
एक वचन भी सह न सक्यो मैं, क्रोध में लाल हुयो रे ।।१।।

विनय मोक्ष का मूल कहावे, सो मैं भूल गयो रे ।
मानी बन गुरु को अपमानी, खूब उदण्ड भयो रे ।।२।।

सरल हृदय में धर्म विराजे, सो मैं नांही भयो रे ।
कूड़ कपट कर पाप कमायो, धर्मी नाम धर्यो रे ।।३।।

रख पायो संतोष न कुछ भी, विषय विकारी हुयो रे ।
रस लोभी, साता सुख भोगी, स्वेच्छाचारी भयो रे ।।४।।

भव मोचक, सद्गुण को छांडी, अवगुण भार लियो रे ।
रत्नत्रयी को शुद्ध न साधी, साधु नाम रह्यो रे ।।५।।

अवगुण छांडी गुणों को धारें, गुरुपद शरण लियो रे ।
'वल्लभ' मुनि 'वल्लभ' होवन कूं, निज में लीन भयो रे ।।६।।



# थे अब रस्ते आ जावो

( तर्ज—पावन पुरुषोत्तम भगवान रामकी )

सुण लो सुण लो जो चेतनजी, थे अब रस्ते आ जावो ।
रस्ते आ जावो अवै, मत ज्यादा भरमावो ।। टेर ।।

मोह माया को महल बनाकर, फूला नहीं मावो ।
ये है म्हाका, म्हे हाँ याँ का, कहिने गरवावो ।। १ ।।

धन दौलत पर होय दीवाना हम चौडे गावो ।
म्हे यू कीधो, थे कई कीधो, यू मत फरमावो ।। २ ।।

लाड लडाकर हाथ पसारी कहता सुत ! आवो ।
पल मे ही वे हुआ पराया रहियो पिछतावो ।। ३ ।।

ज्या बेटा ने खिला पिला कर गोदो बिठलावो ।
पाख आया पखी उड जावे विरथा कुरलावो ।। ४ ।।

चौरासी मे भटक चुक्या अब गोता मत खावो ।
गुरुवर की या सीख "वल्लु" थे हिय मे अपनावो ।। ५ ।।



# चेतनजी थे थांको कांई कीधो

( तर्ज—भजन की )

चेतनजी थे थाको काई कीधो ।
पर को करता जन्म गवायो साथ मे काई लीधो ।। टेर ।।

तन को रोग मिटावन ताई वैद्य पे जावे सीधो ।
मन को रोग नशावन कारण, धर्मामृत नही पीधो ।। १ ।।

भोगो मे तू भटक रह्यो है बनकर भागी गीधो ।
योगारम रमवा मे तू पिण, ध्यान जरा नही दीधो ।। २ ।।

धन को लोभी बणने निश दिन खूब अन्यायज कीधो ।
समता धन को न संग्रह कीधो,जाय नरक में सीधो ॥ ३ ॥

मात पिता भाई भगिनी और बेटा मे चित्त दीधो ।
कर्म भुगन्ता कोई न आवे किण पर होरयो छीदो ॥ ४ ॥

आभा बीज ज्यू जीवन जावे फिर भी ज्ञान न लीधो ।
जागरे जाग तू 'बल्लभ' भाई,होय रयो क्यू नचीतो ॥ ५ ॥



# पर्वराज संदेश

( तर्ज—देख तेरे ससार की हालत )

सुप्त जनों को जागृत करने, देने को सदज्ञान ।
आया पर्वराज महमान ॥ टेर ॥

करो करो तुम धर्म ध्यान को, हो जिससे उत्थान ॥ आ० ॥

पर्वराज पर्यूषण आया, सग यह सदेशा लाया ।
पूर्व पुण्य से मानव काया, आर्य क्षेत्र उत्तम कुल पाया ॥
जैन धर्म भी मिला आपको, हो रहे क्यो बेभान ॥ आ० १ ॥

सत्य देव को ना अपनाना, कुदेवों को शीश झुकाना ।
उनसे भौतिक चीजें चाहना, त्यागो जैनियो पाप बढाना ॥
अरिहत हैं देव हमारे देवे शिव सुख स्थान ॥ आ० २ ॥

'रत्नत्रय' को जो आराधे, निर्मल पंच महाव्रत साधे ।
सतरह भेदे सयम धारे, सुमति देवे, कुमति निवारे ॥
वे ही हैं सद्गुरु हमारे, परम गुणों की खान ॥ आ० ३ ॥

मिथ्यातम को दूर हटावो, दया धर्म को तुम अपनावो ।
वीर प्रभु को निशदिन ध्यावो इनकी नैय्या पार लगावो ॥
'बल्लभ' मुनि सत्कर्म किया तो होवेगा कल्याण ॥ आ० ४ ॥



# आया रे पजूषणा

( तर्ज—बाजरा री पाणत करता )

आया रे पजूषणा ये आनन्द छाया ।
'क' भाया करज्योरे धरम ध्यान दिन आया ।। टेर ।।

जागो रे जागो रे भाया आलस ने त्यागो ।
'क' थोडा थोडा ता धरम रे मारग लागो ।। १ ।।

और तो परव सब खावा पीवा रा ।
'क' ए तो त्याग ने तपस्या घणी करवा रा ।। २ ।।

राग द्वेष, रोष, मान माया ने छोडो ।
'क' निदा विकथा सूं आपणो यो मन मोड़ो ।। ३ ।।

दया पोसा, सवर, समाई करज्यो ।
'क' आगे आनन्द देवण रो खजानो भरज्यो ।। ४ ।।

पूज्य गुरुदेव श्री पन्ना है म्हाणा ।
'क' ज्या री कृपा सू 'बल्लभ' मुनि गावे गाणा ।। ५ ।।



# पछै खमावो

(तर्ज—भोला आत्मा रे दाग)

भाया भावना ने साफ बणायल्यो नी रे ।
पछै प्रेम सूं हरेक ने खमायल्यो नी रे ।। टेर ।।

बाहर सूं तो लूल लूल ने खमाओ,
अन्दर मे छल छिद्र जमाओ ।।
तो राग और घेष ने छणायल्यो नी रे ।। १ ।।

बारह महीना रा सब ही आमणा,
छोड़ करो थे खमत खामणा ।।
अब मनड़ा में प्रेम अणायल्यो नी रे ।। २ ।।

महावीर भी आहिज केवे,
शुद्ध हृदय में धर्म जो रेवे ।।
अब मायला विकार ने हणायल्यो नी रे ।। ३

गुरुवर म्हारां 'प्राज्ञ' पियारा,
मुनि 'वल्लभ' ने तवन उचारा ।।
थे तो समता वितान ने तणायल्यो नी रे ।। ४ ।



## बस माफी आज दिलावें
( तर्ज — जब तुम्ही चले परदेश )

गुरुवर सा. दीन दयाल, परम किरपाल, कि बलि बलि जावें ।
बस माफी आज दिलावें ।। टेर ।।

गुरुदेव ज्ञान गुणवन्ता है, जिन धर्म प्राण पुण्यवन्ता है ।
है जंगम तीरथ सबको पवित्र बनावें ।। बस १ ।।

अज्ञान अवस्था के बल से, जो जो भी अविनय हुआ हम से ।
दो हाथ जोड़ सादर हम शीश झुकावें ।। बस २ ।।

सारे ही बहन और भाई से, है क्षमापना नरमाई से ।
अपना ही समझ कर सारे दोष भुलावें ।। बस ३ ।।

चारों ही तीरथ मिल कर के, दृढ़ 'रत्नत्रय' में मन करके ।
जिन शासन की मुनि 'वल्लभ' शान बढ़ावें ।। ४ ।।



# क्षमा देना

( तर्ज — बिना रघुनाथ के देखे )

क्षमा देना, क्षमा देना, क्षमा लेने को आया हू ।
हृदय से वैर सब तजकर क्षमा लेने० । टेर ।।

मनुज यह भूल का पुतला, सदा से ही कहाता है ।
अत भूलो को भुलाकर, क्षमा लेने० ।। १ ।।

जहां छद्मस्थता होती, वहा परमाद भी रहता ।
उसी से जो हुआ अविनय, क्षमा लेने० ।। २ ।।

कषायो की प्रवृत्ति से, कभी आ जाती है कटुता ।
सभी उन राग-द्वेषो को, क्षमा लेने० ।। ३ ।।

जहा 'वल्लू' सरलता है, वहां है धर्म जिनवर का ।
सरलता धार कर दिल मे, क्षमा लेने० ।। ४ ।

पूज्यवर 'प्राज्ञ' गुरुजी ने, मुझे ऐसा सिखाया है ।
उसी से प्रेरणा पाकर, क्षमा लेने० ।। ५ ।।



# विदाई - गान

( तर्ज - दो दीवाने मिल के )

गुरू जी हमको तज के, चले है सजधज के, चले हैं ३ इस वार ।। टेर ।।

देखो गुरूजी हमको तज कर जा रहे,
करूणा के सिंधु हैं पर दया नही ला रहे ।
हिया तो गहरा हुवके, नैनो से आंसू टपके ।। चले हे १ ।।

भक्त तो अनेक तुम हर जहाँ पाओगे,
श्रोता है अनेक जिन्हे ज्ञान भी सुनाओगे ।
हमें तो एक तेरा, सहारा केवल तेरा ।। चले

भूल मत जाना हमें वापिस झट आना,
गांव गांव जाना और चेले चार लाना ।
विचरो तो खूब सुख से, आने की कह दो मुख से ।। चले हैं ३ ।।

गोचरी की वेला में याद नित आयेगी,
रोटी भी न भायेगी, ठंडी हो जायेगी ।
'बल्लभ' हो जन जन के, तो जल्दी आना हम के ।। चले है ४ ।।



# विदाई संदेश

( तर्ज - बिना रघुनाथ के देखे )

यही संदेश गुरूवर का, दया पालो, दया पालो ।
इसी से पार है बेडा, दया पालो, दया पालो ।। टेर ।।

भूमि, जल, तेज और वायु, वनस्पति पाचमी भाई ।
छठी त्रस काय है जिनको, दया पालो, दया पालो ।। १ ।।

धरम में वीर बनकर के, गूंजना सिंह की भांति ।
भगाना कर्म गीदड़ को, दया पालो, दया पालो ।। २ ।।

परस्पर प्रेम से रहना, दूध और पानी के जैसे ।
दुखी के दुख मिटा देना, दया पालो, दया पालो ।। ३ ।।

गुरु आज्ञा को पाकर के, खड़ा दो शब्द कहने को ।
उठो जागो जग युवको, दया पालो, दया पालो ।। ४ ।।

किया आनन्द से हमने, चौमासा यहां पे आकर के ।
करी भक्ति, बढ़ी कीर्ति दया पालो दया पालो ।। ५ ।।

गा रहा 'प्राज्ञ किंकर' यह, विदाई के समय प्यारे ।
धर्म वृद्धि सदा करना, दया पालो, दया पालो ।। ६ ।।



# करना प्रेम प्रसार

( तर्ज - कांटो लागो रे देवरिया )

करते रहना हो श्रावक जी, सब मिल धर्म ध्यान हर बार।
धर्म ध्यान हर बार, अपने जीवन का सुधार ॥ टेर ॥

चार मास गुरुदेव विराजे, जिनवाणी का शख बजा के।
पूर दिया हर दिल मे, धर्म का प्रेम रग अनपार ॥ १ ॥

देव गुरु को निशदिन ध्याना, धर्म ध्यान से प्रेम बढ़ाना।
मन वच काया निश्चल करके, कर लेना उद्धार ॥ २ ॥

सुने हुए को भूल न जाना, उस पर चिन्तन मनन चलाना।
सामायिक स्वाध्याय दयाव्रत, करना सवर सार ॥ ३ ॥

प्रेम धर्म को खूब निभाना, पय पानी सम सब मिल जाना।
भाई से बन कर के सारे, करना प्रेम प्रसार ॥ ४ ॥

दिल मे वीर वचन को रखना, विपक्षियो से कभी न डरना।
बनना प्रभु के भक्त, भक्ति से होवेगा उद्धार ॥ ५ ॥

भूल चूक की माफी चाहे, बाल मुनि 'वल्लभ' यो गावे।
लेवे हम सप्रेम विदाई, करना धर्म प्रचार ॥ ६ ॥



# अक्षय तृतीया

( तर्ज - बटाऊ आयो लेवा ने )

ओ तो पर्व आयो है आखा तीज, मनाओ सारा प्रेम सू ॥ टेर ॥

मा मरुदेवी नाभिराय के, कुल-दीपक कुल चन्द।
आदि नाथ आदि के कर्ता, दीक्षा ले हुआ आदि सत ॥ १ ॥

बारह महीना भूखा प्यासा, फिर्या ग्राम घर द्वार।
अन्तराय के प्रबलोदय से, पायो नही कुछ आहार ॥ २ ॥

हस्तिनापुर श्रेयांस कवर के, पुण्य तणे प्रत्यक्ष ।
निद्रा मे सुपनो यू देख्यो, जल बिन सूखे कल्पवृक्ष ।। ३ ।।

प्रात. काल झरोखे वेठा, देख रह्या बाजार ।
कल्प वृक्ष सम ऋषभ देव को, आता देख्या रे सुकुमार ।। ४ ।।

साँदो साँदो वेप लगे यों, कियो चित्त मे ध्यान ।
जाति सुमिरण ज्ञान उपन्यो, लीनो पूरब भव जान ।। ५ ।।

दान सुपात्तर अब मै देस्यू, आया सन्मुख चाल ।
भक्ति भाव से ईक्षुरस को, दान कियो है तत्काल ।। ६ ।।

उसी दिवस से अक्षय तृतीया, पर्व चल्यो सुखदाय ।
एक साल मे एक ही आवे, धर्म करोनी चित्त चाय ।। ७ ।।

तीन प्रतिज्ञा धारो सम्यग्ज्ञान - दरस, चारित्र ।
अक्षय तृतीया सफल बनेगी, अक्षय बनोगे हो पवित्र ।। ८ ।।

श्री पन्ना गुरू महा उपकारी, रक्षक दीन दयाल ।
बाल मुनि 'बल्लभ' भीलवाडे, जोड सुनाई तत्काल ।। ९ ।।

## सफल हो अक्षय तीज महान

( तर्ज — देख तेरे संसार की हालत )

आपस मे माधुर्य सुधा का, करना सीखे दान ।
सफल हो अक्षय तीज महान ।। टेर ।।
ईक्षुरस यह पाठ पढ़ाता, पढ़ो सभी इन्सान ।।सफल।।

वर्षो से आ रहे मनाते, शिक्षा पर नही ध्यान लगाते ।
अधिक अधिक कटुता अपनाते, वैमनस्य विषमता लाते ।।
कैसे शांति मिले तब हमको, कैसे मिले भगवान ।।सफल १।।

मन हो मीठा, तन हो मीठा, वचन हमारा भी हो मीठा ।
जीवन का हर क्षण हो मीठा, सबसे हो व्यवहार भी मीठा ।।
जब इतनी मीठास आयेगी, तब होगा उत्थान ।।सफल २।।

छोटीसी बातो के काजे, घर घर आज तन्दुरा बाजे ।
बायां भी बादल ज्यूं गाजे, जिसको सुनकर पशु भी लाजे ।।
मिटे कटुकता, बढ़े मधुरता, घर हो स्वर्ग समान ।।सफल ३।।

आज समाज, राष्ट्र और घर मे, ग्राम नगर और डगर डगर मे ।
प्रेम भाव बरसे मृदु स्वर मे, भेद मिटे घर मे और पर मे ।।
'वल्लभ' मुनि माधुर्य धार कर, करे विश्व कल्याण ।।सफल ४।।

# शिक्षा ले लीजे

( तर्ज — कद आवोला गिरधारी )

आई आईजी या आखा ताज शिक्षा ले लीजे ।। टेर ।।

आज तपस्वी करे पारणो, ईक्षु रस ने लेय ।
पर यह ईक्षु भी हम सबको, सुन्दर शिक्षा देय ।।१।।

पहली शिक्षा सुनो सज्जनो ! ईक्षु खुद सिखलाय ।
कोई काटे, पीले फिर भी, दो तुम रस बरसाय ।।२।।

दूजी शिक्षा सुनिये अनुपम रस सिखलाता खास ।
अन्दर बाहर सभी रूप मे, प्रेम की धरियो मिठास ।।३।।

तीजो शिक्षा मधुर मधुर यह, रस पीते हो जेम ।
उसी तरह सबको पोलाना सीखो मीठा प्रेम ।।४।।

ईक्षू की यह तीनो शिक्षा, लेकर आखा तीज ।
शुभ बेला मे आई हैं यह, बोओ अक्षय बीज ।।५।।

पूज्य 'प्राज्ञ' गुरुदेव ने भी दीनी ऐसी सीख ।
मुनि 'वल्लभ' तू प्रेम पाठ को, सीख सके तो सीख ।।६।।

# आखा तीज आई है

( तर्ज — चांदनी ढल जायगी )

ध्यान जरा दीजिये, शिक्षामृत पीजिये ।
सच्ची सीख लाई है, आखा तीज आई है ।।टेर।।

आज का दिन दान का, अतिथि सम्मान का ।
प्रभु ने बताई है ।। आखा. १ ।।

दान दो महान है, अभय, पात्र दान है ।
दीजे चित लाई है ।। आखा. २ ।।

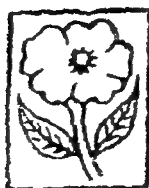
मरते को बचाइये, गिरते को उठाइये ।
गले लो लगाई है ।। आखा. ३ ।।

रत्नत्रय को पालते, सच्ची राह चालते ।
पात्र मुनिराई है ।। आखा. ४ ।।

भेद भाव तोड़िये, ऊंच नीच छोड़िये ।
हम सब भाई हैं ।। आखा. ५ ।।

भूखे को असन दो, नंगे को वसन दो ।
रोगी को दवाई है ।। आखा. ६ ।।

सेवा सबकी कीजिये, दान नित दीजिये ।
'बल्लु' ने सुनाई है ।। आखा. ७ ।।



# स्तवन विभाग

खण्ड - ६

कै दिन आवत, कै दिन जावत,
कै दिन रात चलै हि गये है ।
छोड अनादि नी नींद अबै यह,
वक्त तुझे फिर नाहि मिलै है ।
जाग मुसाफिर ! जाग मुसाफिर !
श्री गुरु तोहि जगाहि रहे है
सार करो निज माल की 'वल्लभ'
चोर फिरै अरु माल गहे है ।।

उपदेश

* धर्मोपदेश
* सामाजिक
* कथानक

# आत्म दमन

(तर्ज—मत भूलो कदा रे )

होवे मोक्ष तदा रे, होवे मोक्ष तदा ।
आतम ने करे वश मे यदा ।। टेर ।।

दमन कठिन कह्यो आतम तणो ।
जो दमले सुख पावे घणो ।। १ ।।

सयम से करो आतम दमन ।
त्यागो ये बाहरी रस्सी बंधन ।। २ ।।

जग मे प्रचण्ड है विषयो की ज्वाल ।
शांत करो सयम जल डाल ।। ३ ।।

जीत ली जिसने इन्द्रियाँ पाँच ।
उसको न लागे कही पर आँच ।। ४ ।।

'प्राज्ञ' गुरुजी की आज्ञानुसार ।
कीनो चौमासो भिणाय मंझार ।। ५ ।।

साल इक्कीस का पर्व प्रकाश ।
'बाल''वल्लभ'मुनि करे अरदास ।। ६ ।।



# त्यागी बनो

( तर्ज—तुमको लाखों प्रणाम )

सज्जन मुक्ति पाना हो तो ।
त्यागी बनो प्यारे, त्यागी बनो ।। टेर ।।

बिना त्याग मुक्ति नही होती,
त्याग बिना नही जगती ज्योति ।
आतम ज्योति जगाना हो तो त्यागी बनो ।। १ ।।

भोगों में भय बहुत भरा है,
त्यागी जीवन अभय खरा है ।
अजर अमर यदि बनना हो तो त्यागी बनो ।। २ ।।

भोगी तिरा न तिरसी भाई,
बिना त्याग फिरसी भव मांही ।
आवागमन मिटाना हो तो त्यागी बनो ।। ३ ।।

त्याग धर्म की महिमा जग में,
इन्द्र देवता गाते सब मे ।
मुनि 'बल्लभ' शिव पाना हो तो त्यागी बनो ।। ४ ।।



# समता धारो रे

( तर्ज—साता कीजो जी )

समता धारो रे, साजनिया होसी सफल जमारो रे ।। टेर ।।

सुख दुख संकट मृत्यु थॉने, कुण है देबा वारो रे ।
दूजा रो नी दोष सभो है, निज करमा रो रे ।। १ ।।

खोटा भाव हिया मे लाकर, मन मत करज्यो कारो रे ।
नीतर यांरो फल लागे लो, खोटो खारो रे ।। २ ।।

ई ऊंचा जीवन मे आकर पर भव मती बिगाड़ो रे ।
समता भाव अमित सुख देसी ज्यू जल भारो रे ।। ३ ।।

समता धारया सूं छूटेला लख चौरासी लारो रे ।
छोड विषमता अणी वगत में, आतम तारो रे ।। ४ ।।

समता धारी राय प्रदेशी, खन्दक, गज सुख मालो रे ।
अर्जुन मुनि मैतार्य आदि को नाम उच्चारो रे ।। ५ ।।

राग द्वेष रा फंदा में फस, चिंतामणि मत हारो रे ।
'प्राज्ञ' कृपा सू 'बल्लभ' मुनि को, है यो नारो रे ।। ६ ।।

# प्रेम से मिलिये

( तर्ज—नेमजी की जान बणी भारी )

प्रेम से मिलिये भुजा पसार, दूर हो मन का मैल विकार ।। टेर ।।

आज बडी जरुरत है जग में, बढे परस्पर प्यार ।
शुद्ध और सात्त्विक प्रीति का, होवे खूब प्रसार ।
यही है अन्तर्मन की पुकार ।। दूर हो० १ ।।

ऊपर से तो प्रेम दिखावे, अन्दर रक्खे खार ।
अन्त. स्नेह रहेगा कैसे ? सोचो सब नर नार ।
दूध भी फटता पाकर खार ।। दूर हो० २ ।।

बाहर से तो प्रेम दिखाकर, हँस हँस मिले अपार ।
अन्दर मे अति दाव पेचकर, देवे जडे उखार ।
कहो फिर कैसे पनपे प्यार ।। दूर हो० ३ ।।

माया ने ही मल्ली जिन के, प्रकटाया तन नार ।
भाई भाई लडे परस्पर, पांडव कौरव धार ।
और भी मिले बहुत अधिकार ।। दूर हो० ४ ।।

अन्तर्मन की निर्मलता विन, मुश्किल बेड़ा पार ।
नरक सातवी मे ले जावे, मन के बुरे विचार ।
ऊपर से चाहे हो अणगार ।। दूर हो० ५ ।।

तन का काला मोक्ष सिधावे, ज्ञानी रहे पुकार ।
मन का काला तीन काल मे, कर न सके उदार ।।
चतुर नर सोचो नयन उघार ।। दूर हो० ६ ।।

पर से तो हम प्रीति साधे, घर से करें बिगार ।
क्या लोगो को ठगने वाला, यही कहाता प्यार ।
'प्राज्ञ' जन सोचो हृदय मझार ।। दूर हो० ७ ।।

माया से मित्राई नाशे, बोले सूत्र मझार ।
ठगी, धूर्तता, छल, कपटाई, छोडो चतुर विचार ।
करे यों 'वल्लभ' मुनि पुकार ।। दूर हो० ८ ।।

# एक बन जाना

( तर्ज - यह मेरा प्रेम पत्र पढकर )

उलाहना प्रेम का सुनकर कि, करना प्रेम आपस मे ।
कि अब तुम एक बन जाना, कि अब तुम नेक बन जाना ।। टेर ।।

मिले आपस मे जब तिनके, सफाई सब जगह करते ।
किन्तु जब वे बिखर जाते, तो खुद ही गन्दगी करते ।।
समझ कर बन्धुओं ऐसा, बंधो सब एक तार में-३ ।। १ ।।

परस्पर चीटियां मिलकर, भुजगों को मिटा देती ।
शहद की मक्खियां देखो, मनुष्यों को भगा देती ।।
मनुज जो एक हो जाये, दनुज भी जाते हार है-।। २ ।।

बहुत से सूत के धागे, परस्पर मेल जब खाते ।
गजों को बांध देते है, जो फिरते मस्त मदमाते ।।
मिली गायें भगा देती, सिह को सीग मार के-३ ।। ३ ।।

पूज्य वर प्राज्ञ गुरूवरजी, सुनाते आ रहे तुमको ।
अरे अब तो उठो, जागो, नींद क्यों आ रही तुमको ।।
एक जो हो गये सारे, करे सुर नमस्कार है-३ ।। ४ ।।



# अन्दर बाहर एक हो

( तर्ज : दुनिया एक बाजार है )

अन्दर बाहर एक हो, बगुला सा नही भेख हो ।
मनसा, वाचा कर्मणा, जो कुछ हो वह नेक हो ।। टेर ।।

वीर प्रभु ने एक रूप मे, कर्म मुक्ति बतलाई हो ।
सूत्रों में भी स्थान स्थान पर, साधक को जतलाई हो ।। १ ।।

जैसा कहते वैसा करते, वे कहलाते सज्जन हो ।
कथनी करनी का अंतर तो, दुष्ट पुरुष के लक्षण हो ।। २ ।।

वाहर से धन्ना मुनि जैसे, उत्कृष्टा कहलावे हो ।
अन्दर खाने कपट क्रिया कर, दुराचार पनपावे हो ॥ ३ ॥

मल्लिनाथ का चरित्र सुनाकर, कपट हेय फरमाते हो ।
कहने से पहले खुद भी तो, क्यों न सरल वन जाते हो ॥ ४ ॥

ठग वृत्ति को त्याग, सरलता धारो वेड़ा पार हो ।
यदि विषमता रखी जरा भी, डूवेगा मझधार हो ॥ ५ ॥

मेरे गुरूवर 'प्राज्ञचन्द्र' का निशदिन यह सदेश हो ।
अन्दर से वैसे वन जाओ, जैसा वाहर वेष हो ॥ ६ ॥

## चले हैं परदेश

( तर्ज-दो दीवाने दिल के )

खजाने छोड़ धन के, चले है स्वामी तन के ।
चले है, चले हैं, चले हैं, पर देश ॥ टेर ॥

खूब ही श्रम करके धन को कमाया,
दीना न दान माही खरचा न खाया ।
भरे है कोटि गिन के, गाड़े है जमी खिन के ॥ चले है ॥

सोचा था मैंने सग मे ले जाऊंगा,
आगे से आगे खूब मौजे मनाऊँगा ।
रहूंगा वन ठन के, चलूंगा ऐठन के ॥ चले हैं २ ॥

मृत्यु के आने पर डोली जव निकाली,
देखा तो दोनो हाथ मेरे थे खाली ।
लकडिया चुन चुन के, लगाई आग तन के ॥ चले है ३॥

धन को तो खाने वाले खा गये हडप के,
कर्मो की मार मैंने खाई तड़प के ।
पकाया मुझे भुन के, रोया मे सिर धुन के ॥ चले है. ४॥

पन्ना गुरुजी कहते भूलिये न हाथ का,
हाथों से दे दिया वही तेरे साथ का ।
चेतो रे अब सुन के, करो रे काम पुन के ।। चले है. ५ ।।



# लोभी की स्थिति

( तर्ज- बाजरा री पाणत करतां )

लोभी जद लोभ मांही फंस जावे,
'क' ऊ तो न्याय ने अन्याय सारा भूल जावे ।। टेर ।।

हिसा, झूंठ चोरी और व्यभिचारी,
'क' ऊ तो धन रे कारण कर लेवे सारी ।।१।।

ज्यांन त्यांन करीने ऊ धन चावे,
'क' चाहे कित्त ही अनर्थ भले ही हो जावे ।।२।।

पिण न विचारे कांई संग जासी,
'क' ए तो सारी ही रहजासी अठे धनराशि ।।३।।

धन तो कमावे तू ने दूजा खासी,
'क' थारे साथ में तो पुण्य पाप दोई जासी ।।४।।

इत्तो जाण लोभ ने थे छोड़ दीज्यो,
'क' मुनि 'वल्लभ' संतोषामृत नित पीज्यो ।।५।।



# पाँच प्रमाद

( तर्ज- या सुपना सम ससार )

है दुर्गति के दातार, महा दुखदाई ।
ये पाचो ही परमाद तजो रे भाई ।। टेर ।।

यह 'मद' पहला जो आठ प्रकार कहावे ।
जो सेवे वह तो भव भव में भटकावे ।।
है धन्य उसी को जो देवे छिटकाई ।। ये. १ ।।

यह 'विषय' महा दुखदाय नरक पहुंचावे ।
इस भव मे भी यह दण्ड भण्ड करवावे ।।
जो पड़े इन्द्रिय के वश मे अति दुख पाई ।। ये. २ ।।

यह 'क्रोध' 'मान' और 'माया' 'लोभ' की चौकी ।
जो पड़ा इसी मे पाप गांठ सिर तौकी ।
फिर उठा कष्ट अति फिरा चतुर्गति माही ।। ये ३ ।।

जो 'निद्रा' सेवे खोवे पूंजी सारी ।
इस निद्रा से हो होती है जग ख्वारी ।।
पाचों निद्रा मे रह पीछे पछताई ।। ये. ४ ।।

देश, राज और भात कथा है नारी ।
प्रभु ने फरमाई विकथा चार प्रकारी ।।
मत निन्दा विकथा करो साफ दरसाई ।। ये. ५ ।।

ये पांचो ही प्रमाद आदरे कोई ।
वह पावे बहुला दु.ख त्याग दो जोई ।।
श्री 'प्राज्ञ' कृपा से 'बल्लभ' जोड़ सुनाई ।। ये. ६ ।।



# ज्योति जगा

( तर्ज - एक परदेशी मेरा )

वीर प्रभु वीर प्रभु रटन लगा, आत्मा की अब शुभ ज्योति जगा ।। टेर ।।

लाख चौरासी में घूम तू आया,
पुण्य उदय से नर तन पाया ।
चितामणि कॉच में मत ना ठगा ।। आ० १ ।।

धर्म दयामय पाना कठिन है,
पायेगा वही जो पापों से भिन्न है ।
इसका भी योग मिला दूर ना डगा ।। आ० २ ।।

सुनकर श्रद्धले होगा भव पार तू,
वीर वाणी चित्त में धार ले रे धार तू ।
सुरासुर, राजा, नर पडेगे पगॉ ।। अ० ३ ।।

अनन्त अनन्त तिरे, तिरेगे भविष्य मे,
भवि जीव जिनवाणी नौका से विश्व मे ।
मुनि 'वल्लभ' काम क्रोध को भगा ।। अ० ४ ।।



# जाग उठो

( तर्ज - जरा सामने तो आओ )

जरा जाग उठो रे प्राणियों, मिले साधन न हो वेकार रे ।
शुभ साधन से करलो साधकों ! निज जीवन की नैया पार रे ।। टेर ।।

चिंतामणी सम नर देह पाया, इसे न खोना नाई ।
सार सार को ग्रहण करो, ज्यूं गोता न हो भव मांही ।
दे रहे संत ललकार रे, यहा रहना दिवस ही चार रे ।। शुभ १ ।।

जिन वाणी का श्रवण वीर ने, अति दुर्लभ बतलाया ।
जन्म जरा मृत्यु टल जावे, जिसने सुनना पाया ।
ले श्रद्धा सहित तू धार रे, शुध श्रद्धा से आत्मोद्धार रे ।। शुभ २।।

भोग अनन्ता बार अनन्ती, मिले सुखद प्रिय तुझको ।
तो भी तृप्त बना नही प्यारे, मिला न आनद तुझको ।।
इन भोगो को दे तू टार रे इन, भोगो मे रोग अपार रे ।। ३ ।।

धर्म क्रिया मे तन, मन, वचन से, पराक्रम दिखलाना ।
दूर हटा कर कर्म पाश को, शिवपुर सत्वर पाना ।।
यो 'प्राज्ञ' शिष्य अजमेर मे, मुनि 'बल्लभ' रहा पुकार रे ।। ४ ।।



# लीज्यो सफल बणाई

( तर्ज - थे म्हाला घणा लागो )

आ मिनखा जूण थे पाई, ईने लीज्यो सफल बणाई ।
हो सा थाने ज्ञानी गुरू देवे सीख, इने लीज्यो सफल बणाई ।।
हो सा थाने सद्गुरू देवे सीख, ईने लीज्यो सफल बणाई ।। टेर ।।

ज्यारी जबर होवे पुण्यवानी, वो ही सुन पावे जिनवाणी ।
हो सा थे तो सुणल्योनी धर पीक, ईने लीज्यो ।।
हो सा था को मिटसो धाकाधीक, ईने० ।। १ ।।

सरधा री कारज बाँको, ई विन सूनो सव खाखो ।
हो सा थे तो करल्यो श्रद्धा ठीक, ईने लीज्यो ।।
हो सा था की मिटसी भव भव चीख–ईने लीज्यो ।। २ ।।

है मनसा जीतण दोरी, विषया री करणी होरी ।
हो सा थे तो त्यागो विषया री भीख, ईने लीज्यो० ।।
हो सा थे तो चालो वडारी लीख-ईने लीज्यो० ।। ३ ।।

कर 'बल्लभ' किरिया ऊची, या मुगत खोलणारी कूंची ।
हो सा थां की मुगती होसी नजीक - ईने लीज्यो० ।।
हो सा थांको मिलसी ज्योति मे ज्योत–ईने ।। ४ ।।

# सज्जन सोच

( तर्ज - खेलण दो गणगोर )

सोच जरा मन मांय-सज्जन म्हारा-सोच जरा मन माय ।
ए जी शुभ योग मिल्या है आय, सज्जन० ।। टेर ।।

लाख चौरासी ने घूमता रे, मिल गयो नर अवतार ।
ए जी ओ तो मुक्ति नो खुल्लो द्वार-सज्जन० ।। १ ।।

आरज खेतर, उत्तम कुल भी, मिलियो है सुखकार ।
ए जी पाँचों इन्द्रियाँ मिली बलधार-सज्जन० ।। २ ।।

देह नीरोग, मिल्यो दीर्घायु, सत समागम सार ।
ए जो जिनवाणी श्रवण हितकार सज्जन० ।। ३ ।।

श्रद्धा लाकर त्रय योगों, से, सज ले सयम साज ।
ए जी निश्चय पासो शिवपुर राज, सज्जन० ।। ४ ।।

इन दस बोलो का योग कठिन है, सुन लेना धर ध्यान ।
ए जी जो भी पावे सो पुन्यवान–सज्जन० ।। ५ ।।

सुन्दर अवसर आन मिल्यो है, यतन करो हर बार ।
ए जी ज्या सूं पार पडे पतवार, सज्जन० ।। ६ ।।

क्षण क्षण जीवन जाय रह्यो है, लोट न पाछो आय ।
ए जी धर्म ध्यान करो चित्त चाय, सज्जन० ।। ७ ।।

'प्राज्ञ' कृपा से बाल रु 'बल्लभ' गाये ग्राम भिणाय ।
ए जी कोई साल इक्कीस मे आय सज्जन० ।। ८ ।।



# आछो ओसर

( तर्ज - तन्दुरा की )

ओ आछो रे औसर आयो, यो मिनख जमारो पायो ॥ टेर ॥

ओ चितामणी ज्यूं जाणो, अर कल्प वृक्ष यो मानो ।
जो मन री आसा पूरे, अर सारी चिंता चूरे ।
ले उण सूं लाभ सवायो ॥ यो १ ॥

आ मिलगी रे आरज जागा, ऊँचो कुल मिलियो भागां ।
अर पायो आऊखो मोटो, काया मे रोग रो टोटो ॥
तू चेत हुवे जो डायो ॥ यो २ ॥

इद्रिया भी सगति शाली, गुरू मिलिया महाव्रत पाली ।
जो देवे सीखड सांची, अर योग्य वणावे टांची ॥
ले पकड इणा रो पायो ॥ यो ३ ॥

शास्तर भी केई सुणियाँ, पिण कदियन वा ने गुणिया ।
नी राखी आसता पूरी, आदरता भाग्यो दूरी ।
अव आदर तू मन चायो ॥ यो ४ ॥

मुनि 'वल्लभ' तिरणो चावे, तो 'पन्ना' गुरू फरमावे ।
आ वगत अमोलक आई, मत विरथा दीजे गवाई ।
भज ले जिन राज सवायो ॥ यो ५ ॥

-०—०-

# लाहो ले लीज्यो

( तर्ज - घुडलो घूमेलो जी घूमेला )

ओ चिंतामणी तन पाय, लाहो ले लीज्यो जी ले लीज्यो ।
था ने रह्या सत समझाय - लाहो० ॥ टेर ॥

पुण्योदय जद थारो आयो, देव दुल्लहा नर तन पायो ।
कर नुकृत सफल बणाय, लाहो० ॥ १ ॥

विषय कीच में फंसकर प्यारे, चिन्तामणि को मती बिगारे।
इण ने साफ बचाय, लाहो० ॥ २ ॥

राग द्वेष सूं कर्म बन्धावे, फिर तू याने क्यूँ अपनावे।
चित चगे छिटकाय, लाहो० ॥ ३ ॥

अपणो कुछ तो ध्यान लगाओ, जगमग आतम ज्योति जगाओ।
आ मोह री नीद उडाय, लाहो० ॥ ४ ॥

थांरो यो जीवन अनमोलो, कुछ तो इण री कीमत तोलो।
रग रग में धर्म रमाय, लाहो० ॥ ५ ॥

गुरूवर पन्ना यूं फरमावे, मुनि 'वल्लभ' क्यूँ समय गमावे।
यो पाछो लौट न आय, लाहो० ॥ ६ ॥



# चतुर चेत

( तर्ज : खेलण दो गणगोर )

चेत सके तो चेत, चतुर नर, चेत सके तो चेत।
अरे थांरो चिड़ियां चुग रही खेत, चतुर० ॥ टेर ॥

समय समय पर संत गुणी जन, देय रहे संकेत।
अरे तू तो सोवे मत हो अचेत, चतुर .... ॥ १ ॥

परभव निश्चय जावणो है, ले ले खरची अगेत।
अरे थांरी नैया पड़ी है छेत, चतुर .... ॥ २ ॥

मात, पिता, सुत, नारी, बांधव, स्वारथ सू करे हेत।
अरे ए तो अन्त मे धोखो देत, चतुर . ॥ ३ ॥

धर्म क्रिया कर मानव भव को, क्यूं नहीं लाहो लेत।
अरे भौतिक सुख है बालू रेत, चतुर ॥ ४ ॥

पुण्य उदय से पावियो नर भव यो मुक्ति निकेत।
अरे अब क्यो कर रहत पछेत, चतुर .. ॥ ५ ॥

मैना बाई की दीक्षा मांही, आये धनोप सुखेत।
अरे मुनि 'वल्लभ' तू भी चेत, चतुर ॥ ६ ॥

# जाग बन्धुआ रे

( तर्ज - बोल पछोड़ा रे )

जाग बधुआ रे, ओसर यो आयो हाथ मे, म्हारा प्यारा सिरदार।
म्हारा प्यारा नर नार, ले लीजे खरची साथ मे ।। टेर ।।

पूरवली पुण्याई सू थे, पाई मिनखा जूण रे।
प्रभु नाम रो पूंजी साथे, लीजे दूणादूण रे ।। १ ।।

साधा री सगत है मूगो, सूंगी नही लिगार रे।
प्रभु कथा ई सूं भी मूगी, करले जरा विचार रे ।। २ ।।

दीन दुख्यां रो साथी वणजा, वणजा दीनानाथ रे।
दुनिया सव चरणा मे, थारे जोडे ली नित हाथ रे ।। ३ ।।

खूब भलाई करजा जो भी, थारा सू वण आय रे।
भूल वुराई कदे न करजे, ज्यूं जिवडो सुख पाय रे ।। ४ ।।

किणरी भी निन्दामत करजे, कडवो भी मत वोल रे।
सव वाया ने मां वेणा ज्यू, लीजे हिरदे तोल रे ।। ५ ।।

चेतावे श्री 'पन्ना' गुरूजी 'वल्लुडा' तू जाग रे।
राग, धेस ने छोड, धरम रा मारग पे तू लाग रे ।। ६ ।।



# माटी की काया

( तर्ज - ढोला ढ़ोल मजीरा )

मनवा माटी की या काया रे ।
कदे फूट जावेली ई मे क्यू भरमाया रे ।। टेर ।।

ऊपरलो यो रूप देखने, मन मे तू अकडावे ।
हाड़ मांस रो बण्यो पीजरो, क्यू नी ध्यान लगावे ।। १ ।।

माल खिलावे, पुष्ट वणावे, तैल फुलैल लगावे ।
आखिर मे पिण करे गदगी, पड़ी पडी सड जावे ।। २ ।।

मूंछा ऊपर हाथ फेर ने, अकड़ धकड़ ने चाले ।
सॉस गया सूं कोई न पूछे, अगनी मे परजाले ॥ ३ ॥

प्रभु नाम तो कदे न लीनो, फिरे होय मदमातो ।
फूट फूट ने पछे रोवसी, नरकां माही जातो ॥ ४ ॥

धूआ की सी धूंध समझ ले, क्षण माही विरलासी ।
काचा घट ज्यूँ काची काया, जतन करत गल जासी ॥ ५ ॥

नर देह पाकर धर्म ध्यान में, जो कोई रम जावे ।
शिव 'वल्लभ' वो बणे झटा पट, 'पन्ना' गुरू फरमावे ॥ ६ ॥



# आक फल क्यों खा रहा

( तर्ज - या हसीना बस मदीना )

अय मनुज तू मनुजता को, क्यो भुलाता जा रहा ।
आम्रफल को छोड़ कर, यह आक फल क्यों खा रहा ॥ टेर ॥

क्यों सताता दीन जन को, क्यों मिटाता है उन्हें ।
पेट में उनके ये छुरें, क्यों धसाता जा रहा ॥ १ ॥

क्यो परस्पर मे अरे तू, प्रेम से रहता नही ।
फूट पनपा कर धरम को, क्यों लुटाता जा रहा ॥ २ ॥

दूसरो की वृद्धि को लख, ईर्ष्या क्यों कर रहा ।
सौहार्द्र को तज दुष्टता को, क्यों वढ़ाता जा रहा ॥ ३ ॥

भक्त बन कर के प्रभु का, क्यों वगल रखता छुरी ।
अन्य को ठग कर स्वयं को, क्यों ठगाता जा रहा ॥ ४ ॥

तुच्छ चांदी के लिये, क्यों वेचता ईमान को ।
चाहता चढ़ना शिखर तो, क्यो फिसलता जा रहा ॥ ५ ॥

पूज्यवर श्री 'प्राज्ञ' गुरू को जय विजय होवे सदा ।
उनकी कृपा से 'बाल' 'वल्लभ' यों सुनाता जा रहा ॥ ६ ॥

# लाभ उठाले

( तर्ज - एक परदेशी मेरा )

नरपन पाया है तो लाभ उठाले ।
नारायण बनने को कदम बढ़ाले ।। टेर ।।

अरे नर सोच जरा आया किस लिये है ?
आगे बढने या पीछे हटने के लिये है ?
महा पुरूषो की वाणी शीश चढा ले ।। १ ।।

कितने जीवों को तूने अभयदान दीना है ?
हितकारी वाणी बोल उपकार कीना है ?
द्वेष ईर्ष्या से चित्त जल्दी हटाले ।। २ ।।

पर दु.ख देख तेरा जिया अकुलाया क्या ?
पर सुख देख सुख दिल मे बढ़ाया क्या ?
निज पर भेद की लकीर मिटा ले ।। ३ ।।

काम, क्रोध, मद, लोभ, आतमा के वैरी हैं,
एक दूसरो की निंदा पतन की सेरी है ।
प्रेम पूर सरिता मे खूब नहाले ।। ४ ।।

दीन जन भाइयो को गले भी लगाया है ?
उनके दुखो मे कभी हिस्सा भो बटाया है ?
तन, मन, धन, सेवा माही लगा ले ।। ५ ।।

दान, शील, तप, भाव शुद्ध मन भाइये,
मुक्ति के 'वल्लभ' फिर शीघ्र बन जाइये ।
'प्राज्ञ' गुरू चरणो मे चित्त रमा ले ।। ६ ।।



# सफल कर ले

( तर्ज - तेरे द्वार खड़ा भगवान )

यह मिला मनुज अवतार, सफल करले रे प्राणी-हो ।
तुझे कहते संत पुकार कि करले दिल मे जरा विचार ।। टेर ।।

चितामणी सम नर देह तुझ को, मिल गया पुण्य प्रभावे ।
विषय कीच मे डाल इसे, फिर क्यो बेकार गवावे रे-क्यों ।।
कुछ ले ले इसका सार कि तेरा हो जाये उद्धार ।। सफल १ ।।

जिस नरतन के लिये, रात दिन सुर गण इच्छा करते ।
वह तन तुझको मिला सहज में, धर्म करो सुख वरतेरे-धर्म ।।
यह हित शिक्षा ले धार कि निश्चय पावेगा भव पार ।। २ ।।

सम्यग्दर्शन ज्ञान, चरित का पालन करना प्यारे ।
रत्नत्रयी के पालन से ही, बनते मुक्ति सितारे रे-बनते ।।
वे मिटा कर्म जंजाल कि अक्षय बन जाते अविकार ।। ३ ।।

धर्म क्रिया से पापी जन भी, तिर गये भव से अनेकों ।
चण्ड कौशिया, भूप प्रदेशी, अर्जुन माली देखो रे-अर्जुन ।।
मुनि 'बल्लभ' की पतवार, धर्म से पहुचेगी उस पार ।। ४ ।।

---

# अब तो चेतो

( तर्ज - पल पल बीते उमरिया )

अब तो चेतो रे प्राणी, अवसर नही आसी ऐसो ।
मिल्यो आय जैसो जैसो ।। टेर ।।

अतुल पुण्य का उदय तेरे जब आया है, आया है ।
मनुष्य जन्म का अवसर तब यह पाया है, पाया है ।
लाख चौरासी चक्कर मे, चकरी सम खूब फिरा है,
छुड़ा अब गैसो गैसो ।। १ ।।

नरपन पाकर जग वैभव मे क्यों फूला, क्यो फूला।
मिले अनन्तीवार तुझे ये क्यों भूला, क्यो भूला।
अब के ऐसा वैभव ले, जैसा नही पाया पहले,
सुनाऊँ सदेशो ऐसो० ॥ २ ॥

मात, पिता, भाई, भौजाई नही तेरे, नही तेरे।
समय पडे तब ये आयेगे, नही नेडे, नही नेडे।
मान मान मेरे भाई, चेताऊ दे दे हेलो,
सूतो है कैसो कैसो० ॥ ३ ॥

इस अवसर को पाकर जो नर चेते हैं, चेते है।
वे ही सद् उपदेश हमे यों देते है, देते है।
चेत चेत मुनि 'वल्लभ' तू, श्री गुरू 'पन्ना' चेतावे।
छोड राग द्वेषो द्वेषो० ॥ ४ ॥



# मुसाफिर जाग

( तर्ज - धन धन धूलचन्द महाराज )

मुसाफिर जाग जाग भया भोर, अरे गाफिल हो सोने वाले ॥ टेर ॥

यह जग है एक सराय, यहा पर एक आय एक जाय।
कोई बैठ न यहा रहाय, अरे न् रहना चाहने वाले ॥ १ ॥

जरा तू सुन ले यहा की रीत, यहा पर स्वार्थ भरी है प्रीत।
नही है कोई किसी का मीत, व्यर्थ ही मेरा कहने वाले ॥२॥

तेरा जीवन चचल जान, ज्यों है ओस विन्दु, गज कान।
विजुरी झलके के दरम्यान, पिरोले मोती पिरोने वाले ॥३॥

तू कुछ चाहता है आराम, इसी हित करता कार्य तमाम।
किन्तु आम्र वपन के स्थान, वीज काटो के बोने वाले ॥४॥

तुझको रहना यहा पर अल्प, मुख से कटुक वचन मत जल्प।
धोले अपना पातक पक, अरे ओ पातक धोने वाले ॥५॥

पूज्यवर 'प्राज्ञचन्द्र' गुरूराज, चेतावे देकर के आवाज।
सजाले रत्नत्रय का साज, अरे ओ मुक्ति चाहने

# संयम होगा कि नहीं

( तर्ज-मेरे मन की गंगा )

मदमाते इस मन का और इठलाते इस तन का भी।
बोल भैया बोल संयम होगा कि नहीं ।। टेर ।।

मन मतग यह कितना चचल, पल पल मे पलटाता है ।।
बडे बड़े रणशूरों को भी, निश दिन छलता जाता है ।
नपुंसकी मन गज पे अंकुश , होगा कि नही ।। बोल. १ ।।

निज भावों को कर कर खोटे, कितनो को पिटवाया है ।
कितनो की जड़ काटी है और कितनों को मिटवाया है ।
वैर भाव तज साम्य भाव, दिल होगा की नही ।। बोल. २ ।।

खूब खिलाकर, खूब पिलाकर, खूब इसे नहला कर के ।
हृष्ट पुष्ट वलवान वनाया, खूब इसे सहला कर के ।
पर इस तन से सब का रक्षण, होगा कि नही ।। बोल. ३ ।।

पाई तूने देह अमोलक, पहले की पुण्याई से ।
अतः यशोध्वज फैला ले तू सेवा और भलाई से ।
मुनि 'वल्लभ' फिर मुक्ति 'वल्लभ' होगा कि नही ।। बोल. ४ ।।



# कैसी आई निंदड़िया

(तर्ज- सियाराम गये, वनवास गये )

मेरे भ्रात जगो, मेरे तात जगो, तुम्हे आये जगावन आज रे,
यह कैसी आई नींदड़ियां ।। टेर ।।

काल अनादि से सोये हो अब तो आलस त्यागो,
आंखे खोलो, मत ना डोलो शिव मारग पर लागो-रे भाई ।। १ ।।

प्रभु भजने का अवसर ऐसा, फिर नहीं मिलसी प्यारे ।
मन वच तन से,एक लगन से, निशदिन ध्यान लगा रे-भैय्या ।। २ ।।

नर का चोला, समय अमोला, पाकर मत रह पीछे ।
जो रह जासी, वो पिछतासी, क्यों तू आंखें मीचे-रे भैया ।। ३ ।।

संत समागम कर ले भाई, पाप तेरे मिट जासी ।
भव भव फेरा, मिटसी तेरा, सच्चिद आनद पासी-रे भैय्या ।। ४ ।।

श्री 'पन्ना' गुरुदेव सुनावे, सोवे सो ही खोवे ।
जो जन जागे, 'बल्लभ' लागे, ज्योति रूप वह होवे-रे भैय्या ।।५।।

---

# प्रेरणा गीत

रग लागत लागत लागेला, भय भागत भागत भागेला ।। टेर ।।

है पाप खुले मुह बोलण में, तो उत्तरासन सब राखेला ।। १ ।।
समभाव समाई करबां ने, मूंडा पर मुहपति बांधेला ।। २ ।।
प्रभु वाणी रा जो प्यासा है, वे नित स्वाध्याय करावेला ।। ३ ।।
छह काया री जयणा खातिर, सवर पौषध ने धारेला ।। ४ ।।
निज आतम ने उज्जवल करवा, नित प्रतिक्रमण मे आवेला ।। ५ ।।
बच्चा ने योग्य वणावा ने, कोई धार्मिक स्कूल खुलावेला ।। ६ ।।
सब वायां भाया हिल मिल ने, सब सूं सप्रेम खमावेला ।। ७ ।।
जो "रत्नत्रय" आराधेला, वे 'बल्लभ' मुगत्या पावेला ।। ८ ।।



# फैशन छोड़ दो

( तर्ज-मेलो भरियो हो तेजाजी थारी )

फैशन छोड दो, भारत रा वासी, सोरा बणस्यो हो ।। टेर ।।

सादो खाणो, सादो रेणो, सादो फेरणो सीखो हो ।
सादगी में सुख गहरो है केवूं नीको हो ।। १ ।।

टेरेलोन और नायलॉन ने दिलसूं दो छिटकाई हो ।
यां ने फेर्यां बढ़े न इज्जत, रोग बुलाई हो ।। २ ।।

खादी फेरो, रेजी फेरो, फेरो मोटो कपडो हो ।
जी सू थाको देह निरोगो, बणसी तगड़ो हो ।। ३ ।।

गांधीजो की देखो सादगी, एक धोवती राखी हो ।
कतरी कीरत फेली वांरी दुनियां साखी हो ।। ४ ।।

धोती कुर्तो टोपी पहनी, लालबहादुर शास्त्री हो ।
पिण कतरो हो मान जगत में, प्रधानमन्त्री हो ।। ५ ।।

चटक मटक सूं इज्जत कोनी, इज्जत इण सूं होवे हो ।
शुध आचार विचार और व्यवहार मे सोहे हो ।। ६ ।।

हेलो दे दे गुरु सुणावे, श्री 'पन्ना' उपकारी हो ।
सुख चाहो तो रखो सादगी जन हितकारी हो ।। ७ ।।



# अहिंसा के बल पर

(तर्ज-आओ बच्चों ! तुम्हें दिखाये)

प्रश्न अनेकों हम करते है, उत्तर एक ही देना है ।
भारत को सोने की चिड़िया किसके बल पर कहना है ।।टेर।।
अहिंसा के बल पर ... ३ ..

मर्यादा पुरुषोत्तम किस बल सिरी राम कहलाये थे ?
किस बल लका पर विजयी बन भक्त हृदय हुलसाये थे ?
किस बल पर श्री कृष्णचन्द्र ने योगीश्वर पद पाया था ?
किस बल पर अन्याय उखाडा न्याय धर्म सरसाया था ?
तीन खण्ड के स्वामी किस बल बने यही बतलाना है ।। भारत १ ।।

महावीर ने भारत को किस बल पर आन जगाया था ?
और मानव को मानवता का किस बल पाठ पढ़ाया था ?
यज्ञो मे होती हिंसा को किस बल पर मिटवाया था ?
किस बल नर को नर से करना प्यार दुलार सिखाया था ?
वीर प्रभु ने किस बल मुक्ति पाई यह भी कहना है ।। भारत २ ।।

किस बल पर गाधी बाबा ने अग्रेजो को फटकारा ?
पराधीनता से हमको किस बल दिलवाया छुटकारा ?
गरीब कुल मे जाया सादा लालबहादुर शास्त्री था ?
किस बल कीर्ति पाई उसने किस बल प्रधानमत्री था ?
किस बल पर बलिहार हुआ वह, किस बल हमको रहना है ।। भारत ३ ।।

किस बल पर श्री 'पन्ना' गुरु ने जीवन उच्च बनाया था ?
किस बल पर लडते लोगो को आपस मे मिलवाया था ?
जिन शासन की महती शोभा किस बल पर करवाई थी !
किस बल श्री स्वाध्याय की सौरभ भारत मे महकाई थी ?
किस बल पर जग-वल्लभता का ताज गुरु ने पहना है ।। ४ ।।

# फैशन छोड़ दो

( तर्ज-मेलो भरियो हो तेजाजी थारी )

फैशन छोड़ दो, भारत रा वासी, सोरा बणस्यो हो ।। टेर ।।

सादो खाणो, सादो रेणो, सादो फेरणो सीखो हो ।
सादगी में सुख गहरो है केवूं नीको हो ।। १ ।।

टेरेलोन और नायलॉन ने दिलसूं दो छिटकाई हो ।
यां ने फेर्यां बढ़े न इज्जत, रोग बुलाई हो ।। २ ।।

खादी फेरो, रेजी फेरो, फेरो मोटो कपड़ो हो ।
जी सू थाको देह निरोगो, बणसी तगड़ो हो ।। ३ ।।

गांधीजी की देखो सादगी, एक धोवती राखी हो ।
कतरी कीरत फेली वांरी दुनियां साखी हो ।। ४ ।।

धोती कुर्तो टोपी पहनी, लालबहादुर शास्त्री हो ।
पिण कतरो हो मान जगत में, प्रधानमन्त्री हो ।। ५ ।।

चटक मटक सूं इज्जत कोनी, इज्जत इण सूं होवे हो ।
शुध आचार विचार और व्यवहार में सोहे हो ।। ६ ।।

हेलो दे दे गुरु सुणावे, श्री 'पन्ना' उपकारी हो ।
सुख चाहो तो रखो सादगी जन हितकारी हो ।। ७ ।।



# अहिंसा के बल पर

(तर्ज-आओ बच्चो ! तुम्हें दिखाये)

प्रश्न अनेको हम करते हैं, उत्तर एक ही देना है ।
भारत को सोने की चिडिया किसके बल पर कहना है ।।टेर।।
अहिसा के बल पर ....३...

मर्यादा पुरुषोत्तम किस बल सिरी राम कहलाये थे ?
किस बल लका पर विजयी बन भक्त हृदय हुलसाये थे ?
किस बल पर श्री कृष्णचन्द्र ने योगीश्वर पद पाया था ?
किस बल पर अन्याय उखाडा न्याय धर्म सरसाया था ?
तीन खण्ड के स्वामी किस बल बने यही बतलाना है ।। भारत १ ।।

महावीर ने भारत को किस बल पर आन जगाया था ?
और मानव को मानवता का किस बल पाठ पढाया था ?
यज्ञो मे होती हिंसा को किस बल पर मिटवाया था ?
किस बल नर को नर से करना प्यार दुलार सिखाया था ?
वीर प्रभु ने किस बल मुक्ति पाई यह भी कहना है ।। भारत २ ।।

किस बल पर गाधी बाबा ने अग्रेजों को फटकारा ?
पराधीनता से हमको किस बल दिलवाया छुटकारा ?
गरीब कुल मे जाया सादा लालबहादुर शास्त्री था ?
किस बल कीर्ति पाई उसने किस बल प्रधानमंत्री था ?
किस बल पर बलिहार हुआ वह, किस बल हमको रहना है ।। भारत ३ ।।

किस बल पर श्री 'पन्ना' गुरु ने जीवन उच्च बनाया था ?
किस बल पर लडते लोगो को आपस मे मिलवाया था ?
जिन शासन की महती शोभा किस बल पर करवाई थी !
किस बल श्री स्वाध्याय की सौरभ भारत मे महकाई थी ?
किस बल पर जग-वल्लभता का ताज गुरु ने पहना है ।। ४ ।।

सामाजिक

# युवकों जागो

( तर्ज - सियाराम बुला लो )

प्यारे नवयुवकों ! तुम जागो सही
मोही निद्रा को शीघ्र से त्यागो सही ।।टेर।।

काल बीता है बहुत, इसको तो ध्यान मे लाइये,
युग पे युग जाते रहे, इसको न तुम भूलाइये ।
अब शीघ्रातिशीघ्र से जागो सही ।। प्यारे १ ।।

धर्म रथ की शुभ धुरा का भार जग में महान है,
वह भार है तुम कधो पर, जिसका भी करना ध्यान है ।
उस भार से लघुनर होओ सही ।। प्यारे २ ।।

राग द्वैष हटाके दिल से, प्रेम को अपनाना तुम,
झूंठे झगडे छोडकर, जिन धर्म को अपनाना तुम ।
प्रातः वीर जिनन्द को ध्यावो सही ।। प्यारे ३ ।।

स्वाध्याय की शुभ साधना, तुम नित्य प्रति कर लीजिये,
वीर वाणी धार दिल निज रूप को लख लीजिये ।
धर्म ध्वजा को अब फरकाओ सही ।। प्यारे ४ ।।

पूज्यवर गुरु 'प्राज्ञ' की आज्ञा को धारण कर हिये,
घूमते सोहन गुरु सग बाल 'वल्लभ' आ गये ।
होली चौमासी टाटोटी गावो सही ।। प्यारे ५ ।।

-*-*-

# कुछ तो सोचो रे

( तर्ज - बोल बोल म्हारा ऋषभ कन्हैया )

सोचो सोचो जरा सज्जनों, समय बदलग्यो रे ।
कुछ तो सोचो रे ।। टेर ।।

थां पर दुख का मंगरा ढसग्या, जी मे थे सब दबग्या रे ।
कईयक थां का साथी भी तो, इण में गमग्या रे ।।१।।

पहलो मंगरो ढम्यो चाय को, दूजो फैशन बढ़ग्यो रे ।
तीजो आडम्बर करवा सू, दुखडो बढग्यो रे ॥२॥

चौथो मगरो ढस्यो जोर को, बेटा बेचण लाग्या रे ।
वड़ा घरा का बेटा व्याव में नाचण लाग्या रे ॥३॥

छट्ठो मगरो सुणल्यो भाई खान पान सब बिगड्या रे ।
अण्डा मांस भी खावे, पीवे मदीरा बोड्यां रे ॥४॥

विनय धर्म सब खूँटयां मलग्यो, उदण्ड हो गया सारा रे ।
पुत्र लडे मा बापा सूं और बहूजी न्यारा रे ॥ ५ ॥

मगरो अठमो और बतावा, बढ़गी भ्रष्टाचारी रे ।
रिश्वत खोरी, धोखा बाजी, हो गई भारी रे ॥ ६ ॥

अतरा मंगरा ढ़स जावा सूं, थे सब दुखिया होग्या रे ।
विवेक बुद्धि और आपस मांही प्रीति खोग्या रे ॥७॥

या मगरा रो मलबो सारो, दो अब दूर हटाई रे ।
भरी सभा मे 'प्राज्ञ' कृपा सूं 'वल्लभ' गाई रे ॥ ८ ॥



# चाय चंडिका

( तर्ज - ख्याल की )

जय चाय चण्डिका, आछी आई ए भारत देश मे ॥टेर॥

पेली तो गुजरात मे चाली, फिर चाली पजाव ।
राजस्थान में जोर सू चाली बणकर लाट साहब जी ॥१॥

ब्राह्मण पीवे, क्षत्रिय पीवे, पीवे चारो वर्ण ।
जी पर थारी कृपा हो गई वो ही आ गया शरण जी ॥२॥

तेली पीवे, महाजन पीवे, पीवे सगला जाट ।
साधु सत्यां भी दिन उग्या ही जोवे थारी वाट जी ॥३॥

वैद्य लोग जो जहर बतावे, वे भी पीता जावे ।
डाक्टर साव के खुल्लो खातो विना टेम गटकावे जी ॥४॥

पेली तो सुबह ही बणती के बणती ही साम ।
अब तो थांरो नही ठिकाणो, बणे है आंठो याम जी ।।५।।
उद्‌घाटण चाटण मे आगे सबसूं थने राखे ।
गुलाव जामुन तो पीछे खावे, पेली थने चाखे जी ।।६।।
जद सूं ईंने पीवा लाग्या, शक्ति हो क्षीण ।
खुशहाली चाहो तो ईंने, विदा करो परवीण जी ।।७।।
पूज्य 'प्राज्ञ' गुरुराज हुकुम से 'वल्लभ' ने रच दीनो ।
जैसी देखी वैसी झट पट, कविता मे लिख दीनी जी ।।८।।

---

# मत भींत ढसाज्यो

( तर्ज - ख्याल की )

या भीत ढसे है, मरम्मत कर दीज्यो, प्यारे बन्धुओं ।
मत भीत ढसाज्यो ...... मरम्मत ...... ....।। टेर ।।

पूर्वजनों ने धर्म ध्यान की, ताजी भीत बणाई ।
आजकाल कुछ सोरो, लाग्यो द्यो सीमेंट लगाई जी ।।१।।

भीत ढ़सी तो महल ढ़से लो, जासी सब आनन्द ।
रक्षा को साधन नही रहमो, बढ़सी दुख और द्वन्द जी ।।२।।

बिना भीत के घर में जैसे घुसे चोर चहुं ओर ।
यों प्रमाद से सभी बुराई धमक मचावे शोर जी ।।३।।

आलस त्यागो जल्दी जागो, देखो दृष्टि पसार ।
आज निरोगी भीत ढ़स रही, कीज्यो सार सभार जी ।।४।।

सावण तो सूनो गयो स कोई आयां भादव भाई ।
लगन बिना नही काम चलेगो, सुण लीज्यो चित्त लाईजी ।।५।।

धर्म ध्यान के ये ही दिन है, फेर लौट नहीं आसी ।
जो रह जासी वो पिछतासी कांटो यम की फांसी जी ।।६।।

पूज्य 'प्राज्ञ' गुरुराज कृपा से, दीनी ढाल प्रकाशी ।
धर्म साधना करके 'वल्लभ' वन जाओ अविनाशी जी ।।७।।

# वर-विक्रय-सम्वाद

( तर्ज — ख्याल की )

सुधारक—इन कुल रत्नो को, अब मत वेचो जी बीच वजार मे ।। टेर ।।

समझदार थे कहलाओ और जन्म्या ऊची जात,
कौडी साटे रतन वेचणो आछी नही है वात ।
वेटी वेचण पाप वताता, पहले थे हो तातजी ।। इन० १ ।।

विक्रेता.—इन कुल रत्नो को, हम तो वेचेगे बीच वजार मे ।। टेर ।।

समझदार है इसीलिये तो पूरा किया हिसाव,
कितना दुख उठाया हमने यह भी सुनो जनाव ।
जन्म हुआ तव मा का खर्चा आया था वेताव जी ।। इन० २ ।।

और सुनियेगा —

लालन पालन और पढाई कितनी महगी भाई,
ड्रेसो की अदला वदली ने कीनी खूब तवाही ।
हजारो का खर्च उठा कर एम० ए० पास कराई जी ।। इन० ३ ।।

सुधारक—सोना और नोटो की वोल्यां आय लगावे लोग,
ऊँची बोली पर छूटे यह भले वडे घर रोग ।
धन का लोभी मात पिता नही देखे योगा योग जी ।। इन० ४ ।।

विक्रेता.—कल्प वृक्ष सम इसे वनाया फिर कहाँ धक्के खावें,
जितना इससे पाना चाहे उतना क्यो नही पावे ।
ऊंची वोली लगे तभी तो खर्चा सव भर पावे जी ।। इन० ५ ।।

सुधारक—कोई मागे सो सो तोला ऊपर साठ हजार,
ट्राजिस्टर कोई माग रहा तो कोई मागे कार ।
देना हो तो करो वात तुम नहीं तो अन्य तैयार जी ।। इन० ६ ।।

विक्रेता—क्यो नही मागे इससे ही तो, महल गगन को चूमे,
देश देश की खवरे सुन ले, वैठे कार मे घूमे ।
सेठ साहब कह इज्जत देवे, मुझ को भरी सभा मे जी ।। इन० ७ ।।

सुधारक—इससे कोई बना न धनपति, ना कोई आनन्द पावे,
भले आप कर लो मुंह मीठा, पर समाज पिस जावे।
लिया दिया बह जावे सारा, नित का क्लेश रहावे जी ।। इन० ८ ।।

और सुनियेगा

मुंह मांगा मिलना ही चाहिये, चाहे करे उधार,
दुख पावे या दबे कर्ज से, करते नही विचार।
एक एक तोले के खातिर, लड़ते बीच बजार जी ।। इन० ९ ।।

विक्रेता.-कैसा भी वह दु.ख उठावे, हमें चाहिये सोना,
पीला पीला मिले अगर तो, क्या अगले को रोना।
हम सुख पावे, मौज उड़ावे, होगा जो कुछ होना जी ।। इन० १० ।।

सुधारक—सोने को मत देखो भाई, देखो कन्या दान,
फूहड़ कन्या जो आई तो, घर भी नरक समान।
जीवन भर का दु.ख लगेगा, सुन लो देकर कान जी ।। इन० ११ ।।

विक्रेता:-बात मुझे यह कही आपने, सच्ची और हितकारी,
इसी प्रथा से आज दबी है, ऊंची जाति हमारी।
अब हम इसका त्याग करेंगे, अच्छी आंख उगाडी जी ।।
इन कुल रत्नो को, अब नही बेचेंगे बीच बजार मे ।। इन० १२ ।।

दोनों मिलकर बोलते है—

नही बेचेंगे, नही बेचेगे, नही बेचेगे पूत,
तभी हमारा सुधरेगा जी, सभी घरो का सूत।
मानव होकर नही बनेगे, कन्या के जमदूत जी ।। इन० १४ ।।

जागो जागो अब भी जागो, बीती बात विसारो,
नही तो आगे क्या होवेगा, लम्बी जरा विचारो।
'प्राज्ञ' कृपा से 'बल्लभ मुनि' कहे कुछ तो दिल में धारो जी ।। इन० १४ ।।

# :: ओसवाल चालीसा ::

(तर्ज- सीता माता की गोदी में हनुमतः)

सोचो ओसवाल भोपाल, हिया के माय ने रे ।
क्यूं थे मेटी धर्म की चाल, अकल विसराय ने रे ।।टेर।।

सुणज्यो पच चौधरी सारा, अब मै काम बताऊँ थाँरा ।
सोया अन्धकार के मांय, दियो बुझाय ने रे ।। १ ।।

वढ गया जात न्यात का खर्चा, चाले कम करणे की चर्चा ।
पिण थे गहरा हुगा अचेत, नीद के मांय ने रे ।। २ ।।

थाकी ऊची जात कहावे, अण्डा मांस छोकरा खावे ।
पी पी दारू रोल मचावे, गांव के मांय ने रे ।। ३ ।।

नाचे व्याव मायने लाल, वारो रुपिया करो कमाल ।
मानो अपनी शानो शोकत, बैण्ड बजाय ने रे ।। ४ ।।

बेटा बेचो बीच बजार, सोना चांदी और कलदार ।
स्कूटर टेलीविजन कार, रेडियो माय ने रे ।। ५ ।।

रहिया आडम्बर मे डूब, थोडो धान धगानो खूब ।
खरचो दाम हजारा, डेकोरेशन माय ने रे ।। ६ ।।

छोटी जान बनाकर एक, जावो करण सगाई नेक ।
पाछी देवो झटपट फेंक, वात वणाय ने रे ।। ७ ।।

गेर जात का लडका लारे, लड़की देखण कवर पधारे ।
पूछे ऊलफेल की वात, लाज विसराय ने रे ।। ८ ।।

खुल्ले मुख कन्या ने व्यावो, फोटू दोस्ता साथ खिचावो ।
मोटो वणवावो एलबम, हजारों मॉयने रे ।। ९ ।।

सामा और अपूठा लावो, गोदी कवराँ की भरवावो ।
पैसा खातिर थे ओढावो, साडी जाय ने रे ।।१०।।

देवो परण लुगाई छोड, लेवो दूजो नातो जोड़ ।
कैसी बढ़ी अणूती खोड़, जात के मांय ने रे ।।११।।

घर में ज्यूं ही बहूजी आवे, त्यूं ही ताना गरम सुणावे ।
फिर वा तेल छिडक मर जावे फासी खाय ने रे ।।१२।।

रात्रि भोजन मोटो पाप, जिणने आप करो हो धाप ।
खावो आधी रातां बाद, ब्याव मे जाय ने रे ।।१३।।

आवे भाणा में मिष्ठान, फिर भी रहें सलाद में ध्यान ।
कांदा कारण करो लडाई, बाँह चढ़ाय ने रे ।।१४।।

लेवो अणछाण्यो जल काम, खावो जमीकन्द तमाम ।
चाले हरी सब्जियां आठम चवदस माय ने रे ।।१५।।

पीवो बीडी और सिगरेट, खावो तम्बाखू भर पेट ।
बीसो रुपियां थूको पान पीक के माय ने रे ।।१६।।

नुगता बन्द करे सरकार, थे फिर थाली रह्या निकाल ।
होवे डबल पूरती वाकी 'सोबा' मांय ने रे ।।१७।।

केई खोटी रीता मांहो, पइस्या खूब उडावो भाई ।
ओ काँई कीडो लाग्यो थांकी बुद्धि माय ने रे ।।१८।।

गेणा फेर फिरो मत वेणां, पड़ जासी लेणां का देणा ।
दागो दागीना ने दूर, धूर के माय ने रे ।।१९।।

अपणा भवन खूब चमकावो, फूल बगीचा भी लगवावो ।
पिण ये कुम्हलावे है फूल, जात के माय ने रे ।।२०।।

मेहनत कर थे धन कमावो, क्यूं नी उण सूं लाभ उठावो ।
सेवा शिक्षा और चिकित्सा में दिलवाय ने रे ।।२१।।

यूं तो जीमावो पकवान, नही है दीन दुख्या रो ध्यान।
दो अब साधर्मी ने साज, समाज बणाय ने रे ।।२२।।

नही है धर्म स्थान रो मान, जिणरो थोड़ो करू बयान।
बण रह्या पाप स्थान वे आज, स्वार्थ के मांय ने रे ।।२३।।

होवे धर्म स्थान मे ब्याव, डाले वरमाला धर चाव।
कर रया सन्त सती के साथ घोर अन्याय ने रे ।।२४।।

जीमण जीमो स्थानक मांही, कीड्यां मरे पगा मे आई।
थूंको भीत्या ऊपर पीक, पान चवाय ने रे ।।२५।।

धर्म स्थान मे फ्लश बणवावो, मूत्रालय भी खडा करावो।
लागे सम्मूर्च्छिम को पाप, परठवा माय ने रे ।।२६।।

खुल्ले मुख सन्ता सू बोलो, जूता चप्पल पास मे खोलो।
वाका सम्मुख काचो पाणी, पीवो लाय ने रे ।।२७।।

गुरू की करो स्वार्थ सूं सेवा, वाने ले जा दिखावो टेवा।
मागो जन्तर मन्तर मेवा, - माल खिलाय ने रे ।।२८।।

तपस्या हो गई करणी महगी, बाजा साथ मायरो जगी।
लारे करो बिखेरो फेर, माल उडाय ने रे ।।२९।।

नामी श्रावक हरसी हरसी, कर रया सन्त सत्यारी बरसी।
कीर्तिस्तम्भ मूरती अस्थी - कलश रखाय ने रे ।।३०।।

नही है छ काया रो ध्यान, वांरो खूब करो घमसान।
बेठो और सुणो व्याख्यान, हरी कटवाय ने रे ।।३१।।

लेवो मुनि दर्शन को नाम, नही है सामायिक रो काम।
पूरो सुणो नही व्याख्यान, प्रार्थना जाय ने रे ।।३२।।

कोई साधु नाम धराय, घूमे बैठ कार के माय।
वा ने पूजो थे हरनाय, शीश झुकाय ने रे ।।३३।।

दीक्षा जुलुस रात में भारी, गांव गांव बिन्दोली न्यारी।
डालो सचित फूल की माल, गले के मांय ने रे ।।३४।।

मुंहपति, ओघा, पातर झोली, यांरी दीक्षा में हुवे बोली।
बैठे गज हौदे भी सेठ, रकम बरसाय ने रे ।।३५।।

जो कोई सन्त काल कर जावे, पइस्या वालो आगे आवे।
वो ही तन के आग लगावे, चिता के मांय ने रे ।।३६।।

नेता राजनीति का आवे, आदर अधिक सन्त सूं पावे।
वाने बैठावो थे ऊंची स्टेज बणाय ने रे ।।३७।।

म्हाका अम्मापिया कहावो, पिण थे कितरो ध्यान दिरावो।
धक्को देय रया क्यूं म्हाने, गिरबा मांय ने रे ।।३८।।

अब तो हिये विवेक सम्भारो, अपणो ऊचो विरद विचारो।
राखो असोवश की शान, टेक निभाय ने रे ।।३९।।

जो कुछ लागे करड़ो काठो, तो मत कीज्यो दिल ने माठो।
में तो माफी मागूं साच हाल दरसाय ने रे ।।४०।।

मधुर प्रवक्ता मधुर स्वभावी, सद्गुरु सोहन महा प्रभावी।
पाले ज्ञान, दरस, चारित्र, दोष हटाय ने रे ।। १ ।।

श्री स्वाध्याय शिरोमणि सोहे, आशुकवि मरुधर छवि मोहे।
ये हैं नानक गच्छ प्रवर्तक पदवी पाय ने रे ।। २ ।।

गुरु कृपा मुनि 'वल्लभ' बोले, अब तो संभलो भाई भोले।
है यह ओसवाल चालीसा, हाथा मांय ने रे ।। ३ ।।



कथानक १

# क्रोध पर

( तर्ज - लावणी छोटी )

तुम तजो क्रोध का जहर, कहूं कर जोडी ।
हो तप जप सयम नाश, पूरब कृत क्रोडी ।। टेर ।।

इक नगरी कुणाला, बाहर दोय ऋषि जी,
कुरड और महा कुरड तपे तप रीजी ।
नही होवे इनको कष्ट सोच यो पानी,
बरसावे नाही मेघ देव दिल जानी ।
तब कुपित हो गये मिथ्या दृष्टि मरोड़ी ।। हो १ ।।

आ मुनि पास मे बोले, बिना विचारी,
अरे रे ढु ढिया ! तूने बरसा निवारी ।
यो कह दीना उपसर्ग, बडे दुखदायी,
तब ध्यान मुक्त हो कोपे दोउ मुनिरायी ।
फिर बोले दोनो बोल धर्म को छोडी ।। हो. २ ।।

—: श्लोक :—

वर्ष ! मेघ ! कुणालाया, दिनानि दश पच च ।
मूसल–प्रमाण–धाराभि यथा रात्रौ तथा दिवा ।। १ ।।

मुनि आज्ञा से तब मेघ, मूसलाधारी,
अहो रात्रि पन्द्रह तक बरसा भारी ।
जल थल हो गये एक, डूब गई नगरी,
पानी प्रवाह मे पहुची समुद्र मे सगरी ।
मुनि भीज गये और व्रत सब दीना तोडी ।। हो. ३ ।।

मर कर दोनो मुनि, नरक मे पहुचे,
इस क्रोध सामने जप तप नव हो छोजे ।
अतएव क्रोध को, त्यागो रे, भवि प्राणी
यो पूज्य 'प्राज्ञ' गुरु देवे शिक्षा शानी ।
यह भाण नगर मे 'बल्लभ' मुनि ने जोडी ।।हो.४।।

कथानक २

# व्रत आराधना पर

( तर्ज - लावणी छोटी )

जो पौषध व्रत को, शुद्ध भाव से करते ।
वे अत समय में स्वर्ग मोक्ष सुख बरते ।। टेर ।।

इक नगरी विशाला राज्य तिहाँ सुखकारी,
करे चन्द्रावतंसक भूप श्राद्ध व्रत धारी ।
जिन आज्ञा के अनुरूप धर्म अनुसरते ।। वे १ ।।

पाक्षिक पौषध में प्रतिक्रमण कर लीना,
फिर शुद्ध भाव से एक अभिग्रह कीना ।
मैं खड़ा रहूंगा जब तक दीपक जलते ।। वे २ ।।

एक स्वामी भक्त दासी ने सोचा मन में,
मेरे नाथ आज सलग्न है आराधन में ।
तो नही होवे अंधियार, उजाला सरते ।। वे ३ ।।

दीना दीपक मे तेल, न बुझने पाया,
राजा भी दिल मे रोष न कुछ भी लाया ।
करते रहे स्वाध्याय रैन भर चित्त ते ।। वे ४ ।।

प्रात. काल जब हुआ, काउसग्ग पाला,
वह अकड़ गया था देह न फिर संभाला ।
गिर गये तभी, जिम गिरे उपल पर्वत ते ।। वे ५ ।।

फिर भी रख शुद्ध भाव सथारा कीना,
पडित मृत्यु को पाय स्वर्ग पद लीना ।
यो तारी आतमा शुद्ध भाव रख भव ते ।।वे ६।।

हम पौषध व्रत में शुद्ध भाव यों राखे,
तो निश्चय मुक्ति सुख का आनन्द चाखे ।
श्री 'प्राज्ञ' गुरू की कृपा, शिष्य उच्चरते ।। वे ७ ।।

कथानक ३

# यह सच्चा या वह सच्चा

( तर्ज — राधेश्याम रामायण )

—दोहा—

श्रीमन्नानक स्वामी का, सुमिरन कर सन्नाम ।
पूज्यवर्य गुरु 'प्राज्ञ' को, करत हूं सविधि प्रणाम ।।१।।

दृश्यमान यह विश्व है, कैसा ? कहू विस्तार ।
श्रवण किया जैसा उसे, रचहुं लोक हितकार ।।२।।

ससार स्वप्न सा मिथ्या है, यो ज्ञानी जन फरमाते है ।
नही सत्य है कुछ भी इसमें, सब मिथ्या दरसाते है ।।१।।

निद्रा का स्वप्न तो नेत्रों के, खुलते ही नष्ट ही जाता है ।
संसार स्वप्न तो नेत्रों के, मिलते ही नष्ट हो जाता है ।।२।।

नही कोई भी अपना है, जो जीवन का उद्धार करे ।
पर प्राणी इसमे मोह युक्त हो, अहोनिशि यो ही मार मरे ।।३।।

इक राजा था जिसके नही, भौतिक सुख की कमिया थी ।
आनन्द पूर्ण मे भव्य हर्म्य, और नव्य नव्य रग रलियां थी ।।४।।

सुमन समान मृदु शैय्या पर, सोते एक स्वप्ना पाया है ।
वह स्वय दीन बन गया और, भिक्षा के हित भटकाया है ।।५।।

दातार खीचड़ी देता है, पर भिक्षा को लेऊ किसमे ।
यो सोच पास मे जाकर के, ठीकरी ला लेऊं उसमे ।।६।।

ले भिक्षा ठीकरी मे भिक्षुक, अब वहा से आगे बढता है ।
कर रहा पार सकड़ी गलियो को, तब वहा पे क्या होता है ।।७।।

—दोहा—

आए दोनो ओर से, लड़ते भैंसे दोय ।
दृश्य देख भयभीत हो, सोचे अब क्या होय ।।१।।

छूट गया डर के मारे, तब कर से ठीकरा फूट गया ।
इतने मे निद्रा नृपति की, खुलते ही स्वप्ना टूट गया ।।८।।

इत उत को देखा दृष्टि से, पर कुछ नही दृश्य दिखाया है ।
तब राजा के मुख से सहसा, कुछ शब्द वाहिर निकलाया है ।।९।।

खीचडी खीचड़ी खीचडी खीचड़ी, यह सच्चा या वह सच्चा ।
जो भी पास मे आता कहता, यह सच्चा या वह सच्चा ।।१०।।

सुन सुन कर आगन्तुक जन भी, कुछ क्षण को विस्मय पाते है ।
पागल हो गये राजाजी, यों पकड़ वैद्य को लाते है ।।११।।

पर उनके सन्मुख राजाजी, पहले की वात सुनाते हैं ।
वे भी औषधि कर कर वापिस, निज निज घर को जाते हैं ।।१२।।

जनता सारी दौड दौड कई, वैद्य पकड़ कर लाती है ।
ऐसे करते एक युवक को, जनता लेकर आती है ।।१३।।

वह युवक था साधक पूरा, रहे 'साधना मे लवलीन ।
जो कुछ कहता सच्ची कहता, रखता सग दिल का दुरबीन ।।१४।।

—दोहा—

नृप युवक के सामने, कहे पूर्व की वात ।
सुनकर साधक एकदम, समझ गया हालात ।।१।।

समझ सोच सम्वन्ध सभी, कुछ क्षण को मौनी रहता है ।
कर इष्ट प्रभु का ध्यान हृदय मे, फिर मुख से यो कहता है ।।१५।।

खीचडी खीचड़ी खीचडी खीचडी, यह सच्चा नही वह सच्चा ।
दृश्यमान जग का सुख सव, क्षणभगुर और है कच्चा ।।१६।।

केवल सच्चा प्रभु नाम है, जिसको तू नृप भूल गया ।
मोह मुग्ध हो क्षणिक राज्य के, सुख साधन में झूल गया ।।१७

इतना सा सुनते ही नृप की, आत्मा मे तेज एक आया है ।
रे मन ! मिथ्या विश्व सकल फिर क्यों इसमे उलझाया है ।।१८।।

वैराग्य रंग मे रजित हो, तब राज्य पाट को छोड़ दिया।
हो युवक संग में जीवन का, सारा ही रास्ता मोड़ लिया ॥१६॥

स्वप्न तुल्य ही समझ विश्व को, मत फंसिये इसमें दिन रात।
प्रभु स्मरण कर जीवन का, उद्धार करो मानो यह बात ॥२०॥

पूज्यवर्य गुरुदेव हमारे, पन्नालालजी हैं स्वामी।
श्रमण सघ के उज्ज्वल तारे, प्यारे हैं अन्तर्यामी ॥२१॥

—दोहा—

तास शिष्य व्याख्यानि वर, सोहन सद्गुरु सग।
आए 'वाल वल्लभ' मुनि, धरकर हृदय उमंग ॥१॥

दोय सहस्र उन्नीस का, ज्येष्ठ मास वुद पक्ष।
द्वादशी दोपहर मे, नूतनपुर प्रत्यक्ष ॥ २ ॥

रचना की सानन्द से, वरते परमानन्द।
त्रिशला नन्दन जाप से, मिटे कर्म का फन्द ॥ ३ ॥

-❖—❖-

## कथानक ४

( तर्ज — एवन्ता मुनिवर० )

सद्धर्म प्रभावे आनन्द वरतावे, जय जयकार हो ॥ टेर ॥

आया तग गरीवी से तव, शान्तिलाल तज ग्राम।
वोम्वे मे जा करी नोकरी, जिये इकट्ठे दाम जी ॥ १ ॥

उसी शहर मे अमृत भाई, वसे सेठ धनवन्त।
लगा २ कर दोड़ सदा, धन जोड़ रहा धर खन्तजी ॥२॥

शान्तिलाल की उसी सेठ से, हुई मित्रता भारी।
आपस मे मिल करे वारता, प्रतिदिन दोनो सारी जी ॥३॥

शान्ति कहे हे अमृत भाई ? क्यों माया में उलझा ।
स्थानक में चलर सामायिक नित, किया करो मनसुलझा जी ।।४।।

अमृत कहता प्रभु स्मरण से, कुछ भी लाभ न होता ।
व्यर्थ बात में बहक २ नर, अमूल्य समय को खोताजी ।।५।।

शान्ति मित्र को नित समझाता, किन्तु जंची नही एक ।
धन के ही आगे अमृत ने, दीने घुटने टेक जी ।। ६ ।।

कोटि ध्वज बनने की उसको, धुन लागी दिन रात ।
अत: जोड़ कीनी सम्पति की,हर्षित होय प्रभात जी ।।७।।

लाख निन्याणू की सम्पति तो, जुड़ी हुई मुझ पास ।
एक लाख भी जोडूं जल्दी, लगी हृदय में आस जी ।।८।।

सभी मुनीमों को दी आज्ञा, करो खूब व्यापार ।
जैसे भी हो एक लाख की, पूंजी बढ़े अबार जी ।। ९ ।।

किया खूब व्यापार और फिर कीना शेठ हिसाब ।
लाख निन्याणू ही आये है, घटे हाल भी लाख जी ।।१०।।

अब तो स्वयं सेठ भी दौडे, छोड़ा खान रू पान ।
खूब करे व्यापार रात दिन, लगा एक ही ध्यान जी ।।११।।

सेठाणी कहे पति देव ! तुम क्यों इतने हैरान ।
खान पान का ध्यान नही है, किधर जमाया ध्यान जी ।।१२।।

अमृत बोला एक लगी धुन, कोटि ध्वज कहलाऊँ ।
एक लाख की सिर्फ कमी है,उसे शीघ्र भर पाऊं जी ।।१३।।

इस धुन को दो छोड़ नाथ तुम, क्या है कमी हमारे ।
कितना वैभव भरा पडा है,फिर रहे दुख के मारे जी ।१४।।

कुछ तो प्रभु का नाम चितारो, धारो दिल सन्तोष ।
संत सती के दर्शन करके, दो आत्मा को पोष जी ।।१५।।

जरा ठहर जा कुछ मत बोले, कोटिध्वज बन जाऊँ ।
और तुझे भी कोटि ध्वज की सेठाणी बनवाऊ जी ।।१६।।

सेठाणी जी कह कर तुझको, देगे सब सम्मान ।
सत सती भी बड़े प्रेम से, बोलेंगे दे मान जी ।।१७।।

दौड लगा जब जोड लगाई, फिर भी कम है लाख ।
परेशान हैरान हो गया, खान पान भी खाख जी । १८।।

उदासीन बन बैठा आकर, जब अपनी दूकान ।
इतने मे ज्योतिषी आ गया, सेठ करे आह्वान जी ।।१९।।

जन्म पत्रिका रखी सामने, पूछा मुझे बताओ ।
कोटि ध्वज मैं कब होऊँगा, सही सही दरसाओ जी ।।२०।।

कृपया आप विराजो यहां पर, सुन लो मम अरदास ।
क्या ग्रह गोचर चल रहे मेरे, कदा फलेगी आस जी ।।२१।।

जन्म पत्रिका देख ज्योतिषी, बोला यो धर प्यार ।
कोटि ध्वज हो जाओगे, पर है घटना दुखकार जी ।।२२।।

दिवस सातवे घात आपकी, बिजली से है साफ ।
क्रोडों का धन पडा रहेगा, चले जाओगे आप जी ।।२३।।

चाहे जहां छिपो तुम जाकर, नही टलेगी घात ।
प्रभु भजन से रक्षा होगी, सो बातो की बात जी ।।२४।।

अगर बचे तो कोटि ध्वज भी बन सकते हो सेठ ।
सावधान हो भजो प्रभु को, रखो धर्म की पेठ जी ।।२५।।

मृत्यु नाम सुन अमृत शाह की, थर थर धूजी छाती ।
कौन सम्भालेगा यह धन्धा, यम की आखे राती जी ।।२६।।

कोटि ध्वज की आशा पर तो हुआ तुमारापात ।
खानपान सब छूट गये है, चिन्तित है दिन रात जी ।।२७।।

शहर गली में बात फैल गई, बिजली की है घात ।
अमृत शाह से मिलने को तब लोग अनेको आत जी । २८॥

बिजली से सुन घात आप की, लगा हृदय आघात ।
किन्तु इसे ना टाल सके हम, चिन्ता तजिये भ्रात जी ॥२६॥

यों करते दिन पांच बीत गये, छट्ठे दिन की बात ।
शान्तिलाल मिलने को आया, सुन विद्युत की घातजी ॥

अमृत शाह लख शान्ति भ्रात को, करता अश्रू पात ।
क्यों रोते हो, क्यों घबराते, क्यों इतने अकुलात जी ॥३१॥

सेठ कहे अब मौत आगयी, बचा न कोई पावे ।
इस धन का, परिवार पुत्र का, पत्नी का क्या थावे जी ॥३२॥

शातिलाल कहे जो जन्मा है, निश्चित उसकी मौत ।
फिर मृत्यु से क्यों डरते हो, चेतन अक्षय ज्योतजी ॥३३॥

यह संसार मुसाफिर खाना, चलना निश्चय जानो ।
जो बनता है वही बिगड़ता, पुद्गल को पहिचानो जी ॥३४॥

इस जग में अपना नहीं कोई, व्यर्थ बढाता मोह ।
मोह ममता में फंसकर चेतन, पड़े नरक की खोह जी ॥३५॥

अतः छोड दो रोना धोना, होगा जो है होना ।
प्रभुस्मरण कर श्रद्धा पूर्वक, व्यर्थ समय मत खोना जी ॥३६॥

लो मै भी हूं तेरे संग में, नहीं छोड़ कर जाऊँ ।
सामायिक सवर मे रम कर, तुझको वीर बनाऊँ जी ॥३७॥

दिवस सातवे सभी पडौसी, तज गये निज आगार ।
अमृत के घर विद्युत पड़सी, मर जायें विन मार जी ॥३८॥

सेठाणी भी ले बच्चों को, आई सेठ के पास ।
नाथ ! आपकी सेवा करती, पर चिंता है खासजी ॥ ३६

मै जो रहूं, रहेंगे बच्चे, तो हो इनकी घात ।
अपने घर की बुझे ज्योतियाँ, तम छाये साक्षात जी ॥४०॥

अतः इन्हे पीहर ले जाऊं, बच जायेगी ज्योती ।
बाद आपके मर जाने पर, ये ही होगे मोती जी ॥ ४१ ॥

सेठाणी भी छोड़ चली है, देखो जग का प्यार ।
जिनके पीछे दुःख उठाया, सभी गये इसवार जी ॥ ४२ ॥

दिवस सातवे रहा न उसके, पास कोई भी साथी ।
मित्र शाति ही रहा पास मे, रखी धर्म की थाती जी ॥४३ ॥

कहे शाति हे मित्र ! जरा भी, मन मे नहीं घबराये ।
चलो शान्ति के साथ धर्म का, अनुपम अलख जगाये जी ॥४४॥

दोनों ने आ बैठ भवन मे, सथारा कर लीना ।
जीवे तो आगार, नही तो, मोह सभी तज दीना जी ॥४५॥

शान्ति शान्ति के साथ धर्म की, चर्चा उसे सुनाता ।
चार शरण को धार हृदय मे, अमृत शाह हरसाता जी ॥४६॥

अविचल होकर शान्त चित्त से, अर्हं ध्यान लगावे ।
धन परिवार पुत्र परिजन की, चिता नहीं सतावे जी ॥४७॥

अर्ध रात्रि मे छाये बादल, गर्जन करे अपार
उसी समय में कड़की बिजली, पड़ी भवन पर धार जी ॥४८॥

भवन टूट कर गिरा धरा पे, मलवे का हो ढेर ।
किन्तु दोनों मित्र भजन मे, मस्त बने है शेर जी ॥४९॥

धर्म प्रभावे बच गये दोनों पट्टी भीत सहारे
होश नही है फिर भी मुख से, महामन्त्र उच्चारे जी ॥५०॥

प्रातः मलवे को ढोने हित, आये मिल नर नार ।
सहसा चौंक गये हैं सारे, सुनी जाप नवकार जी ॥५१॥

सावधानी से दोनों को तब, लीना बाहर निकार ।
रक्षक धर्म बना है सबका, हो गई जय जयकार जी ।।५२।।

शीत पवन से प्रबुद्ध होकर, पाल लिया संथारा ।
मित्र ! आपने जीवन दीना, अमृत ने उच्चारा जी ।।५३।।

नारी भी सुन दौड़ी आई, खूब दिखावे प्रीती ।
मैने प्रभु से करी मनौती, नाथ ! बचे इस रीती जी ।।५४।।

महल पधारो, हर्ष बधारो, अर्ज करूं कर जोड़ ।
दवा आरोगो, आनन्द भोगो, हे मेरे शिर मोड़ जी ।।५५।।

आप बिना है सभी अलूना, महल मसान समान ।
हे प्राणेश्वर! जीवन धन! तुम, दीजे जीवन दान जी ।।५६।।

अमृत बोला सभी स्वार्थ का, जग झूठा जंजाल ।
कोई न मेरा, मैं न किसी का, परख लिया इस बार जी ।।५७।।

उठो मित्र ! अब चलो धर्म की, शरण ग्रहण कर लेंगे ।
सभी स्वार्थ का रिश्ता नाता, तजकर संयम लेंगे जी ।।५८।।

सभी सम्बन्धी कहे सेठ से, यह क्या करते काम ।
हम सेवक सेवा में हाजिर, आप हमारे स्वाम जी ।।५९।।

सभी स्वार्थ से आते जाते हैं झूठी जग माया ।
कोटि ध्वज बनने के चक्र में, मैं गहरा उलझाया जी ।।६०।।

सुनो मित्र अब देर न करिये, चलिए सद्गुरु पास ।
धर्म ध्यान में चित्त रमा कर, पाये ज्ञान प्रकाश जी ।।६१।।

छोड़ सभी जंजाल मित्र संग, संयम को स्वीकार ।
शुद्ध भाव से पालन करके, किया आतम उद्धार जी ।।६२।।

पूज्य ज्योतिषाचार्य प्रवर्तक, आगम-ज्ञानी सन्त ।
श्री श्री कुन्दन गुरुवर सोहे, नानक गच्छ महन्तजी ।।६३।।

बिजयनगर का कर चौमासा, शिखराणी सुख पाया ।
'दर्शन' को दीक्षा देकर के,मोक्ष मार्ग बतलाया जी ।।६४।।

ब्यावर मसूदा बिजयनगर हो विचरे ग्रामो ग्राम ।
धर्म ध्यान की अलख जगाकर,कीना परहित काम जी ।।६५।।

विक्रम सवत् दो हजार के ऊपर तेतीस साल ।
पाच ठाणो से भाणनगर मे, वरते मगल माल जी ।।६६।।

धर्म ध्यान से किया यहां पर, होली चातुर्मास ।
"वल्लभ मुनि" ने तभी सुनाया,रचकर के यह रास जी ।।६७।।

*——*

# निज पाणी ने संभारो

( तर्ज : मत खोवे म्हारा परण्या जीरो )

मत खोवे म्हारा भाईडा पाणी, पाणी सूं कीमत थांणी रे ।। टेर ।।

पाणी बिना तो खेतो सूखे, करसा रा हिवडा दूखे रे ।। १ ।।
पाणी बिना तो मोती कोरो, केवल है कंकर गोरो रे ।। २ ।।
भूखा नर ने भोजन चावे, पाणी विन क्यॉन बणावे रे ।। ३ ।।
बादल तो घणा गहराया, विन पाणी थोथा कहाया रे ।। ४ ।।
पाणी सू है महिमा थारी, पाणी ने रखो हरवारो रे ।। ५ ।।
माया ऊपर मत तू ताणे, विन पाणी ओछा जाणे रे ।। ६ ।।
पाणी ने जो भी नर खोवे, वो अन्त समय मे रोवे रे ।। ७ ।।
रावण और दुर्योधन कसा, विन पाणी उड़ गया हसा रे ।। ८ ।।
थे निज पाणी ने संभारो, गुरूवर की शिक्षा धारो रे ।। ९ ।।
यो पन्ना गुरू को चेलो, 'वल्लुड़ो' देवे हेलो रे ।। १० ।।

—✥—

# ई मनसा ने मोड़ो

( तर्ज : बाजरा री पाणत॰ )

आयु ने हाथां सूं खोयो, अब क्यूं रोवे ।
"क" भाई पाछे सूं पिछताया, बोलो कांई तो होवे ।। टेर ।।

माल तो अमोल थांरो, लाभ उठाले ।
"क" भाई सुगन्धी ईत्तर ने क्यूं कीच में डाले ।। १ ।।

तेल है उजालो करले, अंधारो भगा ।
"क" भाई विरथा ईंने ढोल ने तू आग ना लगा ।। २ ।।

आस्रवां ने टाल के तू सजम ले अपना ।
"क" भाई सारा ही झमेला है ये नीन्द का सपना ।। ३ ।।

'ज्ञान' की जगा ले ज्योति 'दर्शन' ने बढ़ा ।
"क" भाई 'चारित्तर' सूं आतमा ने ऊंची थू चढा ।। ४ ।।

जागो जागो अब भी जागो टेम है थोड़ो ।
"क" भाई "वल्लू" रो है केवणो ई मनसा ने मोड़ो ।। ५ ।।



# रत्नत्रयी के गीत

## रचनाकर्त्री

साध्वी रत्नत्रयी :—

श्री ज्ञानलता जैन "प्राज्ञ चन्दना"
'सिद्धान्त रत्नाकर' एम. ए. (संस्कृत)

श्री दर्शनलता जैन "प्राज्ञ नन्दना"
'सिद्धान्त रत्नाकर' एम. ए. (संस्कृत)

श्री चारित्रलता जैन "प्राज्ञ वन्दना"
'सिद्धान्त शास्त्री' एम. ए. (सस्कृत)

खण्ड ७

* साध्वी रत्नत्रयी : एक परिचय
* चौवीसी स्तवन
* विहरमान स्तुति
* गुरू-गुण-गरिमा
* चातुर्मास स्वागत
* पर्युषण-क्षमापना
* युवकों से
* पुण्यवानी बढा
* श्री सोहन गुरू चालीसा

# साध्वी रत्नत्रयी : एक परिचय

जैन शासन में रत्नत्रयी का बहुत महत्त्व है । सम्यग्ज्ञान, दर्शन व चारित्र को रत्नत्रयी कहते हैं और यही रत्नत्रयी मोक्ष का मार्ग कहलाता है ।

"सम्यग्ज्ञान, दर्शन, चारित्राणि मोक्षमार्गः"

गुरू कृपा से इसी मोक्ष-मार्ग पर तीन साध्वियां दृढ़ता के साथ अपने कदम वढ़ा रही हैं, जिन्हें 'साध्वी रत्नत्रयी' के नाम से पुकारते है ।
क्रमशः उनके नाम हैं:—

**१. साध्वी ज्ञानलता जैन "प्राज्ञचन्दना"**
सिद्धान्त रत्नाकर, एम. ए. (सस्कृत)

**२. साध्वी दर्शनलता जैन "प्राज्ञनन्दना"**
सिद्धान्त रत्नाकर, एम. ए. (संस्कृत)

**३. साध्वी चारित्रलता जैन "प्राज्ञवन्दना"**
सिद्धान्त शास्त्री, एम. ए. (सस्कृत)

जिनका सक्षिप्त परिचय कुछ पक्तियो में नीचे दिया जा रहा है :—

तीनों साध्वियां सहोदर भगिनिया है तथा वाल ब्रह्मचारिणियां है ।

पिता : श्री दुलीचन्दजी वाफना

माता : श्रीमती प्रेमलता वाई जी

जन्म स्थान : शिखराणी (विजयनगर)

जन्म : १–वि स. २०१४ भादवा सुद १३
२–वि. स. २०१६ मृगसर सुद १
३–वि. सं. २०२० श्रावण वुद ८

दीक्षा : १–वि. सं. २०३० आसोज सुद ३ ब्यावर में

२–वि. सं. २०३३ मृगसर सुद ५ शिखराणी में

३–वि. सं. २०३८ बैशा सुद ६ शिखराणी में

गुरू : स्वाध्याय शिरोमणि प्रवर्तक पूज्य गुरूदेव
**श्री सोहनलाल जी म० सा०**

अध्ययन : धार्मिक परीक्षा बोर्ड बीकानेर की रत्नाकर व शास्त्री की परीक्षा सर्वश्रेष्ठ अंकों में उत्तीर्ण।

व्यावहारिक परीक्षा में राजस्थान विश्व विद्यालय,जयपुर से एम. ए. (संस्कृत) श्रेष्ठ अंकों में उत्तीर्ण।

विशेष योग्यता : गुरू कृपा से बी. ए. संस्कृत में सर्वाधिक अंक प्राप्त करने से साध्वी दर्शनलता जैन को राज. वि. वि. से स्वर्ण पदक प्राप्त हुआ।

रचना : आपकी प्रथम मुक्तक काव्य रचना "बोध-सम्बोध" के नाम से ३ वर्ष पूर्व प्रकाशित हो चुकी है।



# चौवीसी स्तवन-१

( तर्ज.-कुछ न बनाया-३-जी )

नित गुण गाओ, नित गुण गाओ, नित गुण गाओ जी ।
चौवीसी जिनराज प्रभु के, नित गुण गाओ जी ।। टेर ।।

ऋषभ, अजित, सभव, अभिनन्दन, सुमति, पदम, सुपास ।
चन्दा प्रभुजी, सुविधि जिनेश्वर, शीतल और श्रेयाँस ।।
जगत् पूज्य श्री वासुपूज्य के नित गुण गाओ जी ।। चौ० १ ।।

विमल, अनन्त, श्री धर्म जिनेश्वर, शान्ति, कुन्थु, अरना ।
मल्ली, मुनि सुव्रत, नमी, नेमी, जिनवर पारसना ।
वर्द्धमान महावीर प्रभु के, नित गुण गाओ जी ।। चौ० २ ।।

पूज्य प्रवर्तक कुन्दन गुरू जी, पाँचों ठाणा साथ ।
आये विचरते गुरूणी सा० भी, नौ ठाणो के साथ ।।
दो हजार पैंतीस पोष सुदी सातम ध्याओ जी ।। चौ० ३ ।।

गुरू आज्ञा से महा सती श्री विदामजी महार ।
चार ठाणों से बाघसुरी में, रहे पढ़ने के कार ।।
कहे "ज्ञान-दर्शन" यों सबसे नित गुण गाओ जी ।। चौ० ४ ।।



# चौवीसी स्तवन-२

( तर्ज : म्हाने जयपुरिया रो० )

सुणज्यो चौवीसी जिनराज, म्हारा दिल री वातां आज ।
म्हारी जीवन की नैया ने पार लगाओ म्हारा जिनवर जी,
चरणों में बलिहारी ।। टेर ।।

ऋषभ, अजित, महान, संभव, अभिनन्दन जान ।
सुमति, पद्म सूं गहरो आनन्द, पायो हो म्हारा जिनवर जी ।। चरणों. १ ।।

सुपारस ने चन्दा ध्याऊँ, सुविधि, शीतल ने मनाऊँ।
श्रेयाँस, वासुपूज्य का गुण, गाऊँ हो म्हारा जिनवर जी ॥ चरणों. २

विमल, अनन्त महान, धर्म, शान्ति गुणवान ।
कुन्थु, अरह जी नयन सितारा हो म्हारा जिनवर जी ॥ चरणों. ३

मल्ली, मुनि सुव्रत नाथ, नमी, नेमी, पारसनाथ ।
महावीर मुक्ति रो मार्ग बताया हो म्हारा जिनवर जो ··· ···॥ चरणों. ४

दो हजार तेतीस साल, आया बिजयनगर में चाल ।
गुरू सेवा में चोमासो कीनो हो म्हारा जिनवर जी ·······॥ चरणों. ५ ।

तुम बिन पायी दुःख अनन्त, नही है जन्म मरण रो अन्त ।
अब तो 'ज्ञानलता' ने भवसागर से, तारो म्हारा जिनवरजो····॥ चरणों ६ ।



## चौवीसी स्तवन-३

( तर्ज : आने वाले कल की० )

ध्यावो सब मिल चौवीसी भगवान को,
भाव सहित वन्दन भी करलो, तीर्थंकर भगवान को ॥ टेर ॥

ऋषभ, अजित, सभव, अभिनन्दन वन्दन है भय भंजन को।
सुमति पद्म, सुपारस, चन्दा, तोड़ दिये भव बन्धन को ॥
सुविधि, शीतल, श्रेयांस जिनेश्वर, वासुपूज्य गुणवान को ॥ १ ॥

विमल, अनन्त चतुष्टय धारो, धर्म, शान्ति विख्यात है ।
कुन्थु, अर, मल्ली, मुनि सुव्रत, शान्त दान्त उदात्त है ॥
नमी, नेम जिन, पारस, प्यारे, गायें श्री वर्धमान को ॥ २ ॥

आओ, गाओ, चौविस जिनवर, तारण तिरण तिरायेंगे ।
गुरु-कृपा से मोक्ष मार्ग पर, निशदिन बढ़ते जायेंगे ॥
रत्नत्रयी' को धार हृदय में, पायें क्षायिक ज्ञान को ॥ ३ ॥

# चौवीसी स्तवन-४

( तर्ज : बार बार मैं....... )

बार बार मैं कहूं गुरू सा०, चून्दड़ दो रगवाय ।
कहूं जिस ढग से दीज्यो आप छपाय ।। टेर ।।

पहले पल्ले ऋषभ, अजित संभव, अभिनन्दन स्वामी हो ।
सुमति, पदम, सुपारस अन्तर्यामी हो ।
चन्दा प्रभु है निर्मल चन्दा, ज्योति जगी सवाय ।। कहू. १ ।।

दूजे पल्ले सुविधि, शीतल, श्रेयाँस, वासुपूज्य नामी हो ।
विमल, अनन्त, धर्म, मुगती के गामी हो ।
शान्तिनाथ है साताकारी, देते सौख्य सवाय ।। कहूं २ ।।

तीजे पल्ले कुन्थु, अर, मल्ली, मुनि सुव्रत स्वामी हो ।
नमी, नेम, पारस, भव पारगामी हो ।
चौविसमें श्री महावीरजी, बन्धन शीघ्र मिटाय ।। कहूं. ३ ।।

चौथे पल्ले ग्यारह गणधर, विंशति विहरमान ।
अनन्त चौवीसी, सोलह सतियाँ, गुण रत्नों की खान ।
बीच जगह में ज्ञान, दरस, चारित्तर दो छपवाय ।। कहूं ४ ।।

पूज्य प्रवर्तक कुन्दन गुरुवर, जिनकी महिमा भारी ।
गुरूणी सा० उमराव कुंवर भी शान्त गुणो के धारी ।
गुरू गुरूणी सा० की कृपा से,'ज्ञानलता' गुण गाय ।। कहूं. ५ ।।



# विहरमान स्तुति-५

( तर्ज : आने वाले कल को० )

ध्याओ सब मिल बीस ही विहरमान को ।
भाव सहित वन्दन भी करलो, श्री गणधर गुणवान को ।। टेर ।।

विदेह क्षेत्र मे आप विचरते, बरसाते अमृत वाणी ।
नर नारी, पशु पक्षी हरसे, हरसे इन्द्र और इन्द्राणी ।
जिनवाणी सुनने का मौका, मिलता है पुण्यवान को ।। १ ।।

सूर्योदय से ज्यों तम भागे, दर्शन पाप विनाशक है ।
मंगल ही मंगल वहाँ वरते, जहाँ ऐसे जिन शासक हे ।
ज्ञान ज्योति पा दूर भगायें, मानस के अज्ञान को ।। २ ।।

णधर ग्यारह शिष्य वीर के, चौदह पूरब धारी थे ।
व गण की कर शुद्ध स्थापना, आगम के विस्तारी थे ।
मोह जीत कर अनुपम उज्ज्वल, पाये केवल ज्ञान को ।। ३ ।।

गुरूवर कुन्दन को नित वन्दन, करें भाव युत हर्ष धरी ।
जिनशासन जयवन्त रहे, यह 'रत्नत्रयी' ने अर्ज करी ।।
जो गुण गाये, वो तिर जाये, दुख से भरे जहान को ।। ४ ।।



## गुरू गुण गरिमा-१

( तर्ज - छू लेने दो नाजुक० )

हम नित ही सद्गुण गाते हैं, श्री पूज्य प्रवर गुरूदेवों के ।
चरणों में शीश झुकाते हैं, श्री पूज्य प्रवर गुरूदेवों के ।। टेर ।।

मोह ममता के जो त्यागी है, शुद्ध पंच महाव्रत धारी हैं ।
जर जोरू से जो विरागी हैं, गुरुवर नित चरण विहारी है ।।
हम दर्शन नित ही चाहते हैं, श्री पूज्य प्रवर……… ।। १ ।।

हो नाथ अनाथो के गुरूवर, दीनों के संकट हारक हो ।
दीनबन्धु, दीनसहारे हो, भव भव के दुख विदारक हो ।
हम ध्यान हमेशा ध्याते हैं, श्री पूज्य प्रवर ।। २ ।।

जहा २ भी गुरुवर जाते हैं, वहां वीर की वाणी सुनाते हैं ।
चरणों मे जो झुक जाते है, वे जीवन धन्य बनाते हैं ।
यो भक्त सभी गुण गाते हैं, श्री पूज्य प्रवर…… ।। ३ ।।

आप भक्तो के भय हारी हो, जिन धर्म प्रकाशन कर्ता हो ।
यशो महिमा आपकी भारी हैं, शुद्ध 'रत्नत्रयी' के धर्ता हो ।
कृपा छत्र हमेशा चाहते हैं, श्री पूज्य प्रवर … ।। ४ ।।



## गुरू-गुण-गरिमा-२

( तर्ज - नखरालो देवरियो )

गुरूवर की जयन्ति आज, सभी गुण गाओ रे।
भक्तों के थे सिरताज, सभी गुण गाओ रे ।। ध्रुव ।।

तुलसा मा का लाड़ला रे, बालचन्द रा बाल।
कितलसर है ग्राम गुरू का, नाम है पन्नालाल।
विनय अरु श्रद्धा से, सभी झुक जाओ रे ।। १ ।।

बालक वय में संयम धारा, ममता दूर हटाई।
मोती गुरू की शिक्षाओं से, ज्योति अनुपम पाई।
सुख शांति की हो चाह, तो ध्यान लगाओ रे ।।२।।

दीन दयालु संघ हितैषी, भक्तो के भगवान।
स्वाध्यायी संघ के पहले, प्रेरक जाने है जहान।
गुरूवर का है उपकार, कभी न भुलाओ रे ।। ३ ।।

भादवा शुक्ला तीज गुरू का, गान करे भक्ति से।
गुरू कृपा से बाधाओं को, पार करे शक्ति से।
मन, वच, तन, अर्पण कर, जयन्ति मनाओ रे ।।४।।

—卐—

## गुरू-गुण-गरिमा-३

( तर्ज : मेरे अगना मे········ )

मेरी रसना पे गुरू का ही नाम है ।
नाम बिना जीना तो निश्चय निकाम है ।। ध्रुव ।।

पन्ना गुरू का जो भी, लेता शुभ नाम है।
श्रद्धा गर होगी तो, बन जाए काम है ।। १ ।।

तात है बालचन्द, मा का तुलसा नाम है ।
मारवाड़ भूमि मे, कीतलसर ग्राम है ।। २ ।।

मोती गुरू के शिष्य, पाया सद् ज्ञान है।
जग में फैला है यश, बने पुण्य धाम है ।। ३ ।।

प्यारा गुरू का नाम, लेता सुबह शाम है।
जिसने लिया है नाम, बड़ा पुण्यवान है ।। ४ ।।

जन्म स्वर्ग दीक्षा का, देखो कमाल है ।
वार शनि, शुक्ल पक्ष, तीनों ही काम है ।। ५ ।।

आज भी गुरू का याद, आता नाम है ।
किये थे अनूठे, और उपकारी काम है ।। ६ ।।



# गुरू-गुण-गरिमा-४

तर्ज : नखरालो देवरियो० )

पूज्य कुन्दन गुरूवर सा०, अचानक स्वर्ग चले।
पूज्य ज्ञानी गुरूवर के, दरस अब कैसे मिले ।। टेर ।।

शम्भूगढ़ में जन्में गुरूवर, झेला माँ उर आये।
चौथमल्ल जी तात आपके, आंचलिया कुल पाये।
नाम रटते, गुरूवर का, हृदय की कलियां खिले ।। १ ।।

पन्ना गुरू के पाट विराजे, कीर्ति जग में छाई,
चार सघ के आप सितारे, उज्ज्वल ज्योति पाई ।
सुन स्वर्ग गमन गुरू का, नयन से अश्रु ढले ।। २ ।।

'रत्नत्रयी' के सम्यग् साधक, सम्यग् तप के धारी,
ज्योतिर्वेत्ता आगम ज्ञानी, पूर्ण बाल ब्रह्मचारी ।
ऐसी शक्ति मिले गुरूवर, आपकी राह चलें ।। ३ ।।



# गुरू-गुण-गरिमा-५

( तर्ज-नखरालो देवरियो० )

पूज्य सोहन गुरूवर का, अहो निशि ध्यान धरे।
प्रवर्तक गुरूवर का, सभी गुणगान करे ।। टेर ।।

देवलियाँ में जन्मे गुरूवर, माता भवरी बाई।
तात आपके सुवालालजी, जन्मत खुशी मनाई।
जन जन का अन्तर्मन, दरस से हरस भरे ।। १ ।।

मोहनी मूरत गुरुदेव की, पाप नही जीवन मे,
चन्दन सी शीतलता मुख में, और सरलता मन में।
आशीष हमे दे दो, भाग्य के द्वार खुले ।। २ ।।

अजय शहर मे आप पधारे, जनता के मन भाया,
अमृत वाणी बरसा करके, धर्म का रग लगाया।
श्रवण कर जो धारे, भवोदधि पार करे ।। ३ ।।

पन्ना गुरू के पाट विराजे, नानक सघ सितारे।
सब के ही नयनों के तारे प्राणों से भी प्यारे।
साध्वी 'रत्नत्रयी' गाये, गुरू गुण भाव भरे ।। ४ ।।

—卐—

# गुरू-गुण-गरिमा-६

( तर्ज : तुम को लाखों प्रणाम )

श्री सोहन गुरूराज, तुमको लाखो प्रणाम।
पूज्य प्रवर्तक ताज···· ······· ·······।। टेर ।।

श्री स्वाध्याय-शिरोमणि नामी, भक्त जनों के अन्तर्यामी।
'रत्नत्रयी' के स्वामी, तुमको० ।। १ ।।

आशुकवि, मरुधर की छवि हो, ज्ञान प्रकाश प्रदाता रवि हो।
मोह नसावन पवि हो, तुमको० ।। २ ।।

मानस सरल, मधुर है वाणी, दर्शन कर हरसाते प्राणी ।
धन धन निर अभिमानी, तुमको० ॥ ३ ॥

सुवालाल के कुल 'चन्दन' हो, माँ भवरी के तुम 'नन्दन' हो ।
भक्ति युक्त 'वन्दन' हो, तुमको० ॥ ४ ॥

—卐—

# गुरू-गुण-गरिमा-७

( तर्ज : आने वाले कल को० )

करें वन्दना, चार संघ के भाल को ।
श्रद्धा सुमन समर्पित करते, श्री गुरू सोहनलाल को ॥ टेर ॥

श्री स्वाध्याय शिरोमणि है, जो प्राज्ञ गुरू के शिष्य ललाम ।
आशु कवि, मरुधर की छवि जो, मधुर प्रवक्ता सद्गुण धाम ।
सरल हृदय सद्गुरू ने तोड़ी, विकट कपट की जाल को ॥ १ ॥

सुवालाल जी पिता आपके, भंवरी माँ के नन्दन हैं ।
देवलिया है जन्म भूमि, छाजेड़ गोत्र कुल चन्दन हैं ।
नमो नमो जिन शासन के इस, वल्लभ मुनि-मराल को ॥ २ ॥

उन्नीसो अड़सठ में जन्में, माघ सुदी नवमी आली ।
दो हजार इक साल में पुष्कर, प्राज्ञ गुरू से दीक्षा ली ।
विजया दशमी बने प्रवर्तक, इकतालिस को साल को ॥ ३ ॥

यह दायित्व हमारा होगा, अनुशासन मे नित्य रहें ।
ज्ञान, दरस, चारित्र आरावे, आज्ञा को हम शीश वहें ।
सदा स्वस्थ देखें हम 'साध्वी रत्नत्रयी' की ढाल को ॥ ४ ॥

卐 卐 卐

## गुरु-गुण-गरिमा-८

( तर्ज : जब प्यार किया............ )

श्री सोहन गुरू हमारे हैं —२
मन मे बसे—२ गुरूराज ऐसे,
जैसे नयनों के तारे है ॥ ध्रुव ॥

धर्म रुचि गुरूवर ने जगायी,
मोह निद्रा को दूर भगायी ।
बडे भाग्य से—२ गुरू मिले है,
जो दुनियां से न्यारे हैं ॥ १ ॥

जो भी गुरू की शरण में आता,
आत्मिक शक्ति निश्चय पाता ।
भूल गए जो—२ राह स्वयं की,
गुरूवर उनके सहारे है ॥ २ ॥

सुवालाल भंवरी के नन्दन,
रत्नत्रयी का चरणो में वन्दन ।
बीच भवर मे-२ नैया खड़ी है,
इसके गुरू रखवारे हैं ॥ ३ ॥



## गुरु-गुण-गरिमा-९

( तर्ज-तुम्ही मेरे मन्दिर ·· ·· )

श्री सोहन गुरूवर, नयनों के तारे ।
तुम्ही हो सहारे, तुम्ही हो सहारे ॥ ध्रुव ॥

सुवालाल नन्दन भवरी के प्यारे,
चन्दन से शीतल कुल उजियारे ।
तुम्हारे दरश से, पावन हो जीवन,
चरण कमल मे शत शत वन्दन ॥ १ ॥

वचन गुरू के बहुत ही प्यारे,
सुन सुन भविजन जीवन सुधारे ।
गुरूवर का प्यारा नाम सुहाया,
गुरूवर ने समता का पाठ पढ़ाया ।। २ ।।

संयम है उज्ज्वल हृदय सुकोमल,
बहता है अविरल समता का परिमल ।
ऐसे गुरू का ध्यान लगाले,
जीवन में प्रतिक्षण आनन्द पाले ।।३।।

卐 卐 卐

## गुरू-गुण-गरिमा-२०

( तर्ज - उठ भोर भई, टुक जाग सही. )

गुरू नाम का प्यारा मंत्र जंचा, जीवन में नित्य कु. सो. बा. व. चा. ।
यह मंत्र हृदय में आन बसा - जीवन में० ... ..... ... ।। टेर ।।

कु० 'कुन्दन' गुरू कुन्दन सम सोहे,
सो० 'सोहन' गुरू सब के मन मोहे ।
बा० गुरू 'बाल' बाल सम सरल सचा० जीवन में० ।। १ ।।

व० 'वल्लभ मुनि' साफ सुनाते हैं,
क्यों विरथा समय बिताते हैं ।
चा० मुनि 'चान्द' चाँद सम विमल यशा० जीवन में० ।। २ ।।

प्रथमाक्षर सब का ले लीजे,
फिर ध्यान जरा उस पर कीजे ।
जो सीख मिले लो हिये रचा० जीवन में० ।। ३ ।।

गुरुदेव ज्ञान दर्शन धारी,
चारित्रवान हैं उपकारी ।
यों 'रत्नत्रयी' ने स्तवन रचा० जीवन में० ।। ४ ।।

# गुरू-गुण-गरिमा-९१

( तर्ज : मत भूलो कदा रे० )

गुरू नाम सच्चा रे, गुण नाम सचा ।
जीवन में कु० सो० बा० व० चा० ।। टेर ।।

इस कलियुग में गुरू ही आधार ।
गुरू बिन कौन करे उद्धार ।। गुरू० १ ।।

गुरूवर देते हैं वचन सुधा ।
पीग्रो जी पीओ होय मुदा ।। गुरू० २ ।।

कु० 'कुन्दन' गुरूवर ज्ञानी महान ।
पूज्य प्रवर्तक ज्योतिर्मान ।। गुरू० ३ ।।

सो० 'सोहन' गुरू की है मधुरी जुबान ।
सब को सुनावे सरस बखान ।। गुरू० ४ ।।

बा० 'बाल मुनि' जी है सरल मना ।
अपनी ही मस्ती में रहत घना ।। गुरू० ५ ।।

व० वल्लभ मुनिवर ज्ञान सिखाय ।
सस्कृत प्राकृत खूब पढाय ।। गुरू० ६ ।।

चां० 'चान्द मुनि' जी है तपसी अनूप ।
सेवा सज्झाय करे धर चूँप ।। गुरू० ७ ।।

पहला अक्षर ले लो जी पाँच ।
पाँचो की शिक्षा लो हिये जांच ।। गुरू० ८ ।।

'रत्नत्रयी' गावे गुण गीत ।
सीख पाल्या सूँ होवेगी जीत ।। गुरू० ९ ।।



# चातुर्मास-स्वागत-१

( तर्ज : तेरे पूजन को भगवान० )

करने चौमासा यहां आज, पधारे पूज्य गुरू महाराज ॥ टेर ॥

गुरूवर कुन्दनमलजी स्वामी, जो हैं ज्योतिषी आगमज्ञानी ।
जगम तीरथ ठाणा पाँच ॥ पधारे० १ ॥

जैसा आज उमंग दिखाया, वैसा लेना लाभ सवाया ।
दिल को लेना सुथरा मांज ॥ पधारे० २ ॥

नूतन ज्ञान ध्यान नित सीखो, पाओ शास्त्र ज्ञान भी नीको ।
मिलसी जिससे शिवपुर राज ॥ पधारे० ३ ॥

नहीं व्यर्थ में समय बिताना, मुख पर यतना रखकर आना ।
करना नित विवेक से काज ॥ पधारे० ४ ॥

संवर, पौषध, दया, समाई, करना सब ही हिल मिल भाई ।
लेना 'रत्नत्रयी' आराध ॥ पधारे० ५ ॥

विक्रम दो हजार उनचाली, जयपुर लाल भवन खुशहाली ।
स्वागत कर रहा जैन समाज ॥ पधारे० ६ ॥



# पर्युषण-क्षमापना-१

( तर्ज : आओ बच्चों ! तुम्हें दिखायें० )

हम भी खमायें, तुम भी खमाओ, भूलों को अब ! माफ करो ।
दिल पै लगे हुए कल्मष को, क्षमा नीर से साफ करो ॥ टेर ॥

ऐसा कौन मनुज है जग में, जो न कभी भूलें करता,
सावधान हो सदा चले जो, कभी न ठोकर खा गिरता ।
हमने जितनी ठोकर खायी, उसका आज हिसाब करो ॥ १ ॥

ब तक क्रोध मान और माया, लोभ उभरते रहते हैं,
तब तक जन जन के मानस को, सदा जलाते रहते है।
आज उन्ही अंगारों को बस, शान्त करो, सन्ताप हरो ।। २ ।।

कमरे में कचरा आते ही, साफ करे वह समझू है।
जो कचरे को पड़ा सडावे, वह मूरख, ना समझू है।
राग द्वेष के कचरे को अब दिल-कमरे से साफ करो ।। ३ ।।

ऋजुता से पावन मानस में, धर्म हमेशा रहता है,
सद्‌गुण सरिताओं का निर्मल, निर्झर भी वहाँ बहता है।
क्षमायाचना कर 'रत्नत्रय' जीवन को निष्पाप करो ।। ४ ।।



# युवकों से–१

( तर्ज : दूर कोई गाये )

युवकों ! तुम महान हो, वीर की सन्तान हो।
वीर पथ लागो रे, मेरे भाई जागो रे ।।टेर।।

आगमों का ज्ञान लो, तत्वो को पहिचान लो।
मिथ्यातम त्यागो रे ।। मेरे० १ ।।

देव अरिहन्त है, गुरू निर्ग्रन्थ है।
दया धर्म सागो रे ।। मेरे० २ ।।

मर्यादाये पालकर, जिनाज्ञा मे चाल कर।
व्रतो को आराधो रे ।। मेरे० ३ ।।

गुणो के जारी हो, आडम्बर निवारी हो।
साधना को साधो रे ।। मेरे० ४ ।।

मेटो सभी कुरीतियाँ, ऊँच नीच की भितियाँ।
स्वार्थ मे मत लागो रे ।। मेरे० ५ ।।

सामायिक आराधिये, 'रत्नत्रयी' को साधिये।
धर्म सुधा चाखो रे ।। मेरे० ६ ।।

# चातुर्मास-स्वागत-१

( तर्ज : तेरे पूजन को भगवान० )

करने चौमासा यहां आज, पधारे पूज्य गुरू महाराज ।। टेर ।।

गुरूवर कुन्दनमलजी स्वामी, जो हैं ज्योतिषी आगमज्ञानी ।
जगम तीरथ ठाणा पाँच ।। पधारे० १ ।।

जैसा आज उमंग दिखाया, वैसा लेना लाभ सवाया ।
दिल को लेना सुथरा माँज ।। पधारे० २ ।।

नूतन ज्ञान ध्यान नित सीखो, पाओ शास्त्र ज्ञान भी नीको ।
मिलसी जिससे शिवपुर राज ।। पधारे० ३ ।।

नही व्यर्थ में समय बिताना, मुख पर यतना रखकर आना ।
करना नित विवेक से काज ।। पधारे० ४ ।।

संवर, पौषध, दया, समाई, करना सब ही हिल मिल भाई ।
लेना 'रत्नत्रयी' आराध ।। पधारे० ५ ।।

विक्रम दो हजार उनचाली, जयपुर लाल भवन खुशहाली ।
स्वागत कर रहा जैन समाज ।। पधारे० ६ ।।



# पर्युषण-क्षमापना-१

( तर्ज : आओ बच्चों ! तुम्हें दिखाये० )

हम भी खमाये, तुम भी खमाओ, भूलों को बस ! माफ करो ।
दिल पे लगे हुए कल्मष को, क्षमा नीर से साफ करो ।। टेर ।।

ऐसा कौन मनुज है जग में, जो न कभी भूलें करता,
सावधान हो सदा चले जो, कभी न ठोकर खा गिरता ।
हमने कितनी ठोकर खायी, उसका आज हिसाब करो ।। १ ।।

ब तक क्रोध मान और माया, लोभ उभरते रहते हैं,
तब तक जन जन के मानस को, सदा जलाते रहते हैं।
आज उन्ही अंगारों को बस, शान्त करो, सन्ताप हरो ॥ २ ॥

कमरे में कचरा आते ही, साफ करे वह समझू है।
जो कचरे को पड़ा सडावे, वह मूरख, ना समझू है।
राग द्वेष के कचरे को अब दिल-कमरे से साफ करो ॥ ३ ॥

ऋजुता से पावन मानस में, धर्म हमेशा रहता है,
सद्गुण सरिताओं का निर्मल, निर्झर भी वहाँ वहता है।
क्षमायाचना कर 'रत्नत्रय' जीवन को निष्पाप करो ॥ ४ ॥



# युवकों से—१

( तर्ज : दूर कोई गाये )

युवकों ! तुम महान हो, वीर की सन्तान हो।
वीर पथ लागो रे, मेरे भाई जागो रे ॥ टेर ॥

आगमों का ज्ञान लो, तत्वो को पहिचान लो।
मिथ्यातम त्यागो रे ॥ मेरे० १ ॥

देव अरिहन्त है, गुरू निर्ग्रन्थ है।
दया धर्म सागो रे ॥ मेरे० २ ॥

मर्यादाये पालकर, जिनाज्ञा में चाल कर।
व्रतो को आराधो रे ॥ मेरे० ३ ॥

गुणों के जारी हो, आडम्बर निवारी हो।
साधना को साधो रे ॥ मेरे० ४ ॥

मेटो सभी कुरीतियां, ऊँच नीच की भितियाँ।
स्वार्थ मे मत लागो रे ॥ मेरे० ५ ॥

सामायिक आराधिये, 'रत्नत्रयी' को साधिये।
धर्म सुधा चाखो रे ॥ मेरे० ६ ॥

# पुण्यवानी बढा-१

( तर्ज : छोड़ बाबुल का घर० )

पुण्यवानी बिना, सब ही व्यर्थ गिना ।
पुण्यवानी बढा हो ..........।। टेर ।।

पुण्यवानी से नर भव पाओगे जी,
आर्य क्षेत्र, ऊँचे कुल में आओगे जी ।
सन्त दरस मिले, भाग्य पुष्प खिले ......।। १ ।।

पुण्य हो तो सभी खम्मा खम्मा करे,
आ के चरणों में अपना शीश धरे ।
आज्ञा पाले सदा, मिले सुख सम्पदा......।। २ ।।

भूखा हो तो भोजन खिलवाइयेगा,
रोगी हो तो दवा दिलवाइयेगा ।
देओ होकर प्रसन्न, ठिठुरे तन को वसन ......।। ३ ।।

मन में भाव सदा शुभ लाते रहो,
मुख से दुखियों को सान्त्वना देते रहो ।
तन से करिये सेवा, मीठा पाओ मेवा........।। ४ ।।

आदर भाव सदा सब को देते रहो,
सब की आशिषें भी तुम लेते रहो ।
होगा खूब भला, मिटसी दुःख बला........।। ५ ।।

पुण्य होवे तो संघ में प्रेम रहे,
पुण्य होवे तो कुशल क्षेम रहे ।
पग पग जीत मिले,शिष्य विनीत मिले.......।। ६ ।।

पुण्य होवे तो धार्मिक भाव बढे,
विश्व-वल्लभ हो सबके सिर पे चढे ।
जागो मेरे भई, गावे 'रत्नत्रयी'.......।। ७ ।।

卐 ❖ 卐

# श्री सोहन गुरु चालीसा

॥ दोहा ॥

वर्द्धमान महावीर है, जिन शासन के ईश ।
स्मरण करे शुभ नाम को, सविधि नमावें शीश ॥

जिन शासन उद्यान में, खिले अनेकों फूल ।
श्री गुरु नानक सूरि भी, है उनमें तरु मूल ॥

महास्थविर श्रद्धेय वर, पूज्य प्रवर्तक प्राज्ञ ।
श्री पन्ना गुरु देव जी, हुए सघ सौभाग्य ॥

सेवाभावी सरल मना, गुरुवर छोटे लाल ।
हुए प्रवर्तक आप भी, वरते मॅगलमाल ॥

धर्मप्राण आगमधनी, पूज्य ज्योतिषाचार्य ।
प्रवर्तक कुन्दन गुरु; कुन्दन सम थे आर्य ॥

आज उन्ही के पाट पर, सोहे पुण्य विशाल ।
सघ प्रवर्तक शुभमति, सद्गुरु सोहन लाल ॥

गुण गाये हम प्रेम से, होकर भक्ति विभोर ।
वस ऐसो शक्ति भरो, "रत्नत्रयी" सिरमोर ॥



॥ चौपाई ॥

परमेष्ठी पद पाँचो ध्यावे, प्राज्ञ चरण में शीश झुकावे ।
श्री सोहन गुरु के गुण गावे, जिह्वा अपनी सफल बनावे ॥१॥

गुण गाने से कर्म नसावे, तीर्थंकर पद को भी पावे ।
जन्म भूमि देवलिया सोहे, देखत ही सबके मन मोहे ॥२॥

सुवालाल जो पिता नगीना, ओसवश छाजेड़ कुलीना ।
माता भँवरी बाई प्यारी, भाग्यवती के सुत अवतारी ॥३॥

उन्नीसौ अड़सठ सुखदाई, माघ सुदी नवमी तिथी आई।
मात पिता की पूरी आसा, छाई घर में खुशियाँ खासा ।।४।।

सोहन सुन्दर नाम रखाया, लाड़ प्यार में बढे सवाया ।
कुछ कुछ सत्संगति में आया, प्रतिक्रमण कण्ठस्थ कराया ।।५।।

मधुर कण्ठ कोयल सम बोले, मानो वचन सुधारस घोले ।
लगभग सतरह वर्ष बिताये, पिता अचानक स्वर्ग सिधाये ।।६।।

बड़े भ्रात मोहन के संग में, बचपन बीता आनन्द रग में।
पढ लिखकर पाई हुशियारी, आये "हुरड़ा" बन व्यापारी ।।७।।

सांसारिक धंधा भी करते, सामायिक सवर नित धरते ।
पाच सात भाई की टोली, सब में चढी धर्म की रोली ।।८।।

यही भाव सब के मन आया, संयम लेगे सब मिल भाया ।
बोल थोकड़े सीखन लागे, धर्म क्रिया में हो गये आगे ।।९।।

आने लगे सगाई वाले, किन्तु आपने सब को टाले ।
मेरे मन तो संयम भाया, सब को एक ही वचन सुनाया ।।१०।।

उन्नीसौ निब्बे+दो मांही, भारी एक असाता आई ।
मोती भरा उलट गया तन में, सन्निपात सा छाया छिन में ।।११।।

सोचा यदि मैं होऊँ नीरोगा, तो फिर जोगारम ही होगा।
आयु बल, अनुकूल दवाई, देह वेदना दूर नसाई ।।१२।।

दिन दिन धर्म ध्यान अति करते, तीन मनोरथ मन में धरते।
धन्य दिवस वह संयम लेऊँ, मायत को पिण कैसे केऊँ ।।१३।।

उन्नीसौ पिच्यानवे बरसे, घटना एक घटी पत्थर से ।
एक दिवस हुरड़ा के मॉही, रहे कपास से वोरा भराई ।।१४।।

वोरा के इक पत्थर लटका, सहसा वही उछल कर छिटका ।
सिर से टकरा, दाँत को तोड़ा, फिर जा गिरा भूमि पर रोड़ा ।।१५।।

तत्क्षण भाव हृदय में जागे, हुआ सो देखा, क्या हो आगे ।
पिता गये और गयी बिमारी, पत्थर से भी बच गये भारी ।।१६।।

अब सयम में करूँ न देरी, संग लिया काका को हेरी ।
सीधे प्राज्ञ चरण मे आये, मन के भाव सभी दरसाये ।।१७।।

नियम लिया अब संयम लूंगा, गुरु चरणों मे नित्य रहूंगा ।
काका ने भी इसे स्वीकारा, संयम साथ धरूंगा प्यारा ।।१८।।

किन्तु काल ने की धीठाई, काकाजी को लिया उठाई ।
अब तो मन में हुए उदासा, नही काल की कुछ भी आसा ।।१९।।

आ गुरु पास पठन में लागे, संस्कृत प्राकृत सीखे सागे ।
बुद्धिमान् मेघावी थे ही, चन्द दिनो में झट पढ़ते ही ।।२०।।

किन्तु मात आज्ञा नही देवे, बिन आज्ञा संयम किम लेवे ।
देख पुत्र की दृढ़ताई को, समझ पड़ी भंवरी बाई को ।।२१।।

मात भ्रात ने आज्ञा दीनी, आकर गुरु को विनती कीनी ।
आज्ञा पत्र यह आप लिरावो, इनको अब संयम दिलवावो ।।२२।।

दो हजार एक साल सुहाया, तीर्थराज पुष्कर मन भाया ।
फागुण सुदी पचमी आई, प्राज्ञ गुरु से दीक्षा पाई ।।२३।।

योग्य शिष्य लख गुरु हरसाये, कुन्दन सोहन सब मन भाये ।
दोनों थी गुरु की दो आँखे, पक्षी की जैसे दो पाँखें ।।२४।।

ज्योतिष में पारगत कुन्दन, व्याख्यानी होगये मुनि सोहन ।
गुरु का पाट दिपा रहे भारी, जाने है सब ही नरनारी ।।२५।।

गुरु आज्ञा से विचरण कीना, जनता को धर्मामृत दीना ।
मधुर प्रवक्ता, मधुर स्वभावी, करुणा मानस, परम प्रभावी ।।२६।।

पच महाव्रत निर्मल पाले, नियम-वद्ध जीवन को ढाले ।
शशि सम सौम्य वदन शुभ सोहे, देखत ही सब के मन मोहे ।।२७।।

सागर सम गम्भीर सुहाया, क्षमाशील धरणी सम पाया ।
गहन गर्जना घन सम सुनकर, फैली महिमा चहुं दिशि बढकर ।।२८।।

जगह जगह पर सम्प कराया, फूट कलह को दूर हटाया ।
मैत्रिभाव की गग वहाई, मिले परस्पर भाई भाई ।।२९।।

मृत्यु भोज और नृत्य दहेजा, फैल गया सब में ज्यूँ हेजा।
जागो जागो मेरे भाई, यह बदरीति बड़ी दुखदाई ॥३०॥

सूर्पणखा ज्यूँ घर को खावे, सुरसा सम नित बढ़ती जावे।
अब तृष्णा लालच को छोड़ो, इस अनीति से मुखड़ा मोड़ो ॥३१॥

अगर ध्यान ना कुछ लाओगे, देखो तुम फिर पछताओगे।
तप में भी छागया विकारा, आडम्बर हो रहा अपारा ॥३२॥

तप के नाम मायरा लेवो, आत्म शुद्धि तप फिर क्यूँ केवो।
करो प्रसादी माल मंगावो, दया दान में कुछ न दिरावो ॥३३॥

गुरु ने नियम यही दिल ठाना, बाजे साथ न तप पछखाना।
हुआ भला कइयों का इस मे, अन्तराय होवे अब किसमें ॥३४॥

दर्शनार्थ भाई जो आवे, सादा भोजन ही वे पावे।
निशि भोजन भी दूर हटाया, कन्द मूल का त्याग कराया ॥३५॥

शनैः शनैः कर रहे सुधारा, जय जयकार हो रहा तुम्हारा।
किये अनेकों ही उपकारा, कहां तलक बतलावें सारा ॥३६॥

सदा स्वस्थ गुरु देव विराजे, चार सघ में सिंह ज्यूँ गाजें।
मर्यादा रक्षक, प्रियधर्मी, मानस के कण कण में नर्मी ॥३७॥

सोहन गुरु की करलो सेवा, आनन्द मंगल हो नितमेवा।
विजया दसमी इकताली की, पायी प्रवर्तक पदवी नीकी ॥३८॥

श्री स्वाध्याय शिरोमणि सोहे, मरुधर छवि सब का मन मोहे।
अनुपम प्रतिभा के जो स्वामी, पंडित आशुकवि है नामी ॥३९॥

कृपा हुई गुरुवर की अनूठी, मां वाणी भी हम पर तूठी।
अक्षर अक्षर जुड़ते देखा, वना गुरु का जीवन लेखा ॥४०॥

श्रद्धा अर्पित कर शुभ भावे, साध्वी "रत्नत्रयी" सुनावे।
सोहन गुरु चालीसा पढ़िये, मुक्ति महल में क्रम से चढ़िये ॥१॥

जो भी भक्त इसे गावेगा, पग पग विजय सदा पावेगा।
सब अपने मन के पट खोलो, सोहन गुरु की जय जय बोलो ॥२॥

# धर्माचार्य-धर्मगुरु-स्तुति

जीव, लाल, पुनि दीप महान, श्री मलूक, नानक गुणखान ।
जय निहाल, तुलसी गण-ईश, वीरभाण, सुखलाल मुनीश ।।

अभय, हर्ष थे हर्ष-स्वरूप, भविजन वल्लभ, यश के स्तूप ।
श्री लिछमन, मगनेश मुनीन्द्र, मोती, विजय, गज रेणु-कवीन्द्र ।।

पूज्य प्रवर्तक, दीन-दयाल, धन्य धन्य गुरु पन्नालाल ।
पूज्य प्रवर्तक, दीन-दयाल, धन्य धन्य गुरू छोटेलाल ।।

पूज्य प्रवर्तक, दीन-दयाल, धन्य धन्य गुरू कुन्दनलाल ।
पूज्य प्रवर्तक, दीन-दयाल, धन्य धन्य गुरू सोहनलाल ।।

नमन करो इनके पद कज, मिट जाये भव भव के रज ।

## – दस जय –

जय बोलो रे ज्ञानी गुणीजन की, जय बोलो ।। टेर ।।
पहली जय अरिहन्त प्रभु को, दूसरी सिद्ध निरन्जन की ।।

तीसरी जय आचार्य देव की, चौथी जय उपाध्यायन की ।
पांचवी जय सब सन्त सती की, छठी जय जिन शासन की ।।

सातवी जय जीवराज गणी की, आठवी नानक लिछमन की ।
नवमी जय गुरु प्राज्ञ की बोलो, दसमी प्रवर्तक सोहन की ।।



# ❀ हमारे संघ के प्रकाशन ❀

१ सामायिक सूत्र (मूल)
२. प्रतिक्रमण सूत्र (मूल)
३. प्राज्ञ पुञ्ज
४. अधिक मास यन्त्रम्
५. धूल के फूल
६. तीर्थंकर लेखा
७ वल्लभ विनोद भाग १
८. वल्लभ विनोद भाग २
९. वल्लभ विनोद भाग ३
१०. वल्लभ विनोद भाग ४
११. सम्बोधना
१२. आत्म शुद्धि
१३. प्रवचन चन्द्रिका
१४. प्रवच । 'चामृत
१५ प्राज्ञ गुण गरिमा
१६. चार महामंगल
१७ महकते पुष्प
१८. जैन तत्त्व शोधक ग्रन्थ
१९ धनदत्त चरित्र
२०. प्रत्याख्यान: विधि विधान
२१. थोक सग्रह
२२ दामनख चरित्र
२३ आनुपूर्वी (छोटे बडे अक्षरों की)
२४. जैनाचार्य श्री नानक वश परिचय
२५. पच कथानक
२६. निर्भयसिह चरित्र
२७ वीरसेन कुसुम श्री चरित्र
२८ गुण मंजरी चरित्र
२९ मानसिह अभयसिह चरित्र
३०. सप्त सरोज
३१ अमृत की सात बूंदे
३२ महा प्राज्ञ की जीवन यात्रा
३३. ज्ञान के मोती
३४. बोध सम्बोध
३५. श्री सोहन गुरु चालीसा
३६. काव्य त्रिवेणी
३७. गुरू कृपा
३८. महाप्राज्ञ श्री पन्नालालजी महाराज जीवन, व्यक्तित्व और कृतित्व

प्राप्ति स्थान:- श्री जैन स्वाध्यायी संघ, गुलाबपुरा (राज.) 311021